Durga Sah Municipal Library
NAINI TAL
दुर्गासाह म्युनिसिपल पुस्तकालय
नैनीताल
Class No. 891.3
Book No. K19M
Reg. No. 5227

# मंज़िल, पन्थी और मशाल

[ समस्यामूलक मौलिक-सामाजिक उपन्यास ]

लेखक

कमल शुक्ल

१९६१

भारती साहित्य मन्दिर

फव्वारा-दिल्ली

भारती साहित्य मन्दिर

(एस० चन्द एण्ड कम्पनी से सम्बद्ध)

रामनगर नई दिल्ली

फव्वारा दिल्ली

माई हीरां गेट जालन्धर

लाल बाग लखनऊ

मूल्य ४·००

लाला श्यामलाल गुप्ता, प्रोप्राइटर, एस० चन्द एण्ड कं०,
दिल्ली द्वारा प्रकाशित तथा प्रेम प्रेस,
कटरा, इलाहाबाद द्वारा मुद्रित।

# उद्गार

पसीना तेल बन गया और मशाल जल उठी। जिस पर कपड़ सदृश पुरानी रूढ़ियाँ लिपटी थी। युग ने करवट बदली और धरती पर नया सबेरा उतर आया; फिर भी चमगादड़ की नीतिवाला समाज अभी सो रहा है। अज्ञान और अहम् ने उसके समस्त क्रमिक विकासों को रोक रक्खा है। सर्वत्र पूँजीवाद की विभीषिकायें उड़ रही हैं। श्रमिकवर्ग जीवन्मृत हो अन्तिम साँसें ले रहा है। ऐसे में एक मार्ग चाहिये आगे बढ़ने का और संसर्ग इस तरह का हो कि योजना को केवल यह कहकर ही पीछे न ढकेल दिया जाय कि परिस्थितियां पहले हैं। कला, व्यापार, शिल्प और श्रम चारों ही दलदल में हैं। इनके पैर मजबूत होना आवश्यक है तभी ये दलदल से बाहर निकल सकते हैं। इनके रास्ते में प्रकाश का नाम नहीं और भविष्य के प्रति ये बहुत ही उदासीन हैं; क्योंकि साहस उनका साथ छोड़ रहा है। आदिकाल से चली आ रही परम्परा आज भी मनुष्य को प्रिय है कि वह पुरातन के प्रति अरुचि और नूतन की ओर रुचि की दृष्टि से देखता है। आदमी इच्छुक रहता है हर समय परिवर्तन के लिए और परिवर्तन का ही दूसरा नाम है संशोधन।

संशोधन परिवर्तन की गुरुता को लघु न बनाकर, बल्कि उसे महत्त्व प्रदान करता है। मनुष्य के जीवन का यह एक बहुत आवश्यक अंग है।

१-६-१९६१ ई०

७८।२५६, अनवर गंज,
कानपुर

कमल शुक्ल

# १

चबूतरे पर पड़ी आराम कुर्सी पर अधेड़ नवलबाबू अधलेटी अवस्था में बैठे अगहन की फीकी धूप का सेवन कर रहे थे। उनके हाथ में हिन्दी का एक दैनिक पत्र था। वे थोड़ा सबेरे पढ़ते, बाकी दोपहर को और रहा-सहा रात को सोने से पूर्व पूरा कर लेते थे। उनका घर सड़क पर था। सड़क अधिक चौड़ी न होकर तंग थी, चलती भी कम थी। फिर भी आते-जाते वाहनों और पदगामियों का मन्द कोलाहल अवश्य था; किन्तु नवल-बाबू का ध्यान इस ओर बिल्कुल न था। उनकी दृष्टि अखबार पर थी। सहसा पोस्टमैन ने आकर एक लिफाफा कुर्सी पर डाल दिया और चला गया।

नवलबाबू चौंककर लिफाफे की ओर देखने लगे। उसका प्रेषक था—उनका पुत्र प्रभात! वे प्रसन्नता से खिल उठे और पत्र खोलकर पढ़ने लगे।

पत्र पढ़ते समय बारबार नवलबाबू के चेहरे पर क्रोध के भाव आते। कभी-कभी वे दाँत पीसकर रह जाते। जब पूरा पढ़ चुके तो वैसे ही खुली चिट्ठी हाथ में लिये वे पत्नी जमुना के पास जा खड़े हुये और आक्रोश भरी वाणी में बोले—"प्रभात ने बगावत पर कमर कस ली है। उसने लिखा है कि अगर माधवी का ब्याह बीधापुर गाँव में एक अयोग्य व्यक्ति के साथ होगा जिसका नाम गंगाधर है तो मैं इस शादी में शामिल नहीं सकूँगा।" यह कहकर नवलबाबू ने अपनी लाल-लाल आँखें जमना

मुख पर गड़ा दीं और फिर रोषपूर्ण शब्दों में कहने लगे—"यह जुर्रत हो गई है प्रभात की, लड़के ऊँचे उठते हैं बाप का नाम रोशन करते हैं; लेकिन तुम्हारा सपूत जिसका हमेशा पक्ष लेती रहीं—मेरे नाम पर बट्टा लगाने को तुला हुआ है। अब आँखें खुलीं तुम्हारी। उसने लिखा है कि कौशिक जिसका जिक्र कई बार आ चुका है, वह कनौजिया (कान्यकुब्ज) नहीं, सारस्वत ब्राह्मण है उसके साथ माधवी का ब्याह करना चाहता है। इसी जिद पर अड़ा है।"

जमुना यह सुनकर भारी सोच में पड़ गई। उसके चेहरे पर हैरानी के भाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगे। उसने कुछ भी जवाब नहीं दिया, एकटक सामने दीवाल की ओर ताकने लगी। वहाँ बैठी माधवी ब्लाउज पर कशीदा काढ़ रही थी। प्रभात के पत्र का प्रसंग चल रहा था। वह ध्यान से सारी बातें सुन रही थी। लेकिन जब माँ को अपनी ओर निहारते देखा तो लजा गई और उठकर वहाँ से चली गई।

जमुना फर्श पर बिछी शीतलपाटी पर विचारमग्न बैठी थी। आँगन में सन्नाटा था। छज्जे पर दो-तीन गौरैयाँ फुदक रही थीं। उनकी चीं-चीं का शब्द शायद इस समय उसके कानों तक नहीं पहुँच पा रहा था।

नवलबाबू एक मोढ़ा खींचकर पत्नी के पास बैठ गये और एक बहुत बड़ा भार उस पर डालते हुये बोले—"प्रभात की माँ अब तुम्हीं बताओ मैं क्या करूँ? लड़की सयानी हो गई है आखिर उसे कब तक हम लोग घर में बैठाये रहेंगे? सभी कोशिशें तो कर लीं कोई भी अच्छे घराने का आदमी माधवी की बदसूरती के कारण उससे ब्याह करने को रा नहीं होता। गाँववाला रिश्ता तय हो गया है। यह काम जितनी ज हो जाता अच्छा था। लेकिन आदमी अपने से ही हारता है। प्र ब्याह का विरोध नहीं मेरी टोपी उछालने की कोशिश कर रहा है। इसीलिए तुमने उसे पाल-पोषकर बड़ा किया था कि वह अपने घर में शिकार खेले और बड़ों की अवज्ञा करे। मगर याद रक्खो मैं आज किसी के सामने झुका नहीं हूँ। अपनी औलाद के सामने झुकूँ सो य

होगा·····कभी नहीं होगा। मैं माधवी का ब्याह बीघापुर में ही करूँगा। एक प्रभात नहीं आयेगा तो क्या ब्याह रुक जायेगा ?"

जमुना इस पर भी कुछ नहीं बोली। वह जानती थी कि नवलबाबू को जब क्रोध आता है तो वे खूब बड़बड़ाते हैं। अगर तनिक भी कोई बीच में बोल दिया तो आफत हो जाती है।

जमुना का मौन नवलबाबू को खल रहा था। वे तनिक चुप रहकर फिर बोल उठे—"तुम बोलतीं क्यों नहीं ?····तुम भी तो कुछ कहो। पुत्र की करतूत पर पर्दा डालने से काम नहीं चलेगा। तुम्हें उसकी ओर से आँखें फेरनी होंगी। जैसा वह निठुर है वैसा ही कठोर बनना होगा—वह लड़का नहीं मेरा दुश्मन है। मैं·····।"

"कैसी बातें करते हो ? लड़के को दुश्मन बताते हो। आखिर तुम्हें हो क्या गया है ?" जमुना अब चुप न रह सकी। आवेश में आ वह यह कह गई तो नवलबाबू एकदम रोष में आ गये। वे अपने सीने पर दोनों हाथ मारकर बोले—"मैं पागल हो गया हूँ, अपना घर जला डालूँगा और खड़े-खड़े तमाशा देखूँगा। औलाद के आगे झुकने से अच्छा है मैं अपनी जान दे दूँ। तुम्हें प्राणों का मोह होगा मुझे नहीं। मैं तो जिन्दगी को खिलवाड़ समझता हूँ।"

जमुना के सम्मुख अब मौन रहने की परिस्थिति नहीं थी। वह धीरे-धीरे शान्त स्वर में बोली—"किसी भी समस्या को ऐसा क्यों सोच लेते हो कि उसका परिणाम बुरा ही होगा ? सबसे पहले बननेवाली बात देखनी चाहिये। प्रभात यहाँ नहीं आता है, कोई बात नहीं। एक दिन के लिए तुम लखनऊ चले जाओ उसे समझाओ और न माने तो मेरे पास बुला लाओ। मैं सब ठीक कर लूँगी·····।"

"क्या ठीक कर लोगी तुम ? ये सब कहने की बातें हैं। कहने में और करने में बहुत फर्क है। मैं जानता हूँ कि लड़के पर कैसी रंगत आ रही है। वह नयी सभ्यता, नया तौर, और नये तरीके पर चलने का कायल हो रहा है। नई रोशनी की नई चमक ने उसको चकाचौंध में डाल दिया है। उसकी आँखें चौंधिया गई हैं। तभी वह आम पूछो तो इमली

बताता है और रात को भी दिन बतलाकर मौज से हँस देता है। वह नहीं मानेगा, कभी नहीं मानेगा, मेरा जाना बेकार है। कहो तो जाकर अपमान करा आऊँ·····?"

पति के मुँह से अपमान की बात सुनकर जमुना अपने पर संयम न रख सकी। वह तत्क्षण ही बोल उठी—"तुम अपमान की बात करते हो मैं कुछ और कह रही हूँ। बना खेल बिगाड़ना तो सबको आता है कोई बनाने की कोशिश नहीं करता। आदमी का सबसे बड़ा शत्रु क्रोध है। वह ज्वाला-मुखी की तरह बहुत भयंकर होता है। मैं चाहती हूँ विस्फोट न होकर निर्माण हो और विध्वंस की अपेक्षा हम विकास की ओर आगे बढ़ें। हमारे लाल सबसे आगे हों। कल चले जाओ उसको समझाओ। मैं कहती हूँ प्रभात समझाने से जरूर मान जायेगा।"

नवलबाबू को जमुना की बातें प्रवचन-सी लगीं। वे एक लम्बी साँस लेकर बोले—"मैं उस काले नाग प्रभात को अच्छी तरह से जानता हूँ कि उसके आगे दिया नहीं जलेगा। मेरा जाना व्यर्थ होगा।"

"फिर जो मन हो करो। मुझसे क्यों पूछते हो?" खीजकर जमुना ने कहा और वहाँ से उठकर जाने लगी। यह देख नवलबाबू भी बाहर लौट गये। वे बैठक में जा अन्दर से कुंडी बन्द कर लेट रहे।

माधवी ने माँ-बाप की बातें सुनी थीं। वह अपने कमरे में जा कोने पर बैठ गई और भविष्य के प्रति सोचने लगी कि भैया पिताजी की बात कभी नहीं मानेंगे। व्यर्थ के लिए झगड़ा होगा। नतीजा कुछ नहीं निकलेगा। क्या करूँ? उनको कैसे समझाऊँ। काश। एक दिन के लिए वे यहाँ आ जाते तो मैं उनसे कहती कि पिताजी जो कर रहे हैं उसमें दखल न दो भैया। जिस तरह वे प्रसन्न रहें और समाज में उनकी प्रतिष्ठा हो, कुल की मर्यादा बनी रहे, हमें वही करना चाहिये। अगर तकदीर में यही न बदा होता तो विधाता मुझे कुरूप बनाकर धरती पर भेजता ही क्यों? मैं इस सिद्धान्त को मानती हूँ कि ईश्वर जो करता है, अच्छा करता

है। मनुष्य को प्रत्येक स्थिति में सन्तोष कर लेना चाहिये—यही मानव धर्म है।

घर में बाप विक्षुब्ध था, माँ उलझन में थी और माधवी थी उद्विग्न। उसे लगता था कि कोई अनहोनी घटना घटनेवाली है। उसी के ये लक्षण हैं।

२

नवलबाबू कानपुर के लाटूश रोड मुहल्ले में रहते थे। निज का मकान था मुहल्ले के पुराने रईसों में उनकी गिनती थी। यद्यपि पहले जैसी अब उनकी आर्थिक स्थिति नहीं थी; लेकिन फिर भी लोगों की दृष्टि में मालामाल थे। उन्हें किसी भी वस्तु का अभाव नहीं था। हां नकद पैसा उनके पास अधिक नहीं था, कुछ दुकानों में शेयर ले रक्खे थे जिनसे बड़ी अच्छी आमदनी होती थी। इसके अतिरिक्त वे थोड़ा-बहुत गिरवीं का काम भी करते थे, जिसमें रकम डूबने का कभी अन्देशा नहीं रहता।

नवलबाबू पुरानी पद्धति के अनुसार दसवीं कक्षा तक अंग्रेजी पढ़े थे। उनमें नयापन नहीं था। पुरानी लकीर पर चल रहे थे। इसीलिए जब पृथ्वी माधवी सयानी हो गई और उसका ब्याह कहीं नहीं हो सका तो उन्होंने उसे गाँव में ब्याहना तय कर लिया। कारण यह था कि माधवी बहुत काली थी। उसके मुँह पर शीतला के दाग थे। शरीर स्थूल था और मुखाकृति एकदम भद्दी। कोई भी अच्छे पैसेवाला खानदानी ब्राह्मण उसके साथ ब्याह करने को तैयार नहीं था। जो भी लड़की देखता बिदक जाता। इस तरह नवलबाबू बहुत निराश हो गये और सोचने लगे कि अब माधवी का ब्याह शहर में नहीं हो सकता, उसे किसी गाँव में ही ब्याहना होगा।

इसके अतिरिक्त एक बात और थी नवलबाबू कट्टर कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। अपने कुल की मर्यादा से नीचे गिरकर वे लड़की का ब्याह करना पसंद नहीं करते। लड़की उनसे ऊँचे ही कुल में जाय यही उनका

प्रयत्न था। इस तरह माधवी अठारह वर्ष की हो गई और उसके हाथ पीले नहीं हो सके।

माधवी ने इंटरमीडियेट पास कर लिया था। इस वर्ष वह थर्ड इअर की छात्रा थी। उसकी बुद्धि विकसित थी और विवेक अपने कर्त्तव्य के प्रति जागरूक था। वह शिष्टाचार में सबसे आगे रहती और मर्यादा-सम्बन्धी प्रत्येक विवाद में संकोच से काम लेती। वह हमेशा फूँक-फूँककर कदम रखती। बाप से बहुत कम बातें करती और माँ से भी आवश्यकता भर ही मतलब रखती थी वह। क्योंकि उनके विचारों की गुरुता उसे भार प्रतीत होती थी और वह उस बातचीत में सरसता का पुट कभी नहीं पाती। उसे घर का वातावरण ही कुछ सूना और नीरस-सा मालूम होता था। हाँ भाई प्रभात के सामने वह अपना अन्तर खोलकर रख देती। ऐसे ही दीवाली की छुट्टियों में जब प्रभात घर आया और नवलबाबू ने उसे बतलाया कि वे माधवी का ब्याह बीचापुर गाँव में कर रहे हैं तो प्रभात ने एकान्त में उससे पूछा कि माधवी अगर संकोच न करो तो एक बात पूछूँ—"क्या इस ब्याह से तुम सन्तुष्ट हो? नगर का समाज छोड़कर तुम गाँव के गन्दे और घिनौने वातावरण में रहना पसंद करोगी?"

तब माधवी ने भाई को जवाब दिया था—"भैया दुनिया अपना भार टालती है, कोई किसी का दुःख-दर्द पूछने नहीं बैठता। अपने समाज में यह प्रथा है कि शादी-ब्याह के मामलों में कनौजिया घरों की लड़कियाँ होंठ पर से होंठ नहीं उठातीं। मेरे सन्तोष और असन्तोष से क्या होता है? जहाँ माँ-बाप भेजेंगे, जाना पड़ेगा।"

यद्यपि माधवी ने सारी बातें गोल-मोल कही थीं; लेकिन प्रभात ने उसके अन्तर को पढ़ लिया। वह उसी दिन लखनऊ लौट आया और घर पर आ माधवी के विषय में सोचने लगा।

प्रभात की अवस्था लगभग बाईस साल की थी। उसने लखनऊ-विश्वविद्यालय से एम० ए० की परीक्षा पास की थी। उसकी रिसर्च का यह पहला वर्ष था। उसके मित्र का नाम था कौशिक। वह सारस्वत

ब्राह्मण था। दोनों में अच्छी पटती थी। उसने भी एम० ए० किया था। उसका विषय था विज्ञान। किन्तु अपने बाप बाबू रामचरण की तरह, जो लखनऊ में ही सेक्रेटेरियट में काम करते थे, वह नौकरी के चक्कर में नहीं पड़ना चाहता था। उसका विचार था कि डि० लिट्० करने के बाद मैं स्वयं अपना होम इंस्टिट्यूट खोलूँगा। जिसमें अमीरों के अतिरिक्त गरीबों को निःशुल्क शिक्षा दी जायेगी। देश को वह अपनी देह समझता और उसकी मिट्टी को सोना। स्वतंत्र भारत की प्रथम पंचवर्षीय योजना को पूरी होते देख वह गर्व से फूल उठा था और दूसरी के अन्तर्गत सेवा, सहायता और श्रमदान तीनों में पहले से चौगुनी रुचि लेने लगा। इसीलिए प्रभात को उस पर नाज था; क्योंकि वह उसके विचारों से मेल खानेवाला एकमात्र उसका साथी था।

वह माधवी के साथ ब्याह करने को राजी हो जायेगा। उसके माँ-बाप भी मिलनसार प्राणी हैं। सहानुभूति और समवेदना से उनका चोली-दामन जैसा साथ है। उनकी स्पष्ट छाप पुत्र कौशिक पर है वह व्यवहार को पहले देखता है। वह एक होनहार प्रगतिशील नवयुवक है।

प्रभात उसी रात को जिस दिन कानपुर से लौटा था कौशिक से मिलने गया। दोनों मित्र अमीनाबाद से टहलते-टहलते गुईन रोड की ओर निकल गये। रास्ते में एक वृहत पार्क पड़ा। दोनों उसमें जा एक लोहे-बेंच पर आसीन हो गये। प्रभात ने बैठते ही माधवी के ब्याह का प्रसंग छेड़ दिया। कौशिक ध्यान से सुनने लगा। जब वह सारी बात सुन चुका तो सहानुभूति प्रदर्शित कर आत्मीयता भरे स्वर में कहने लगा—"प्रभात! माधवी के ब्याह में तुम्हारा विरोध करना आवश्यक है। वरना तुम्हारी बहन जिन्दगी भर खून के आँसुओं रोयेगी। समाज की रूढ़ियाँ उसे असमय में ही अपना ग्रास बना लेंगी। तब तुम कुछ नहीं कर पाओगे। इसलिए जरूरी है कि समय से पहले चेत जाओ। माधवी का ब्याह गाँव में न करके किसी शहर में ही करो।"

प्रभात ने केवल अपना रोना ही रोया था, कौशिक के सामने तथ्य

की बात कहने की उसकी हिम्मत नहीं पड़ती थी। शब्द गले तक आते और फिर वापस लौट जाते। वह मुँह खोलकर नहीं कह पाता कि कौशिक मैं तुम्हारे हाथों में ही अपनी बहन को सौंपना चाहता हूँ। वह बैठा मित्र की हाँ में हाँ मिलाता रहा और काफी रात गये घर लौटा तब वह सोच रहा था कि संकोच-साहस का प्रतिद्वंद्वी है। जहाँ साहस के कदम आगे बढ़ते हैं वहाँ संकोच आकर रास्ता रोक लेता है। न जाने मुझे क्या हो गया था जो मन की बात कौशिक से नहीं कह सका। क्या इसी का नाम दुर्बलता है और समस्त मानव वर्ग इस व्याधि से पीड़ित हैं।

लेकिन उस दिन प्रभात के संकोच के तार छिन्न-भिन्न हो गये, जब उसको बाप का पत्र मिला कि अगले सप्ताह माधवी का तिलक जायेगा। उसे ही आकर फलदान चढ़ाना होगा। तब वह भागा-भागा कौशिक के पास पहुँचा। लेकिन मौके की बात कौशिक उस समय घर में नहीं था। प्रभात लौट आया और सामने कोई चारा न देख उसने बाप को साफ-साफ लिख दिया कि वह माधवी का ब्याह अपने मित्र कौशिक के साथ करना चाहता है। अगर गाँव में उसका ब्याह होगा तो वह शामिल नहीं हो सकेगा।

पत्र लिखकर प्रभात उसी समय 'लेटरबाक्स' में डाल आया और जब वह लौटा तो घर में कौशिक बैठा मिला। किन्तु प्रभात ने उसे कुछ भी नहीं बतलाया। यह कहकर टाल दिया कि यों ही चला गया था सोचा कि शायद तुम देर से आओ।

इसके बाद प्रभात उस बात को पीछे डाले रहा कि पेशबन्दी बाँधने में अक्सर बनते काम बिगड़ जाते हैं मुझे विश्वास है कि जिस समय कौशिक से मैं अपना मन्तव्य कहूँगा वह इन्कार नहीं करेगा, उसे जरूर करेगा। अभी क्या अवसर आये तो उसकी परीक्षा लेने की जरूरत नहीं। वह तेज आंच की भट्ठी में तपा हुआ कुन्दन है। हर समय कसौटी पर खरा उतरेगा।

× × ×

प्रभात अमीनुद्दौला पार्क के सामने स्थित एक तिमंजिले मकान में रहता था। मकान साफ सुथरा था, खुला हुआ और हवादार। उसने दो कमरे ले रक्खे थे। एक में रसोई बनाने और सामान आदि रखने की व्यवस्था थी। दूसरा उसका 'स्टडी-रूम' था। वहीं मेज और कुर्सी के साथ-साथ एक बड़ा-सा पलँग पड़ा रहता। आने-जाने वाले दोस्त-मित्रों के लिए कुछ फोल्डिंग कुर्सियाँ भी वहाँ रखी थी।

घर की व्यवस्था का भार प्रभात ने एक बूढ़े महराज पर छोड़ रक्खा था। उसका नाम गयारी था। वह पहले रसोइये के रूप में घर आया था और कुछ दिन बाद जब प्रभात ने उसका स्नेह पा लिया तो घर में उसे एक बुजुर्ग की पदवी प्राप्त हो गई।

'गयारी' साठ साल का बूढ़ा था। वह संसार में बिल्कुल अकेला था। खाना बनाने का काम वह कई वर्षों से करता आ रहा था। जब प्रभात ने उसे बड़प्पन दिया तो वह उस पर अपना स्नेह परोसते नहीं थका और उसे बबुआ! बबुआ! कहकर पुकारने लगा।

धीरे-धीरे गयारी प्रभात के स्वभाव से पूर्णतया विज्ञ हो गया। वह उसकी एक-एक नस पहचान गया था। जमुना और नवलबाबू जब कभी लखनऊ आते तो वे गयारी से बातें करते नहीं थकते थे। नवलबाबू तो सबसे पहले यह सोचते थे कि अच्छा संयोग मिलाया है भगवान ने। गयारी भी कनौजिया ब्राह्मण है। छूत और पाक को बहुत महत्त्व देता है। और जमुना यह सोचकर सन्तुष्ट थी कि मेरा लड़का परदेश में है उसके सिर पर एक बूढ़े-बुजुर्ग की छाया रहना आवश्यक है। इस कमी को गयारी ने आकर पूरा कर दिया। कितने हर्ष का विषय है यह।

अभी-अभी प्रभात टेनिस खेलकर लौटा था। कौशिक उसके साथ था। वह आकर धम्म् से चारपाई पर गिर पड़ा और धीरे से आवाज दी—"आज बहुत थक गया हूँ गयारी दादा। जल्दी से गरम-गरम चाय पिलाओ। मैं·····।"

गयारी अपने पोपले मुँह पर हँसी दौड़ाता हुआ कमर झुकाये प्रभात

के सामने आकर खड़ा हो गया और आते ही उसकी बलायें ले गद्गद् होकर कहने लगा—"मैं जानता था कि आते ही बबुआ चाय माँगेंगे। मैंने पहले ही चढ़ा दी थी। बिल्कुल तैयार है अभी लेकर आता हूँ।"

इस समय रात के नौ बज रहे थे। गयारी चाय की ट्रे लाकर मेज पर रख गया और वहाँ से जाता हुआ कहने लगा—"अच्छा बबुआ। चाय पिओ मैं रसोई में चलता हूँ····।"

किन्तु वृद्ध की ममता नहीं मानी। वह जितना अधिक प्रभात को स्नेह करता उतना ही उसे सुख मिलता था। उसके पाँव आगे नहीं बढ़े। वह लौट पड़ा और आकर केटली हाथ में उठा कपों में चाय डालने लगा।

दोनों मित्र चाय की चुस्कियाँ लेने लगे। परस्पर मनोविनोद होता रहा। वार्ता चलती रही। फिर जब कौशिक जाने को तैयार हुआ और प्रभात उसे भेजने बाहर दरवाजे तक गया तो उसने देखा हाथ में प्लास्टिक का एक झोला लटकाये सामने सड़क पर नवलबाबू रिक्शे से उतर रहे थे। वह लपककर बाप के पास पहुँचा। उनकी चरणरज मस्तक से लगाई और हाथ से झोला ले पीछे-पीछे चलने लगा।

नवलबाबू जब दोनों जीने चढ़ गये और हाँफते हुये कमरे में आ एक कुर्सी पर बैठ गये तो जोर से आवाज दी—"अरे गयारी! कहाँ हो भाई?"

गयारी उस समय रसोई में था। सब्जी की कढ़ाई उतारकर उसने नीचे रक्खी और टमाटर सूप बनाने के लिए नमक मसाला पीसने जा रहा था कि सहसा उसके कानों में नवलबाबू का स्वर पड़ा। "आया मालिक।" कहता हुआ वह दूसरे कमरे की ओर भागा।

नवलबाबू गयारी से थोड़ी देर तक बातें करते रहे। वे ठंड से ठिठुरते चले आ रहे थे। अतः गयारी उनके निमित्त चाय बनाने चला गया। फिर वे प्रभात की ओर उन्मुख हुये और गरुये-गम्भीर स्वर में पूछा—"प्रभात तुमने पत्र में क्या लिखा था मुझे? क्या यह तुमको शोभा देता है? बोलो आखिर तुम्हारी मर्जी क्या है?"

प्रभात बाप के निकट ही दूसरी कुर्सी पर बैठा था। कमरे में श्वेत

राड अपनी दूधिया रोशनी बिखेर रहा था। सामने बैठे थे नवलबाबू। उनके चेहरे पर प्रकाश बिल्कुल सीधा पड़ रहा था। प्रभात की आंखें उसी पर टिकी थीं। वह देख रहा था कि उनके माथे में बल पड़ रहे हैं और चेहरे पर आक्रोश की स्पष्ट छाप है। वह धीरे-धीरे बोला—"पिता-जी आपको क्या बताऊँ। आप मेरी बातें मानने को तैयार ही नहीं होते। सोचने की बात है कि शहर की एक शिक्षित लड़की जब ब्याह कर गांव में जायेगी तो लोग क्या कहेंगे। यही कि लड़की काली थी, बदसूरत थी इसीलिए माँ-बाप ने उसे भाड़ में झोंक दिया। मैं कभी इस बात पर तैयार नहीं हो सकता कि माधवी का ब्याह एक ऐसे आदमी से हो जो साधारण पढ़ा-लिखा है और जिसमें शिष्टाचार तथा शालीनता की गंध तक नहीं। सच मानिये पिता जी गंगाधर निपट गँवार है। उसे·····।"

"प्रभात दूसरे को बुरा कह देना आसान है; लेकिन उसकी कमियों और बुराइयों के प्रमाण देना बहुत कठिन। यह तुम्हें कैसे कहते हो कि गंगाधर गँवार है? माधवी इतने दिन तक क्वांरी बैठी रही इसी से उसकी पढ़ाई बंद नहीं हुई वरना मैं उसे मैट्रिक से आगे नहीं पढ़ाता। गंगाधर ने अँग्रेजी की दसवीं कक्षा पास की है। बाप का अकेला है। घर का काम-काज कौन देखे इसीलिए गाँव में रहता है। घर में गहने-कपड़े और खर्च की कमी नहीं है। फिर तुम कैसे कहते हो वह गँवार है—योग्य नहीं?"

प्रभात बाप की ये बातें सुन सरलता के साथ बोला—"पिता जी माधवी मुझसे छोटी है। मैं उसे बहुत स्नेह करता हूँ, आप उसे ऐसे नर्क में डाल देना चाहते हैं जहाँ के समाज में युगों पुरानी सड़ांध अब तक आ रही है। आप कुल और मर्यादा की ओर दौड़ते हैं; लेकिन मैं चाहता हूँ कि मेरी बहन ऐसे घर में जाय जहाँ वह सुख और शांति से रह सके। गाँव में जाकर वह कुल भूनकर खायेगी और उठते-बैठते यह याद कर रो देगी कि मेरे बाप ने मुझे कहाँ अन्धकूप में डाल दिया। मैं मानता हूँ कि कोई भी पैसेवाला कनौजिया उससे ब्याह करने को तैयार नहीं होता; क्योंकि कान्यकुब्जों में भी यह प्रथा अब जोर पकड़ रही है कि चाहे घर

में भूँजी भाँग न हो; मगर ब्याह लड़की देखकर ही करेंगे। मैं इसका कायल नहीं कि अपने से कुलीन घराना माधवी को मिले। मेरी समझ से कोशिक बुरा लड़का नहीं है। सारस्वत ब्राह्मण हुआ तो क्या? उसके माँ-बाप मिलनसार हैं कुल और जाति-पाँति के चक्कर में नहीं पड़ते। माधवी का ब्याह यदि उससे हो तो सोने में सुहागा मिल जाय। मैं·····।"

"बंद करो बकवास। मैं यह कुछ भी सुनना नहीं चाहता हूँ···।" यह कहकर नवलबाबू कुर्सी से उठ पड़े। प्रभात यह समझकर सशंकित हो उठा कि शायद पिताजी नाराज होकर जा रहे हैं। तभी चाय की ट्रे लिये गयारी ने कमरे में प्रवेश किया।

नवलबाबू अब दूसरी कुर्सी पर बैठ गये थे। गयारी ने ट्रे एक छोटी गोलमेज पर रख दी और चाय प्याले में डालने लगा। नवलबाबू ने प्रभात से क्रोध से काँपते स्वर में पूछा—"तो क्या कहते हो तुम? तिलक लेकर तुम्हें जाना होगा यह तो जानते ही हो।"

"लेकिन मैं नहीं जा सकूँगा पिताजी! मुझे मजबूर न कीजिये। मैं·····।"

अभी प्रभात इतना ही कह पाया था कि नवलबाबू ने गुस्से में दोनों हाथ मेज पर पटक दिये। जिससे टीन की वार्निश पुती ट्रे झनझना कर रह गई और प्याले से चाय छलककर उसमें फैल गई, गयारी सकते की हालत में आ गया और वे जोर से चिल्ला पड़े—"क्या कहा तू नहीं जा सकेगा? बेअदब! क्या यूनिवर्सिटी में तुझे यही शिक्षा मिली है? माधवी के ब्याह का विरोध नहीं तुम मेरी खिलाफत कर रहे हो प्रभात। इसका नतीजा अच्छा नहीं होगा। मैं भूल जाऊँगा कि मेरे कोई पुत्र था। बोलो! जवाब दो मैं आखिरी बार तुमसे फिर कहता हूँ कि अब भी सोच-समझ लो और·····।"

प्रभात को अब अधिक सह्य नहीं हुआ। वह बीच में ही बोल उठा—"मैंने खूब अच्छी तरह सोच लिया है कि अगर आप मेरी मर्जी के खिलाफ यह ब्याह करते हैं तो मैं हरगिज शामिल नहीं होऊँगा। आप चाहे जो

कहें मैं इस सम्बन्ध में आपकी एक भी नहीं सुनूँगा।"

प्रभात की बात समाप्त हुई थी कि हाथ में कप उठाकर नवलबाबू की ओर बढ़ाता हुआ गयारी, विनयी स्वर में बोला—"मालिक! चाय··।"

अभी गयारी पूरी बात भी नहीं कह पाया था कि नवलबाबू ने कप में एक हाथ मारा। गयारी के हाथ से प्लेट छूटकर फर्श पर गिर पड़ी। चाय फैल गई। कप भी टूट गया और नवलबाबू एक झटके के साथ उठकर खड़े हो गये। वे यह कहते हुए बाहर जाने लगे कि जो अधर्मी पुत्र हो उसके यहाँ का पानी भी पीना हराम है और पानी पीना तो दूर रहा मैं यहाँ पाँव भी नहीं रखना चाहता हूँ।

प्रभात मूर्तिवत् खड़ा रहा और गयारी अपने मालिक के पीछे दौड़ा। लेकिन उनमें न जाने कहां से इतनी स्फूर्ति आ गई थी कि जल्दी-जल्दी जीने उतर गये। सड़क पर जाकर गयारी ने उनको रोका तो वे झल्लाकर बोले—"चले जाओ गयारी। मैं कुछ भी सुनना नहीं चाहता हूं। जाओ मेरे पीछे न पड़ो।"

सड़क पर इस समय कुछ सन्नाटा था। फुटपाथ पर खड़े दोनों व्यक्तियों में बातें हो रही थी। निकट ही खड़ा था एक सजग प्रहरी की भाँति नीम का पेड़ जिसकी पत्तियां डोल रही थीं। हवा में शीत समाविष्ट हो रहा था। नवलबाबू एक क्षण के लिए रुके थे। वे अपनी बात कहकर आगे बढ़ना चाहते थे कि गयारी सामने खड़ा हो गया और दोनों हाथ बांध दीनवाणी में बोला—"बबुआ की बातों का बुरा न मानो मालिक। वे लड़के हैं अच्छाई-बुराई को नहीं समझते। अब रात को कहां जायेंगे। खाना तैयार है चलिये भोजन कीजिये। रात में नाहक हैरान होंगे। मैं बबुआ को समझाऊँगा।"

छूटते ही नवलबाबू बोल उठे—"तुम क्या समझाओगे? खाक। जब वह मेरी बात नहीं मानता है तो तुम्हें पर भी नहीं मारने देगा। जाओ गयारी! लौट जाओ और उससे कह देना कि अगर वह तिलक लेकर न गया और ब्याह में शामिल न हुआ तो मैं इस जिन्दगी में फिर कभी उसका

मुँह नहीं देखूँगा। उसने अपने को समझ क्या रखा है ?" यह कहकर वे एक क्षण भी नहीं रुके, आगे बढ़ गये और गयारी खड़े-खड़े किंकर्त्तव्य-विमूढ़-सा उनकी ओर देखता रहा। थोड़ी देर बाद जब वह ऊपर पहुँचा तो देखा प्रभात अब तक बुत बना खड़ा था।

## ३

गाँव के निवासी कस्बे को शहर कहते हैं और कस्बे के रहनेवाले नगर को स्वर्ग समझते हैं। यही स्थिति थी पूरन महाराज के घर की। वे हर्ष से फूले नहीं समा रहे थे कि एक बहुत बड़े घर की लड़की उनकी पुत्र-वधू बनकर आ रही है। वे सोचते थे कि काली है तो क्या बी० ए० में पढ़ रही है। गाँव में इतना कौन पढ़ता है? इसके अतिरिक्त घराना भी कुलीन है। सौभाग्य की बात कि मोटी और बदसूरत होने के कारण उसका ब्याह किसी शहर में नहीं हो सका। गंगाधर के संस्कार अच्छे हैं कि इतनी योग्य और धनाढ्य घर की पत्नी उसे मिल रही है।

गाँव बीघापुर एक छोटा-मोटा कस्बा है। फिर भी लोग उसे गाँव ही कहते हैं। वहाँ कान्यकुब्ज ब्राह्मणों के लगभग दो सौ घर हैं। ये कट्टर कनौजिया हैं। पुरानी लकीर के फकीर। कुल के पीछे जान देते हैं। बीस बिस्वा से नीचे कोई भी अपनी लड़की ब्याहना पसंद नहीं करता। गौड़, सारस्वत और सरयूपारी आदि ब्राह्मणों को ये अपने से निम्न समझते हैं। उनके यहाँ की लड़की लेना और अपनी उनको देना ये बहुत बड़ा पाप समझते हैं। इनका मत है कि इससे इनके कुल की मर्यादा की हानि होती है। पुरानी रूढ़ियों में जकड़ी गाँव की यह कान्यकुब्ज ब्राह्मणों की मंडली अधिकांश गरीब थी। कुछ ही लोग सम्पन्न थे और वे थे जिनके पास अपनी जमीन थी अथवा ब्याज का रुपया खाते थे।

पूरन दमा के तिवारी थे। पूरे बीस बिस्वा की मर्य्यादा थी उनकी! और नवलबाबू दरियावादी अग्निहोत्री थे बारह बिस्वा के ब्राह्मण।

माधवी का ब्याह इसीलिए उन्होंने गंगाधर के साथ तय किया था कि वरपक्ष उनसे अधिक कुलीन था।

गंगाधर की अवस्था लगभग बाईस साल की थी। उसका पहला ब्याह बहुत छोटी उम्र में हो गया था। ब्याह के पाँचवें वर्ष गौना आने को था। लेकिन इसके पूर्व ही उसकी पत्नी के चेचक निकल आई। भार गरुआ था वह चल बसी। इसके एक साल बाद उसने मैट्रिक की परीक्षा पास की फिर इधर कई सालों से ब्याहवाले आते रहे। पूरन से नहीं पटती वे लौट जाते; क्योंकि दहेज की माँग बहुत बड़ी थी। पूरन महाराज चिल्ला-चिल्लाकर गर्व के साथ सबसे कहते थे कि मैं तीन हजार से कम नहीं लूँगा। मेरा लड़का अँग्रेजी पढ़ा है। जब पढ़ाई में रुपया पानी की तरह बहाया है तो दहेज कम क्यों लूँ ?

नवलबाबू ने जब पूरन के सामने वास्तविकता स्पष्ट खोलकर रख दी कि उनकी लड़की काली है। उसके मुँह पर शीतला के दाग हैं। स्थूल अधिक होने के कारण बहुत ही भद्दी और बदसूरत लगती है। दहेज में लम्बी रकम देने पर भी कोई उसे ग्रहण करने के लिए तैयार नहीं होता। लड़की बी० ए० के पहले वर्ष में पढ़ रही है और वे बारह बिस्वा के ब्राह्मण हैं यानी ढाँकर नहीं कुलीन। तो वे छूटते ही अपने स्वार्थ पर उतर आये और तीन की जगह उनके आगे पाँचों उँगलियाँ सीधी करके बोले—"आप से मैं पाँच हजार लूँगा। यों तो कल ही मैंने एक लड़कीवालों को लौटा दिया है। पाँच हजार वे भी दे रहे थे। लेकिन उनकी लड़की गोरी नहीं सांवली थी। इसलिए मैंने इन्कार कर दिया और मुझे इन्कार कभी नहीं होता अगर वे मेरी दूसरी शर्त मान लेते।"

तब नवलबाबू समझ गये कि पूरन ने उनको मोटी मुर्गी समझ लिया है। लेकिन अपनी गरज थी और लड़कीवाला लड़केवाले के सामने हमेशा झुकता है। इसलिए वे प्रगट में कौतूहलवश बोल उठे—"आपकी दूसरी शर्त क्या थी ?"

पूरन महाराज को मौका मिल गया। चिड़िया फँसती जानकर

मन ही मन मगन हो वे मंद-मंद मुस्कराते हुये बोले—"ये पाँच हजार तो मैं नकद ले लूँगा। इसके अलावा बारात की खातिर और मंडप की शोभा के लिए सब आपको अलग से खर्च करना पड़ेगा। फिर दूसरी बात यह है कि लड़की को कम-से-कम हजार डेढ़-हजार के जेवर भी आपको पहनाने चाहिए; क्योंकि आप बड़े आदमी हैं, शहर में आपका नाम है।"

यह सुनकर नवलबाबू काँप दिये और उनके मुँह से निकल गया—"यह तो बहुत हो जायेगा। इतना कैसे कर पाऊँगा मैं?"

पूरन महाराज चारपाई पर बैठे थे उछलकर खड़े हो गये और दोनों हाथ नचाकर बोले—"तो फिर आपकी बदसूरत लड़की से जो उमर में भी बहुत बड़ी हो गई है कोई सेंत-मेंत ब्याह नहीं कर लेगा। जाइये। आपको तमाम लड़के मिलेंगे और मेरे यहाँ तो दिन भर में ढाई दर्जन लड़कीवाले आते हैं।"

नवलबाबू को बुरा तो बहुत लगा; मगर वे गुस्से को पी गये और हार मानकर पूरन महाराज की सभी शर्तें मान लीं तथा बरीक्षा-व्यवहार कर दिया।

बीघापुर में पूरन महाराज का रईसों में नाम था। पुरानी मालियत थी घर में और उन्होंने भी खूब जी भरकर कमाया था। दस, पन्द्रह और बीस हजार की पूँजी वाला आदमी गाँव में लखपती से कम नहीं समझा जाता। ऐसी ही गणना थी पूरन की। वे पुरनोट लिखवाकर लोगों को सूद पर रुपये देते और गिरवी पर पैसे-रुपये का ब्याज लेते थे, इसके अलावा उगाही बाँटते सो अलग जिसमें साल भर में दस के बारह रुपये बनते थे। बीज के लिए गल्ला किसानों को वे सवाये पर देते थे। जमींदारी खत्म हो गई तो भी उनकी चार हल की खेती होती थी। गाँव के छोर पर उनका एक छोटा-सा बाग था, जिसमें आम, अमरूद, केले और जामुन आदि के उपयोगी पेड़ थे। पूरन और उनकी पत्नी बिल्कुल साधारण ढंग से रहते थे। लेकिन गंगाधर फैशन करता था। वह अँग्रेजी बाल रखाये था, जिनसे हमेशा तेल चुचुआता रहता। मूँछें तलवार मार्का कटवाता

इस पर पूरन बहुत बिगड़ते थे। वह सिल्क की बुशशर्ट पहनता जिस पर सिकुड़नों की भरमार होती और श्वेत जीन का फुलपैंट, जिसमें न कोई टूटन होती। एक टाँग ऊँची और एक नीची रहती, इसका उसे बोध ही नहीं होता। गांव की कच्ची धूलभरी राहों में वह सैंडिल पहनकर चलता था। हाथ में घड़ी बाँधता जिसे वह दिन में सौ बार देखता था। सेंट का भी शौकीन था वह जब भी शहर जाता दो-एक शीशियाँ ले आता।

इस प्रकार गंगाधर अपने को एक नागरिक से कम नहीं समझता था। वह जब अपने मित्रवर्ग में पहुँचता, जिसमें अधिकांश उससे कम पढ़े और गरीब परिवार के लड़के थे तो वह सीना फुलाकर कहता—"कि देखो दोस्त मुकद्दर इसे कहते हैं। इतने दिन से मेरे ब्याहवाले आते और लौटते रहे उसका एक कारण यही था कि मुझे गाँव की गँवार पत्नी नहीं, शहर की पढ़ी-लिखी लड़की मिलनी थी। ब्याह हो जाने दो फिर मैं भी बी० ए० करूंगा।

दोस्त लोग वाह-वाह करते और गंगाधर खुशी से बावरा हो जाता। वह कभी मन में मलाल नहीं लाता कि उसकी होने वाली पत्नी एक बद्-सूरत लड़की है।

दिन बीत रहे थे इतनी जल्दी-जल्दी कि गंगाधर को लगता था कि उसके ब्याह की तिथि कल ही है।

और एक दिन वह आ गया जब प्रातः से ही पूरन महाराज के घर पर नौबत बजने लगी। तुरही की 'धोंपू-धोंपू' गाँव भर में गूँज-गूँजकर रह जाती। आज सारा घर लीपा गया था। बाहर चबूतरे के बराबर तख्त पड़े थे उन पर जाजमें बिछ रही थीं। बीच में चार कालीन डालकर एक चौकी बनाई गई थी। उसके इर्द-गिर्द मखमली खोल चढ़े गावतकिये रक्खे थे। ऊपर शामियाना तन रहा था जिसके बीच के चँदोवे में बेलबूटे बने थे। वे बहुत आकर्षक थे। गांव भर में चर्चा थी कि आज गंगाधर का तिलक चढ़ेगा।

दिन में तीसरे पहर सत्यनारायण भगवान् की कथा हुई। लोगों को

प्रसाद और पंचामृत बाँटा गया और साँझ होते-होते गैस बत्ती के चार बड़े-बड़े हंडे मंडप के चारों कोनों पर टाँग दिये गये और अँग्रेजी बाजे बजने लगे। सब लोग आमोद-प्रमोद और मनोरंजन में व्यस्त थे; लेकिन पूरन का चेहरा न जाने क्यों उदास था। वे बार-बार घर से बाहर आते और मुँह उठाकर सामने कच्चे गलियारे की ओर देखने लगते। लड़कीवालों के यहाँ से अभी तक कोई फलदान लेकर नहीं आया था। आज थाल और थाल के अलावा उन्हें पूरे तीन हजार की रकम मिलनी थी। गुप्त रूप की आशंका से उनका कलेजा धक्-धक् कर रहा था और मुँह पर हवाइयाँ उड़ रही थीं। वे बार-बार स्वयं अपने मन से ही प्रश्न कर रहे थे कि आखिर क्या बात हुई? लड़कीवाले अभी तक तिलक लेकर क्यों नहीं आये?

बाजे बज रहे थे और लोगों में 'हा हा हू हू' का बाजार गर्म था। बच्चे चहल-पहल का आनन्द लेने में मग्न थे। लेकिन पूरन गहरे सोच में डूबे खड़े थे, उन्हें लग रहा था कि कहीं उनकी भद्द न हो जाय।

---

## ४

उस रात प्रभात ने भोजन नहीं किया। वह चुपचाप रजाई ओढ़कर लेट रहा। गयारी ने बहुत समझाया; लेकिन उसने चुप्पी साध रक्खी थी। अंत में हार मानकर गयारी एक गिलास में गरम-गरम दूध ले आया और स्नेहपूर्ण आग्रहपूर्वक कहने लगा—"उठो बबुआ कुछ खाया नहीं है थोड़ा दूध ही पी लो। तुम्हें इस बुड्ढे की कसम है।"

प्रभात निरुत्तर रहा। उसने मुँह पर रजाई डाल ली और करवट बदल कर लेट रहा। तब गयारी ने गिलास मेज पर रख दिया और उसकी रजाई उघाड़ता हुआ बोला—"मैं जानता हूँ बबुआ कि गुस्से में किसी को भूख नहीं लगती; लेकिन ऐसा करना तन्दुरुस्ती के लिए खराब है। उठो! दूध पी लो नहीं तो मुझे चैन नहीं पड़ेगी और सारी रात नींद नहीं आयेगी। मालिक बाबू (नवलबाबू) को कैसे समझाया जाय मेरी समझ में नहीं आता। अपने मन में मलाल न रक्खो लाल। तुम्हारी सेहत पर इसका असर अच्छा नहीं पड़ेगा।"

प्रभात का मुँह खुल गया था वह एकटक गयारी के झुर्रियोंदार चेहरे को देख रहा था। धीरे से बोला—"दादा! खुद हैरान होते हो और मुझे भी परेशान करते हो। मैंने पहले ही कह दिया था कि मेरी तबियत ठीक नहीं है कुछ नहीं खाऊँगा। लेकिन तुम पीछे पड़ गये। जाओ दादा। खाना खाकर आराम करो। और बत्ती बंद कर दो। उजाले में नींद नहीं आती है।"

यद्यपि गयारी इस समय उदास था। उसके चेहरे पर चिन्ता की

रेखायें स्पष्ट खिंच रही थीं; लेकिन फिर भी वह धीरे से हँस पड़ा और स्नेहपूर्वक प्रभात के मत्थे पर हाथ फेरता हुआ धीरे-धीरे बोला—"क्यों नहीं बबुआ? तुम ठीक कहते हो। मैं तुम्हें परेशान करता हूं और भूख के लिए भी टेनिस खेलकर लौटते ही तुमने मुझसे कह दिया था। मगर फिर भी मैंने खाना बना ही डाला। अच्छा! तो अब दूध के लिए क्या कहते हो? शायद उसके लिए भी तुमने पहले ही मना कर दिया था। लेकिन मैं ले आया। बोलो क्या सजा देते हो इस कुसूर की?"

अब प्रभात उठकर बैठ गया और मुस्कराता हुआ कहने लगा—"मैं तुमसे हार गया दादा। लाओ दूध दो।"

बुड्ढे गयारी में एकदम स्फूर्ति आ गई। वह तत्क्षण ही मेज पर से गिलास उठा प्रभात के हाथ में देता हुआ बोला—"बबुआ पुराने विचारों के लोगों को तुम नये साँचे में ढालना चाहते हो; लेकिन पुराने विचारों के सामने नये विचारों को लोग हल्का समझते हैं। मालिक बाबू गाधवी बिटिया का ब्याह कौशिक के साथ करने को कभी राजी नहीं होंगे। तुम्हारी ज़िद बेकार है। इसलिए इसमें अड़ंगा न डालो। बाप के इकलौते हो। उनका मन न दुखाओ। जो होता है होने दो। दुनिया का नियम है कि आदमी जो चाहता है वह कभी नहीं होता।"

दूध अधिक गर्म नहीं था। प्रभात ने गिलास खाली कर दिया। वह उठकर खड़ा होता हुआ गयारी से बोला—"दादा। मैं तुमको बाप से बढ़कर मानता हूँ। इसीलिए मन की सारी बातें कह देता हूँ। चलो तुम खाना खाओ मैं वहीं बैठता हूँ। रात बहुत हो रही है। क्या भूखे ही सो जाने का विचार है? मैं यह नहीं होने दूँगा। आओ चलो दादा।" यह कहकर प्रभात ने गयारी का हाथ पकड़ लिया और दरवाजे की ओर खींचने लगा।

गयारी गद्‌गद् हो गया। उसकी बूढ़ी आँखों में स्नेहाश्रु छलक आये। वह गीले स्वर में बोला—"मेरी चिन्ता न करो बबुआ बुढ़ापे में भूख, नींद, और प्यास सभी कुछ मर जाती है। तुम हँसते रहो खूब फलो-फूलो

इस बुड्ढे को और कुछ नहीं चाहिये। आओ लेट जाओ रात काफी बीत गई है।" "नहीं दादा नहीं।" यह कहकर प्रभात ने गयारी को दोनों बाहों में भर हाथ भर ऊँचा उठा दिया और हँसता हुआ बोला—"यह कैसे कहते हो दादा कि पुराने विचार नये विचारों से मेल नहीं खा सकते? आखिर तुम भी तो पुराने ही हो तुम क्यों मेरी बात मानते हो?" यह कहने के साथ उसने गयारी को अपनी चारपाई पर बिठा दिया और स्वयं शिशु की भाँति उसके कंधे से लगकर बैठ गया।

गयारी की उँगलियाँ प्रभात के बालों पर दौड़ने लगीं। उसने धीरे से समझाते हुये कहा—"बबुआ तुम नहीं समझते वे मालिक हैं मैं नौकर। अपना, अपना दर्जा अलग है। लेकिन फिर भी मैं यह कहूँगा कि मालिक बाबू को तुम्हारी बात माननी चाहिये। यह अच्छा नहीं लगेगा कि बहन का ब्याह हो और तुम उसमें शामिल न हो। जब वे तुम्हारी बात नहीं मानते हैं तो तुम्हें चाहिये कि जिद छोड़ दो और दुनिया को हँसने का मौका न दो ताकि लोग कहें कि बाप बेटे का झगड़ा हो गया। प्रभात इसीलिए माधवी के ब्याह में नहीं आया।"

प्रभात हैरान हो उठा। वह अकुलाहट के स्वर में बोला—"यह तुम क्या कह रहे हो दादा? मैं और माधवी के ब्याह में शरीक होऊँ जो मेरी मर्जी के खिलाफ हो रहा है। यह कभी नहीं होगा। मैं ऐसी बातों के बीच में नहीं पड़ता जिसमें किसी के निश्चने की आशा हो और बनने के कोई लक्षण न हों। पिताजी को अपने रास्ते पर लाने के लिए यही एक तरीका है। मैं हरगिज-हरगिज ब्याह में नहीं जाऊँगा।"

गयारी ने अपने स्वर को और मीठा कर लिया। वह बोला—"बबुआ जिद आदमी की सबसे बड़ी हार है। इसके वश में हो आदमी जब फायदे की बात सोचता है तो अक्सर उसे नुकसान ही उठाना पड़ता है।"

आधी रात तक गयारी और प्रभात में इसी विषय पर बातें होती रहीं। यद्यपि प्रभात को अभी नींद नहीं आई थी; लेकिन फिर भी वह लेट

रहा और आँखें मूँद लीं। तब गयारी वहाँ से उठा और थोड़ा-बहुत भोजन कर चुपचाप लेट रहा।

× × ×

इसके बाद चौथे दिन प्रभात को माँ जमुना का पत्र मिला, जिसमें लिखा था—प्रभात तुमने अपने पिताजी को नाराज कर दिया यह अच्छा नहीं किया। उनका कहना है कि अगर तुम माधवी के तिलक में न आये और फलदान लेकर बीघापुर न गये तो वे तुमसे कोई सम्बन्ध नहीं रक्खेंगे। तुम्हारा खर्चा भी बंद कर देंगे। तुम्हें मेरी सौगन्ध है लाल। पत्र पाते ही चले आओ। वरना बहुत बड़ा अनर्थ हो जायेगा।

प्रभात ने पत्र पढ़कर एक ओर डाल दिया और गयारी के पूछने पर बतला दिया कि एक दोस्त की चिट्ठी है, इलाहाबाद से आई है।

## ५

माधवी का तिलक जाने में केवल दो दिन शेष रह गये थे। जमुना गर्दन उठा-उठाकर प्रभात की राह देख रही थी। एक ओर जहाँ उसे विश्वास था कि मेरा पत्र पाते ही प्रभात लखनऊ से चल देगा। वहाँ दूसरी तरफ़ यह गुप्त आशंका भी धीरे-धीरे मन को कचोट रही थी कि माधवी का ब्याह प्रभात की इच्छा के अनुकूल नहीं हो रहा है। वह नई रोशनी का लड़का है। कहीं तिलक ले जाने में उसे शर्म न लगे कि मैं शहर का एक पढ़ा-लिखा लड़का हूँ और अपनी बहन को गाँव में ब्याहने जा रहा हूँ।

इसी तरह अक्सर जमुना सोचा करती थी। नवलबाबू आजकल उससे चिढ़े-चिढ़े रहते, कभी अच्छी तरह नहीं बोलते। वह बहुत हैरान थी। चालीस-बयालीस साल की उम्र हो गई उसके सामने कभी ऐसी समस्या नहीं आई थी। अब उसे लगता था कि वह बीच में खड़ी है और घर में चारों ओर से संगीनें तन रही हैं। वह पति को समझाने का प्रयास करती तो ठोस उत्तर मिलता कि प्रभात की माँ विचार बदलते हैं, लेकिन दिशायें कभी नहीं बदलती। मैं जो एक बार तय कर लेता हूँ। उसके बाद उसे टालने, छोड़ने और बदलने के पक्ष में नहीं रहता।

जमुना का ध्यान जब माधवी की ओर जाता तो वह बहुत उदास हो जाती। सोचने लगती कि मेरी कोख से ऐसी बदसूरत संतान जन्म लेगी मैंने कभी नहीं सोचा था। माधवी पुत्री नहीं मेरे जीवन का सबसे बड़ा अपवाद है। वह घर की ज्वलन्त समस्या है। मुझे भय है कि यह ब्याह कहीं बाप-बेटे के बीच एक बहुत बड़े भेद की दीवाल न खड़ी

कर दे। अकेला लड़का है; अगर बिचक गया तो घर बिगड़ जायेगा। क्या करूँ? सोचती हूँ कि कल रात तक यदि वह नहीं आता है तो परसों सुबह मैं लखनऊ चली जाऊँगी। उसे अपने साथ लिवा लाऊँगी। वह आयेगा कैसे नहीं उसे आना पड़ेगा।

सबेरे का समय था। नवलबाबू अपने कमरे में बैठे प्रातः का नाश्ता कर रहे थे। माधवी कप में चाय डाल रही थी और निकट ही बैठी थी जमुना। उसकी दाहिनी कुहनी घुटने पर थी और हथेली ठुड्डी को छू रही थी। पति की ओर उन्मुख हो उसने धीरे-धीरे कहा—"सोचती हूँ कि अगर आज रात तक प्रभात न आया तो सबेरे मैं लखनऊ चली जाऊँ और प्रभात को पकड़कर ले आऊँ। देखूँ वह कैसे नहीं आता है।"

यह सुनते ही नवलबाबू खीझ उठे। वे चिढ़कर बोले—"मैं अपमान के घूँट पीकर चला आया और तुम छालों को फोड़ने जा रही हो, जिनमें जहर भरा है। यह कभी नहीं होगा। तुम्हें कभी नहीं जाने दूँगा मैं। प्रभात पर अँग्रेजियत सवार है। वह पुराने रीति-रिवाजों को नफरत की निगाह से देखता है। वह किसी का भी अपमान कर सकता है। मुझे उससे घृणा हो गई है।"

"घृणा! अपने खून से अपने कलेजे के टुकड़े से। कैसी नमूदी बातें करते हो। मैं उसकी माँ हूँ। तुमसे अधिक जानती हूँ उसे। वह····।"

नवलबाबू यह सब सुनना बिल्कुल पसंद नहीं करते थे। वे बीच ही में बोल उठे—"तुम उसे अधिक जानती हो या थोड़ा इससे मुझे मतलब नहीं। सबसे पहले तुम्हें मेरा कहना मानना होगा। लखनऊ नहीं जाओगी तुम और माधवी का ब्याह यहीं होगा। अगर कल तीसरे पहर तक प्रभात नहीं आता है तो तिलक भेजने का मैं दूसरा इंतजाम कर लूँगा।"

चाय समाप्त हो गई थी। नवलबाबू ने रूमाल से मुँह पोंछा। फिर पैर झाड़ कर चारपाई पर जा लुढ़क गये और अखबार पढ़ने लगे। माधवी पान लगा कर ले आई थी। बीड़ा मुँह में दाब वे समाचारपत्र पर अपनी दृष्टि दौड़ा रहे थे कि सहसा उत्तेजित जमुना का स्वर सुनकर विचलित हो

उठे। वह कह रही थी—"यह नहीं हो सकता। तुम मुझे नहीं रोक सकते। मैं जरूर जाऊँगी और प्रभात को लाकर मानूँगी।"

तब बाहर जाने का आयोजन कर नवलबाबू आगे बढ़े और चलते-चलते कहते गये—"प्रभात मेरा दामाद नहीं लड़का है। कोई उसके पैरों पर टोपी रखने नहीं जायेगा। उसकी गरज हो आये और मरजी हो न आये।"

जमुना गुस्से से होंठ चबाकर रह गई। वह अपनी दोनों हथेलियाँ मसलने लगी। माधवी चाय के बर्तन लेकर चली गई थी। वह उसके लिए जब नाश्ता लेकर आई और सामने खड़ी हो नम्र स्वर में कहने लगी—"चाय ठंडी हो जायेगी। पीलो माँ। मैं रसोई में चलती हूँ।"

जमुना को आज न जाने अचानक इतना क्रोध कैसे आ गया। उसने हाथ मारकर नाश्ते की ट्रे नीचे गिरा दी और उठकर वहाँ से चली गई।

माधवी खड़ी सब देखती रही। कप टूट गया था। प्लेटों के कई टुकड़े हो गये और केटली बीच से दो टूक हो गई थी। चाय फर्श पर फैल रही थी। सेव, और पापड़ियाँ चाय में भींग कर फूल रही थी! माधवी की आँखों में नीर भर आया और आँसू बनकर बरसने लगा। तनिक देर में ही दृश्य इतना बदल जायेगा कि उसकी भयानकता का ओर-छोर ही नहीं रहेगा। माधवी ने इसकी कल्पना तक नहीं की थी। वह घर में सबके स्वभाव को भली-भाँति जानती थी। इसीलिए गुस्से के समय माँ के पास नहीं गई। वह जानती थी कि मेरे जाने से और कुछ कहने से माँ का क्रोध विकराल हो जायेगा; क्योंकि प्रायः वे उससे असन्तुष्ट-सी रहती हैं और उस असन्तुष्टता का केवल मात्र एक कारण है मेरे शरीर का रंग और चेहरे की बदसूरती।

माधवी खड़ी-खड़ी सोचती रही कि रूप विधाता की देन है। उसे मनुष्य उसका दान समझता है और कुरूपता को अभिशाप; लेकिन उसके वश का कुछ भी नहीं। वह अपने रँग-रूप को नहीं बदल सकता। अपने अवयव और डील-डौल में परिवर्तन नहीं कर सकता। फिर न जाने उसे संतोष क्यों नहीं होता कि वह गोरे और काले में भेद मानता है।

घर में सन्नाटा छा रहा था। नवलबाबू बाहर चले गये थे। जमुना अपने कमरे में थी। और माधवी अब तक वहीं खड़ी थी। उसे यह ध्यान ही नहीं रह गया था कि चूल्हे में लकड़ियाँ जल रही हैं और रसोई बनानी है।

× × ×

दूसरे दिन संध्या तक नवलबाबू ने प्रभात की राह देखी, फिर नाई के हाथ फलदान का थाल बीधापुर भेज दिया।

रात का रँग निखर आया था। हीरे और मोतियों की भाँति आकाश में ज्योति-पिंड चमचमा रहे थे। दरवाजे पर बाजे बज रहे थे। पूरन महाराज एक किनारे खड़े तिलक लेकर आनेवालों की राह देख रहे थे। काफी देर बाद उनकी प्रतीक्षा का अंत हुआ। एक बैलगाड़ी दरवाजे पर आकर रुक गई। कोचवान के अलावा उसमें केवल एक आदमी बैठा था। पूछने पर पता चला कि वह नाई है और नवलबाबू ने उसे तिलक चढ़ाने के लिए भेजा है। उनके पुत्र प्रभात की तबियत खराब है। वह इस समय मियादी बुखार की हालत में लखनऊ के मेडिकल कालेज में पड़ा है। फलदान का मुहूर्त टलना नहीं चाहिये इसलिए तिलक का सामान नाई के द्वारा भेज दिया है।

पूरन चौंके तो बहुत; लेकिन चुप्पी साधकर रह गये। वे नाई को अन्दर लिवा गये। बरोठे में थाल रखवा लिया और खोलकर देखने लगे। उसमें कुछ चाँदी के पुराने सिक्के और कुछ दस-दस, पाँच-पाँच रुपये के नोट थे। सब मिलाकर तीन हजार एक रुपये की रकम थी। चाँदी से मढ़ा हुआ नारियल और वैसे ही हल्दी तथा सुपाड़ी भी चाँदी के पत्र से मढ़ी थीं। पूरे चालीस गज का विलायती मलमल का थान था। थाल पीतल का था; लेकिन उस पर नक्काशी थी और मुरादाबादी कलई का काम हो रहा था। यह देखकर पूरन महाराज को जैसे भगवान मिल गये। वे इस बात को बिल्कुल भूल ही गये थे कि भाई की जगह नाई गंगाधर का तिलक करेगा। लोग हँसेंगे, वे क्या कहेंगे, इस ओर उनका ध्यान ही नहीं था।

बीचोंबीच आँगन में चौक पुर रहा था। लकड़ी की एक गोल चौकी पर भगवान् का पीतल का सिंहासन रक्खा था। चौकी के इर्द-गिर्द कदली-पल्लव तानकर एक छोटा-सा मंडप बनाया गया था। एक ओर हवन की वेदी थी जिस पर समिधायें रक्खी थी और पास ही मिट्टी के कलश पर सात बाती का दिया जल रहा था। पुरोहित कुशासन पर आसीन था। गंगाधर की माँ पुत्र के सिर पर अपना आँचल डाल अंजलि में जौ भरवा चौक पर ले आई। एक ओर बैठी स्त्रियाँ ढोलक पर मंगल गीत गा रही थीं। दूसरी ओर सफेद जाजम बिछी थी। उस पर खानदानवालों का जमाव लग रहा था। लोग आपस में कानाफूसी कर रहे थे कि देखा लड़कीवाले बहुत बड़े आदमी हैं, पैसेवाले हैं। कितनी बड़ी तौहीन की है उन लोगों ने पूरन की। कनौजियों के घर में कहीं भला नाई फलदान चढ़ाता है। अब तो यही कहना पड़ेगा कि उन लोगों ने रकम देकर लड़का खरीद लिया है। पूरन के कानों में भी यह भनक पड़ी। लेकिन वे ऐसे बन गये जैसे कुछ सुना ही नहीं। धीरे-धीरे बात स्त्रियों में भी फैल गई। ढोलक बंद हो गई और उनमें चखचख चलने लगी कि राम! राम!! शहर के आदमियों में तनिक भी मान-मर्यादा का डर नहीं होता। देखो तो लड़की के बाप को भाई होते हुये नाई के हाथ तिलक भेजा क्या हम लोग सूद-चमार हैं?

गंगाधर की माँ पति की ही भाँति हर बात पर पर्दा डालने का प्रयत्न कर रही थी। और चौक पर बैठा गंगाधर सोच रहा था कि गाँव और खानदानवाले बेकार बकते हैं। फलदान में नाई आया है इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। न जाने ये लोग अपने गाल क्यों बजा रहे हैं?

बाहर आतिशबाज ने एक गोले में बत्ती लगाई। गोला छूटने की आवाज़ खूब जोर से हुई। बाजेवाले समझ गये कि अब तिलक चढ़ रहा है। वे पूरी धुन के साथ अपने साज बजाने लगे और बुलावे में आये गाँव के व्यवहारी उचक-उचककर दरवाजे की ओर देखने लगे कि फलदान में कितने रुपये आये हैं यह देखना है। थाल लेकर नाई अभी बाहर दिखलाने के लिए आता ही होगा। बच्चे उमंग भरे इधर-उधर डोल रहे थे कि

टीका चढ़ जाय फिर अभी बताशे बटेंगे। क्योंकि गाँव के निर्धन समाज में अक्सर लोग थोड़े खर्चे में ही बहुत बड़ा प्रदर्शन कर लेते हैं। लड्डू, पेड़े आदि मिठाइयाँ बनवाने में पैसा बहुत खर्च होता है। इसलिए ऐसे समारोहों पर वे बताशों या बतासफेनियों से अपना काम निकाल लेते हैं। लेकिन पूरन महाराज के घर आज धूम मची थी। जहाँ पर अँग्रेजी बाजे बज रहे थे। वहाँ भला बताशों का बाँटना शोभा देता। उन्होंने मोतीचूर के लड्डू बनवाये थे। उनमें सुगन्ध के लिए केवड़ा का इत्र छोड़ा गया था। मिट्टी के प्यालों में पाँच-पाँच लड्डू रक्खे गये और सजावट के लिए उन पर चाँदी के वर्क चिपका दिये गये।

तिलक चढ़ गया। बाकी रस्में पूरी होने लगीं। बाहर लोगों को थाल और थान जिस पर रुपये रक्खे थे दिखलाया जाने लगा। फी व्यक्ति एक-एक आना पैसा और लड्डुओं की तश्तरी दी जा रही थी कि सहसा अंदर जोर का शोर मच गया। फलदान के बाद लड़कीवाला वह भाई हो या बाप लड़के के कुटुम्बियों को नजरें, भेंटें देता है। पूरन महाराज के संकेत पर जब नाई इस काम के लिए आगे बढ़ा तो लम्बी-लम्बी चोटीधारी कनौजिया ब्राह्मण आँगन से उठ-उठकर जाने लगे और मुँह फैला-फैलाकर कहने लगे कि पूरन महाराज तुम्हें रुपये का लालच है। तीन हजार आज पाये और लम्बी रकम अभी दहेज में मिलेगी। भाई के होते हुये नाई तिलक चढ़ाने आया। कितने शर्म की बात है। हम लोग अपनी तौहीनी नहीं करायेंगे कि नाई के हाथ से नजर और भेंटें लें।

पूरन लोगों की चिरौरी करने लगे, उन्हें बहुत समझाने की कोशिश की, आग्रह करके बैठाना चाहा; लेकिन पुरानी रूढ़ियों के शिकंजे में जकड़े हुये वे ग्रामीण नहीं माने। वे चले गये। कुछ इने-गिने दो-एक खानदानी ही आँगन में रह गये।

बाहर की भीड़ छँट गई थी। केवल बाजेवाले, नाई, बारी, कहार, माली और कुम्हार आदि रह गये थे। अन्दर तिलक चढ़ जाने के बाद भोज की तैयारी हो रही थी। पाटों की पंगत लग रही थी। पत्तलें बिछा

दी गई; लेकिन कोई भी कुटुम्बी और पड़ोसी खाने के लिए तैयार नहीं हुआ। पूरन महाराज यह सब देखकर चकरा गये। उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें? पुरुषों की यह स्थिति थी और स्त्रियाँ भी उठ-उठकर अपने घर जा रहीं थीं।

लोग बाहर जाकर दुनिया भर की बातें करते रहे जिनको अन्य लोगों ने सुना और पूरन को बतलाया। उनके खानदानवाले आपस में ऐसी गुफ्तगू कर रहे थे कि गंगाधर के ब्याह में पूरन को एक मोटी रकम मिल रही है। दहेज का ही लालच पाकर वे यह ब्याह करने को राजी हुये हैं। शहर की लड़की घर आ रही है। वह पढ़ी-लिखी है। देहात में इतना दहेज कौन देता है? लेकिन लड़की पढ़ी-लिखी होने के साथ-साथ उम्र में बहुत बड़ी हो गई है। काली-कलूटी होने के कारण उसके साथ ब्याह करने को कोई राजी नहीं होता। होगी बद्चलन नहीं तो भला लड़की कहीं क्वांरी बैठी रहती है? कानी, खुदरी, लूली और लँगड़ी सभी के ब्याह हो जाते हैं। अगर कुछ दाल में काला नहीं है तो माँ-बाप उसे गांव में क्यों ब्याह रहे हैं? कोई न कोई दोष जरूर है। तभी उसके बाप ने पूरन को रुपये का लालच दिया है।

इस तरह खानदानवाले खिलाफ हो गये। सबने मिलकर एका कर लिया कि वे गंगाधर के ब्याह में शामिल नहीं होंगे। लड़की में कोई कज है और उसका बाप पैसे के गरूर में लोगों का अपमान करता है। भाई होते हुए भी नाई तिलक चढ़ाने आया। यह कम तौहीनी हुई है पूरन की? ऐसे ही वह अपने दरवाजे पर बुलाकर बारात का अनादर करेगा। यह हम लोग बर्दाश्त नहीं कर सकते।

पूरन ने जब ये बातें सुनीं तो एकदम सूख गये। शहर की अपेक्षा गाँव वाले जाति-बिरादरी पर बहुत जोर देते हैं। खानदानवाले कहीं मुझे छोड़ न दें इस भय से पूरन महाराज थर्रा उठे। घर में आकर उन्होंने पत्नी से सलाह की। वह उनसे भी अधिक पुराने विचारों की थी। समाज का डर उसके सम्मुख ईश्वर के भय से भी कहीं अधिक बढ़-चढ़कर था। दहेज

का लालच छोड़ उसने अपना मत प्रकट करते हुए कहा—"लौटा दो फलदान। मुझे यह ब्याह नहीं करना है।"

पूरन भी ऐसा ही कुछ सोच रहे थे। वे पत्नी को कुछ भी जवाब न दे बाहर आ गये। वहाँ बाजेवाले भोजन कर चुके थे। रुपये और लड्डू देकर उनको बिदा किया। इसके अतिरिक्त नाई, बारी वगैरह को भी खिला-पिला और नेग-निछावर देकर चलता किया और फिर घर में आकर छत पर पड़ी टीन के नीचे चारपाई पर लेट वर्तमान समस्या पर विचार करने लगे।

रात का उत्सव अब आधी रात के समय आराम कर रहा था। बाहर लगे गैस के हंडे बुझाकर आँगन में रख दिये गये थे। कानपुर से आया हुआ नाई बरोठे में लेटा खुर्राटे ले रहा था। गंगाधर अपनी माँ के पास दूसरी चारपाई पर चुपचाप लेटा था। आज की रात नींद दोनों माँ बेटे से रूठी थी। लड़का करवट बदल रहा था और माँ आँखें खोले सोच रही थी कि जब खानदान ही छुट जायेगा तो ऐसा ब्याह करके क्या होगा? बहू कुरूप होती मैं घर में बैठा लेती; लेकिन वह अपने साथ बदसूरती लेकर ही नहीं एक बहुत बड़ी बदनामी लेकर आ रही है। उस बदनामी को मैं नहीं समेट पाऊँगी। ऐसी हालत में तिलक वापस कर देना ही अच्छा है।

अगहन की शीतभरी रात। आकाश में तारे निकल रहे थे। चाँदनी छिटक रही थी और ठंडी बर्फ-सी हवा धीरे-धीरे बह रही थी। कमरे से बाहर आँगन में निकलने की हिम्मत नहीं पड़ती। ऐसे में गंगाधर और उसकी माँ दोनों ही अपने-अपने विचारों की दुनिया में खो रहे थे। किसी को भी बोध नहीं था कि पूरन कहाँ लेटे हैं और क्या कर रहे हैं? वे दोनों समझते थे कि बरोठे में पड़े सो रहे होंगे। वहीं कानपुर का नाई लेटा है। लेकिन पूरन एक काली कमली से अपना बदन ढाँके खरखटी चारपाई पर लेटे थे। उनके मानस में हाहाकार मच रहा था। वे निश्चय नहीं कर पा रहे थे कि क्या करें? कभी सोचते कि बकने दो खानदानवालों को। आजकल की दुनिया में कोई किसी का भला नहीं चाहता। यह जानकर

लोगों की छाती पर साँप लोट गया है कि गंगाधर के ब्याह में दहेज लखपतियों जैसा मिल रहा है। लोगों को इससे हसद हो गई है। किन्तु जब यह ख्याल आता कि बारात में गाँव से शायद कोई नहीं जायेगा तो वे एकदम सन्न रह जाते और मन अपने तर्कों को स्वयं ही काट देता कि सबसे मिलकर चलने का नाम दुनियादारी है। एक अकेला आदमी संसार में कुछ नहीं कर सकता। कहावत है कि---यद्यपि शुद्धम्, लोक विरुद्धम्। नाकरणीयम् नाकरणीयम्। इसके मुताबिक मुझे अपने कुटुम्बियों से लगाव रखना ही होगा। क्या करूँ? फलदान वापस कर दूँ या न करूँ? जग हँसाई आदमी को जीते जी मार डालती है। मुझे भी जहाँ तक हो अपनी निन्दा से बचना चाहिये। एक बात यह समझ में नहीं आती कि मान लो नवलबाबू का लड़का बीमार था वह तिलक चढ़ाने नहीं आ सकता था तो वे स्वयं चले आते। क्या ऐसा नहीं हो सकता था? जरूर हो सकता था। यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ। लेकिन सबसे पहली बात तो यह है कि शहर का हर आदमी गाँववालों को गँवार समझता है और फिर पैसे वाला। उसकी तो माया ही निराली होती है। सचमुच नवलबाबू ने मेरी बड़ी तौहीन की है। सबेरा होते ही मैं तिलक का सामान वापस कर दूँगा।

रात भीगती रही। ओस गिरती रही। पूरन महाराज जागते रहे और लम्बी-लम्बी साँसें लेते रहे। बीघापुर स्टेशन से कानपुर जाने के लिए पैसींजर ट्रेन प्रातः छे बजे छूटती थी। मुर्गों की बाँग के साथ ही नाई की आँख खुल गई। वह उठकर जाने की तैयारी करने लगा; क्योंकि बस्ती से स्टेशन लगभग एक मील दूर था।

पूरन नीचे आये। बरोठे में काफी अँधेरा था। उन्होंने स्वयं अपने हाथों लालटेन जलाई और फिर अन्दर जा फलदानवाला थाल उठा लाये। उसको नाई के सामने रख कहने लगे---"नवलबाबू से कहना मैं यह ब्याह नहीं करूँगा। खानदानवाले मेरी खिलाफत कर रहे हैं। इसीलिए फलदान वापस कर रहा हूँ। और सुनो उनसे यह भी कह देना कि मेरे पास आने

की कोशिश न करें। यहाँ उनकी हर कोशिश बेकार होगी। आखिर इतने दिन तक उनकी लड़की क्वाँरी क्यों बैठी रही? अब तक उन्हें कोई लड़का ही नहीं मिला। जाओ ऐसे ही मैंने जो कुछ कहा है उनसे कह देना।" यह कहकर वे अन्दर चले गये। नाई उनसे भयवश कुछ भी नहीं पूछ सका; क्योंकि उनकी मुद्रा बहुत ही रोष भरी थी।

नाई ने चादरे में थाल ब ॰ र सिर पर रक्खा और स्टेशन की ओर चल दिया। तब पूरब के नीलाम्बर में सबेरे की सफेदी फूट रही थीं और अपने-अपने खेतों में मचानों पर बैठे खेतिहर प्रभात के राग अलाप रहे थे। नाई चला जा रहा था सोचता हुआ कि नवलबाबू से यह कहूँगा वह कहूँगा। उसके पाँव आगे बढ़ रहे थे और गाँव पीछे छूट रहा था।

७

कौशिक की आयु लगभग प्रभात की इतनी ही थी बीस के ऊपर और पच्चीस के अन्दर। वह शान्तिमय और मिलनसार युवक था। सम्बन्ध बनाना उसे खूब आता था और बिगाड़ने की कला उसने सीखी ही नहीं थी। वह प्रभात को अपना मित्र ही नहीं आत्मीय समझता था। माधवी का ब्याह गँवार के साथ हो रहा है। यह बात जब उसने अपने माँ-बाप को बतलाई तो वे बहुत दुखी हुए और प्रभात को बुलाकर उससे कहने लगे कि प्रभात! हम लोग तुमको यह सलाह नहीं देते कि अपने माँ-बाप की खिलाफत करो। लेकिन यह जरूर चाहते हैं कि तुम्हारी बहन का अहित न हो। क्या शहर में कोई लड़का नहीं मिल सकता?

इस पर प्रभात चुप रहा और कौशिक ने परिस्थिति का स्पष्टीकरण सविस्तार किया। उसने वे सारी बातें बतलाई जो प्रभात और नवलबाबू के बीच हुई थीं। इस पर गौरी कहने लगी—"अभी हमारे समाज में पुरानापन इस कदर कूट-कूटकर भरा है कि आदमी आँखें खुली होने पर भी सामने नहीं देखना चाहता। तेली के कोल्हू के बैल की भाँति आँखें बंद करके चलने में ही वह अपने जीवन की गति समझता है। बड़ों की ज़िद्द छोटों के जीवन पर क्या प्रभाव डालती है यह वे कभी नहीं सोचते। माधवी काली है उसका नख-शिख अच्छा नहीं है इसलिए उसकी उपेक्षा कर उसे भाड़ में झोंक दिया जाय मेरी समझ में तो नहीं आता।"

तब पत्नी के समर्थन में रामचरण बाबू बोल उठे—"कौशिक की माँ! दुनिया में भलाई का स्थान बुराई लेती जा रही है। मनुष्य आगे

बढ़ने की अपेक्षा पीछे लौट रहा है। जिसको भली बात बताओ उसको बुरी लगती है। यही तो कलियुग है। नवलबाबू पुराने विचारों के आदमी हैं। वंश और कुल की मर्यादा की ओर अधिक ध्यान देते हैं। उन्हें सोचना चाहिये कि उनके बच्चों का भविष्य स्वर्णिम बने। वे तरक्की करें, जिन्दगी में आगे बढ़ें और दुनिया में उनका नाम हो।"

प्रभात और कौशिक चुप बैठे थे। साँझ का सूरज पश्चिम में जाकर लाल-लाल हो गया था। उसकी आभा पूर्णरूपेण निखर कर रह गई थी। अगहन बीतने पर था। सर्दी जवान हो रही थी। कमरे में हीटर लग रहा था। रामचरण बाबू ने मेज पर रक्खा थर्मस उठाया और एक-एक कप चाय कौशिक तथा प्रभात के सामने बढ़ाते हुए बोले—"प्रभात! अब इस मामले में तुम और क्या कर सकते हो? मैं जानता हूँ कि तुम्हारी एक नहीं चलेगी और माधवी का ब्याह बीघापुर में ही कर दिया जायेगा। सन्तोष करो बेटा! जीवन में इससे बड़ा सुख नहीं। समाई का फल मीठा ही नहीं, अमर फल की कोटि का होता है। लेकिन फिर भी मैं तुम्हें सलाह दे रहा हूँ कि बहन के ब्याह में तुम्हें शामिल होना चाहिये। तुम फलदान में नहीं गये—यह अच्छा नहीं किया। अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है। कल तिलक चढ़ गया होगा। तुम एक दिन के लिए कानपुर चले जाओ और हाल-चाल लेकर लौट आओ। देखो! तुम्हारे पिता क्या कहते हैं?"

कमरे में कुछ-कुछ अँधेरा समाने लगा था। कौशिक ने उठकर बत्ती जला दी और प्रभात अपनी विवशता रामचरण बाबू पर प्रकट करता हुआ बोल उठा—"चाचा जी! मुझे मजबूर न कीजिये मैं कानपुर नहीं जाऊँगा। आप नहीं जानते वहाँ जाने पर तू-तू-मैं-मैं होगी। चार आदमी तमाशा देखेंगे। और पिताजी को क्या वे अपने क्रोध के ज्वार में उल्टे-सीधे बहने लगेंगे। मैं वहाँ नहीं जाऊँगा।"

इस पर गौरी ने भी प्रभात को बहुत समझाया और बाप की अपेक्षा उसको माँ की ओर मोड़ने की कोशिश की। उसने कहा—"मैं समझ

से प्रभात तुम्हें घर जरूर जाना चाहिये। बाप से तुम नाराज हो; लेकिन माँ ने तो कुछ नहीं बिगाड़ा। उसका मन नाहक दुखाओगे। तुम्हारा खिंचे रहना ठीक नहीं। तुम्हें वहाँ जरूर पहुँचना चाहिये।"

लेकिन प्रभात कानपुर जाने के लिए राहमत नहीं हुआ। वह देर तक बैठा बातें करता रहा। फिर जब उठकर चला तो कौशिक उसके साथ था। रास्ते में दोनों मित्रों में बातें होती रहीं।

× × ×

एक रात को कौशिक प्रभात के घर में बैठा था कि इतने में वहाँ आ पहुँचा देवराज। आते ही वह कहने लगा—"मैं अभी तुम्हारे घर गया था कौशिक। मालूम हुआ कि प्रभात के साथ गये हो इसलिए इधर चला आया।"

प्रभात शिष्टतावश देवराज से पूछने लगा—"कहिये देवराज बाबू क्या समाचार हैं? बहुत दिन बाद मिले। इधर मैं भी बहुत व्यस्त रहा। आपके घर नहीं पहुँच सका।"

देवराज की वयस लगभग तीस साल की थी। वह पैरों में साधारण चप्पल औसत दर्जे की मोटे सूतवाली धोती और इतनी ठंड में भी शरीर पर केवल खद्दर का कुर्त्ता और सदरी पहने था। सिर नंगा था और गले में सूती मफलर पड़ा था। शरीर सिर्फ हड्डियों का ढाँचामात्र था। और रँग ऐसा पीला पड़ रहा था मानो वह पीलिया का बीमार हो। वह प्रभात का केवल दोस्त था और दोस्ती का कारण कौशिक की रिश्तेदारी थी। वह उसके साथ अक्सर देवराज के घर आया-जाया करता था।

प्रभात की बात सुन देवराज उदास होकर कहने लगा—"न पूछो प्रभात! इस समय मुझ पर कैसी बीत रही है। मैं ही जानता हूँ या ईश्वर। दो महीने के लिए सस्पेन्ड (मुअत्तिल) कर दिया गया हूँ। आज ही नोटिस मिला है।" यह कहने के साथ देवराज ने सदरी की जेब से नोटिस का कागज निकालकर उसके हाथ में पकड़ा दिया।

प्रभात और कौशिक दोनों एक-दूसरे की ओर देखने लगे। कौशिक

के मुँह से आश्चर्य भरी वाणी में निकला—"यह सब कैसे हो गया देवराज दादा! पहले कुछ भी नहीं मालूम हुआ। एकाएक·····।"

"अचानक ही तो आदमी पर गाज गिरती है कल तक कोई बात नहीं थी आज इक छोटी-सी गलती हो गई। एक सौ रुपये का मनीआर्डर था। मैंने लिया और उसकी रसीद दी। लेकिन आँकड़े लिखने में कुछ भूल कर गया। वह भी जल्दी के कारण। क्योंकि भीड़ अधिक थी। सौ के बजाय मैं दश लिख गया और लिपि में भी कुछ ध्यान नहीं रहा। उसमें भी रुपीज टेन ओन्ली (केवल दस रुपये)। यह सब जल्दी में लिख गया। हिसाब देने के समय जब भूल मालूम हुई तो मैंने अपनी बहुत सफाई दी। बात पोस्टमास्टर तक पहुँच गई। जवाब तलब हुआ। जो सत्य था वह मैंने कह दिया। लेकिन भाग्य की विडम्बना को क्या कहूँ। जाते-जाते चपरासी यह नोटिस दे गया। दो महीने बहुत होते हैं प्रभात बाबू। तनख्वाह मिली नहीं कि एक हफ्ते में ही साफ हो जाती है। महीने के शेष दिन बड़ी कठिनाई से कटते हैं। फिर ये दो महीने तो पूरे दो बरस हो जायेंगे मेरे लिए।" यह कहकर देवराज ने एक लम्बी साँस ली।

तीनों मित्र बातें कर रहे थे तरकारी सब्जी बनाने के लिए सिलबट्टे पर मसाला पीस रहा था। कौशिक उसके लिए कोई नया नहीं था। हाँ देवराज अलबत्ता कभी-कभी आता था। उसने बट्टा शिल पर रख दिया और उठकर खड़ा होता हुआ प्रभात से बोला—"चाय बना लाऊँ बबुआ।"

"हाँ, हाँ। दादा। पूछने क्या हो। जल्दी जाओ। देवराज बाबू आज बहुत दिनों बाद मेरे घर आये हैं। नेकी और फिर पूछ-पूछ! ऐसे कामों में पूछने की जरूरत ही नहीं।"

प्रभात यह कहकर अपने कमरे में चला गया। कौशिक और देवराज कुर्सियों पर बैठ गये। बातचीत चलने लगी। कौशिक ने देवराज की मुअत्तिली वाला नोटिस पढ़ा और कहने लगा—"देव दादा। लापरवाही का कारण इसमें दिखलाया गया है। दो महीने तक आपको घर पर ही बैठना होगा। इस नोटिस में अब कुछ भी रद्दोबदल नहीं हो सकता।"

देवराज ने एक दीर्घ उच्छ्वास ली। तभी प्रभात के मुँह से निकल गया—"देवराज बाबू परिस्थितियों को आप कहाँ ले जायेंगे? ये ही मनुष्य के जीवन की कसौटी हैं। कष्ट को कष्ट न अनुभव कर जब आप साहस से काम लेंगे तो हर मुश्किल आसान हो जायेगी। कोई किसी के लिए ईश्वर नहीं बन सकता। अपना-अपना मुकद्दर सबके साथ है। जिसने मुँह चीरा है वही शाम तक खाने को देता है। उसी का भरोसा करो और मन से इस मलाल को निकाल दो कि दो महीने तक आपको वेतन नहीं मिलेगा, आप खायेंगे क्या?"

कौशिक को प्रभात की बातों में तथ्य मिला और ऐसा लगा कि सत्य उसके सम्मुख साक्षात् आकर खड़ा हो गया है। वह उसके समर्थन स्वरूप धीरे-धीरे कहने लगा—"हाँ, यह तो है ही। संतोष करो देव दादा। सच्चाई का घूँट पीनेवाले ही दुनिया में कुछ कर जाते हैं और उलझन का इससे बड़ा कोई दूसरा उपचार नहीं है। रह गई तकलीफ-आराम की बात उसके लिए हम लोग हमेशा हाजिर हैं। आप अपने को अकेला क्यों समझते हैं।"

देवराज का दुःख यद्यपि अथाह था; लेकिन कौशिक और प्रभात की बातों का उस पर बहुत बड़ा असर पड़ा। वह चुपचाप दोनों की ओर देखने लगा। दोनों मित्र उसके साथ संवेदना प्रकट करते रहे। काफी देर तक बातचीत चली और उसका सिलसिला तब टूटा जब गयारी ने चाय की ट्रे लाकर सामने रख दी।

चाय का दौर चल रहा था। बातचीत फिर पूर्ववत् आरम्भ हो गई। बात-बात पर देवराज निराशा की गोद में गिर जाता और लम्बी-लम्बी साँसें लेने लगता। प्रभात ने उसे यह आश्वासन दिया कि वह प्रयत्न करके उसको दो-तीन ट्यूशन दिलवा देगा। कौशिक ने भी इसी बात पर जोर दिया। उसने कहा कि मैं भी यह कोशिश करूँगा कि अधिक नहीं तो कम-से-कम कुछ तो सहारा आपको हो ही जाय।"

थोड़ी देर बाद कौशिक और देवराज चले गये तो प्रभात अपनी चार-

पाई पर लेट देवराज की समस्या पर विचार करने लगा। उस समय उसकी आँखों के सामने उस गरीब क्लर्क के घर का चित्र खिंच गया। वह सोचने लगा कि एक निर्धन परिवार पर जब ऐसी आपत्ति आ जाय तो उसे दैवी अभिशाप ही समझना चाहिये। सौ रुपये के लगभग देवराज को वेतन मिलता है। किराये का मकान है। लगभग पन्द्रह-बीस रुपया महीना उसका देना ही पड़ता होगा। परिवार में पत्नी इतनी कंकाला है कि वह घर में शान्ति को टिकने ही नहीं देती। नर्क से भी बढ़कर उसने घर का रूप बना रक्खा है। काश ! आज उसकी पत्नी सावित्री के स्थान पर कोई कुशल गृहणी होती तो घर स्वर्ग बन सकता था। आठ-नौ साल की पुत्री जालपा भी धीरे-धीरे सयानी हो रही है। उसकी चिन्ता भी देवराज के अन्तर के एक कोने में पड़ी रहती होगी—यह मैं जानता हूँ। और सबसे बड़ा भार जो उस पर है—वह है शालिनी उसकी छोटी विधवा बहन। सावित्री उसकी फूटी आँखों भी नहीं देखना चाहती है, दिन-रात उसे जली-कटी सुनाया करती है। न जाने कितनी समाई करती है बेचारी शालिनी कि भाई से कुछ नहीं कहती।

ऐसा सोचते-सोचते प्रभात शालिनी के प्रति सहानुभूति से भर आया और उस दिन की याद करने लगा जब वह पहले-पहल देवराज के घर गया था उसने देखा था कि एक सत्रह-अठारह वर्ष की युवती हाथों में चाँदी की चूड़ियाँ पहने एक ओर बैठी है। देवराज ने उसका परिचय दिया कि प्रभात बाबू। यह है मेरी छोटी बहन शालिनी। तकदीर ने इसके सौभाग्य को एक साल भी नहीं ठहरने दिया। पति की मृत्यु हो गई। तब से यह यहीं रहती है।

फिर जब परिचय बढ़ा, आवागमन का दौर चला और शिष्टता-घनिष्टता में बदलती गई तो धीरे-धीरे अतीत की कहानियाँ उसके कानों में पड़ती गईं कि देवराज के पिता बहुत ही गरीब थे। वे गाँव में रहते थे और वहीं के बाजार में जनेऊ की जोड़ियाँ बेचकर अपना निर्वाह करते थे। उनकी वृत्ति ने उन्हें आगे बढ़ने का मौका कभी नहीं दिया। देवराज मैट्रिक

पास कर चुका था। गाँव के एक महोदय लखनऊ हेड-पोस्टआफिस में क्लर्क थे। उनकी सिफारिश काम कर गई और देवराज को भी डाक-खाने में जगह मिल गई। फिर उसका ब्याह हुआ। जालपा का जन्म हुआ। तब शालिनी भी एक युवती सदृश प्रतीत होने लगी थी। सावित्री आरम्भ से ही कर्कशा थी। वह किसी का भी आदर नहीं करती। अक्सर वह कहा करती मेरा पति कमाता है और सब लोग आनन्द करते हैं। इससे पिता और पुत्री को ठेस लगती वे मन मसोसकर रह जाते; लेकिन देवराज से कुछ भी नहीं कह पाते।

ऐसे ही जब कभी बूढ़ा बाप देवराज को इस बात की याद दिला देता कि शालिनी सयानी हो रही है इस साल उसका ब्याह कर देना जरूरी है कोई लड़का देखो देवराज तब सावित्री जहर उगलने लगती। वह एकान्त में पति को समझाती कि वह इस चक्कर में न पड़े, लोटा-थाली भी बिक जायेगी। ऐसी बातें सुनकर देवराज उसको झड़प देता। दोनों में वाक्युद्ध होता और उस कलह की चर्चा सारे गाँव में फैल जाती।

आखिर एक दिन सावित्री पति के साथ लखनऊ चली आई। रोज-रोज की हाय-हाय से बचने का यही एक तरीका था। देवराज नियमित रूप से प्रतिमास बाप को रुपये भेजता रहा और पिता-पुत्री अकेले गाँव में जीवन-यापन करते रहे। गाँव का समाज नगर के समाज से अधिक वीभत्स होता है। वहाँ अफवाहों और झूठी चर्चाओं के अतिरिक्त मनुष्य के सामने और कुछ नहीं होता। किसी का भी पल्ला तनिक हल्का हुआ कि लोग उसकी हँसी उड़ाने लगे। लोग फब्तियाँ कसते, मुँह पर ठोक-ठोककर कहते कि मालूम होता है शालिनी का ब्याह इस उम्र में नहीं होगा। बूढ़ा बाप कायल होकर रह जाता। अर्थाभाव उसकी सारी आशाओं पर पानी फेर देता। अन्त में विवश होकर उसने एक बूढ़े के साथ शालिनी को ब्याह दिया।

शालिनी का पति एक बैंक का चपरासी था। पुराने दमे का रोगी और पचपन साला। वह शादी के कुछ ही महीनों बाद चल बसा और

अपने बाद पूंजी के नाम पर कुछ भी नहीं छोड़ गया। इधर बाप की मृत्यु हो चुकी थी। देवराज ने अपने कर्त्तव्य का पालन किया। वह बहन को अपने घर ले आया। तब गाँव का कच्चा घर गिर चुका था। वह एक खण्डहर मात्र रह गया था। ये लोग अब शहर के वासी बनकर रह गये।

सावित्री शालिनी को भार स्वरूप समझती थी। वह उसकी उपेक्षा ही नहीं करती, बल्कि तिल-तिल करके घुलाया करती थी। देवराज इस बात को जानता था। जब कभी बहन के पक्ष में वह कुछ बोल देता तो घर में कलहपात मच जाता। उस समय शालिनी को बहुत दुःख होता। वह घंटों बैठी रोया करती।

प्रभात ने इन सब बातों को कौशिक के मुँह से सुना था। उसकी माँ गोरी भी अक्सर देवराज के घर की बातें करती रहती थी। और आने-जाने पर परिस्थितियों के अध्ययन से भी उसने बहुत-कुछ जान लिया था।

प्रभात अब सोच रहा था कि दो महीने के लिए देवराज को नौकरी से अलग कर दिया गया है। उसके घर का खर्च कैसे चलेगा? ऐसी स्थिति में सावित्री ननद को फाड़-फाड़ खायेगी। बेचारी शालिनी खून के आँसुओं रोयेगी। उसकी जिन्दगी मृत्यु से भी गई बीती है। काश! हमारे ब्राह्मण समाज की यह प्रथा बदल पाती कि जिनके पैरों की मेंहदी भी नहीं छूटी वे विधवायें पुनर्व्याह का अधिकार पा सकतीं तो देश की प्रगति में चार-चाँद लग जाते।

प्रभात के विचारों का क्रम टूटने ही नहीं आ रहा था। वह निरन्तर इसी उधेड़-बुन में लगा था कि आखिर देवराज के घर का खर्चा कैसे चलेगा? अचानक गयारी की आवाज़ ने उसका ध्यान भंग कर दिया। वह कह रहा था—"बबुआ! खाना तैयार है वहीं ले आऊँ या चौके में आ रहे हो?"

प्रभात ने जवाब नहीं दिया वह उठकर बैठ गया और सामने दीख

रहे खुले आकाश पर दृष्टि टिका दी। वहाँ अम्बर के पनघट में डूबे तारे बाहर निकल रहे थे। उनका अस्तित्व चन्द्रमा के सम्मुख कुछ भी नहीं था। जैसे ईश्वर की सत्ता के सामने मनुष्य अस्तित्वहीन एक माँस का लोथड़ा है। अदृष्ट शक्ति के सम्मुख उसकी सारी योजनायें पानी भरने लगती हैं।

---

८

नाई को बीघापुर भेजकर नवलबाबू निश्चिन्त हो गये थे। रात भर वे न जाने क्या-क्या सोचते रहे। उन्हें प्रभात पर बहुत क्रोध था। वे निश्चय कर चुके थे कि प्रभात ने उनकी अवज्ञा कर जो सबसे बड़ा अपराध किया है उसकी सजा वे उसे जरूर देंगे। अभी अगहन चल रहा है। फागुन में माधवी का ब्याह होगा। तब तक के लिए मैं यह करूँगा और प्रभात को सीधा करने का एक तरीका भी यही है कि प्रतिमास उसे मैं सौ रुपये भेजता हूँ वे नहीं भेजूँगा। देखूँ वह अपना खर्च कैसे चलाता है? लेकिन यह बात वे जमुना को नहीं बतलाना चाहते थे। वे जानते थे कि ऐसी बातें स्वयं ही अपने आप लोगों के कानों में पहुँच जाती हैं। जब आदमी कुछ बनाने चलता है तो लोग उसकी ओर आँख उठाकर भी नहीं देखते; किन्तु जब वह बिगाड़ने की स्थिति में होता है तो जनसमुदाय की आँखें एकटक उसे निहारने लगती हैं।

रात बीत गई। नवलबाबू बहुत थोड़ा सो पाये थे। काफी रात तक वे जागते रहे और अपनी वर्तमान परिस्थितियों पर मनन में खोये रहे। प्रातः की चाय आज उन्होंने अन्दर कमरे में नहीं बाहर चबूतरे पर पी। इसका एक कारण था। उनकी उत्सुकता उन्हें बाहर खींच लाई थी कि नाई आता ही होगा। अगर रेल से आयेगा तो नौ बजते-बजते यहाँ पहुँच जायेगा। ऐसा सोचते क्षण उनकी दृष्टि बायीं कलाई में बँधी रिस्टवाच पर पड़ी। छोटी सुई आठ और नौ के बीच में थी और बड़ी छः को पार कर नम्बर सात पर पहुँच रही थी। वे सामने दूर तक निगाह दौड़ाते हुये यह सोच-

कर अखबार देखने लगे। बस अब आता ही होगा नाई। क्या जहाँ मुर्गे नहीं बोलते वहाँ सवेरा नहीं होता? एक क्षण में ही उनकी दृष्टि फिर सामने की ओर जा बिछ गई और मन में विचारों का प्रवाह प्रबल वेग से बहने लगा कि आखिर प्रभात ने अपने को समझ क्या रक्खा है? वह है किस खेत की मूली जब चाहूँ उखाड़कर फेंक दूँ। लेकिन यह सोच कर रह जाता हूँ कि आदमी जो पौधा अपने हाथों लगाता है फिर वह उसे कभी उखाड़ना पसंद नहीं करता। यह मनुष्य का परम्परागत स्वभाव है। फिर मैं इससे परे कैसे रह सकता हूँ? आजकल जमाना पैसे का है। हर आदमी को पैसा चाहिये। वही उसकी भूख है वही उसकी प्यास। पूरन देहाती आदमी है और गाँववाले पैसा दाँत से पकड़ते हैं। तीन हजार रुपये की मोटी रकम पाकर खुशी से ऐसे बावरे हो जायंगे मानो उन्हें बहुत बड़ा खजाना मिल गया हो। ऐसी स्थिति में वहाँ किसे इतनी फुरसत होगी जो यह सोचने बैठेगा कि तिलक चढ़ाने भाई नहीं नाई आया है। और मान लो अगर किसी ने पूछ ही लिया तो मैंने उस छत्तीसे नाई को खूब सिखा-पढ़ाकर पक्का कर दिया है। वह बहाना बनाकर सबको जचा देगा कि प्रभात बीमार है इसलिए नहीं आ सका।

नवलबाबू इसी तरह अपनी उधेड़-बुन में लगे थे। नौ बज गये उन्हें पता ही नहीं चला। सहसा जब घड़ी पर दृष्टि पड़ी तो देखा साढ़े-नौ बज रहे थे। ऐं! क्या बात हो गई? नाई नहीं आया? अस्फुट स्वर में उनके मुँह से निकल पड़ा। वे हाथ में अखबार पकड़े चबूतरे पर टहलने लगे। बार-बार सामने देखते फिर घड़ी देखने लगते। जब संतोष नहीं हुआ तो निकटवर्ती फायर स्टेशन से जाकर रेलवे इन्क्वायरी को टेलीफोन किया पता चला गाड़ी अस्सी मिनट लेट है। तब वे सोचने लगे नाई शायद किसी लारी से आ रहा हो यह भी तो हो सकता है। फायर स्टेशन से वे सीधे घर आये और चुपचाप अपने कमरे में जा एक कुर्सी पर बैठ गये। जमुना ने आकर पूछा कि नाई अभी नहीं आया? उत्तर में उन्होंने गाड़ी के लेट होने की बात कह दी।

लगभग साढ़े-दस बजे नाई ने बाहर से आवाज़ दी—और साथ ही उनके सामने आकर खड़ा हो गया। उसके सिर पर सफेद चादर में बँधा हुआ थाल था। नवलबाबू देखते ही चौंक गये। अखबार हाथ से छूट कर फर्श पर गिर पड़ा। वे उठकर खड़े हो आश्चर्य चकित मुद्रा में नाई से पूछने लगे—"क्यों? यह थाल कैसा लाये हो?"

"कैसा नहीं मालिक लड़केवालों ने फलदान वापस कर दिया है। भाई के होते हुये मैं तिलक चढ़ाने गया। इसमें उन लोगों ने अपनी तौहीनी समझी। जाति-बिरादरीवाले पूरन महाराज की खिलाफत करने लगे। सबेरे जब मैं चलने को हुआ तो मुझे सब सामान वापस दे दिया गया।" नाई ने यह सब खड़े-खड़े कहा फिर थाल फर्श पर रख चादर खोलता हुआ बोला —"अपनी अमानत सम्भाल लीजिये सरकार। मैं भी अपने घर जाऊं। बड़े लड़के की तबियत खराब है। मन उसी के पास लगा है।"

लेकिन नवलबाबू ने जैसे नाई की बातों को सुना ही नहीं। वे अपनी बात कहने लगे। उनके स्वर में व्यस्तता थी और मस्तिष्क में एक बहुत बड़ी उलझन। उनकी सारी देह में जैसे चीटियाँ काट रही थीं। वे बोले—"हाँ क्या हुआ वहाँ? पूरन महाराज ने क्या कहा तुमसे?"

नाई सम्हलकर बैठ गया और विस्तारपूर्वक वहाँ की बातें बतलाने लगा। नवलबाबू सुनते जा रहे थे। उन्हें ऐसा लग रहा था कि यह उनकी जिन्दगी में एक बहुत बड़ा अपमान हुआ है। जिस पैसे पर वे गर्व करते थे उसने उनका साथ नहीं दिया। थोड़ी देर बाद नाई चला गया और वे सोचने लगे कि व्यक्ति का मोल व्यक्तित्व से ही आँका जा सकता है पैसे से नहीं।

जमुना ने जब यह दुखद समाचार सुना तो वह एकदम काठ हो गई। और माधवी न प्रसन्न हुई थी फलदान जाते समय और न दुखी हुई वापस आ जाने पर। उसके सामने केवल यह दृष्टिकोण रह गया था कि वह कठपुतली है और बाप मदारी है। वह जैसे नचायेगा नाचना पड़ेगा। उसे कुछ भी अच्छा नहीं लगता था। भाई प्रभात से उसे श्रद्धा थी; लेकिन

वह उससे दूर बैठा था। और माँ-बाप से क्या कहती वे एक तो उसके मर्म को समझते नहीं और दूसरे वह बड़ों से अशोभनीय बातें करने में धृष्टता समझती थी।

उस दिन घर में चूल्हा नहीं जला। लगता था किसी की मौत हो गई है उसका यह मातम है। जमुना गमगीन बैठी थी। माधवी अभी रसोई में पहुँच भी नहीं पाई थी कि बाप ने मना कर दिया उनकी तबियत अच्छी नहीं है वे खाना नहीं खायेंगे।

नवलबाबू का सारा क्रोध एक ओर केन्द्रित हो गया था और वह केन्द्र-बिन्दु था प्रभात। उन्हें रह-रहकर यह बात कचोट उठती कि सारा काम प्रभात के ही कारण बिगड़ा है। ईश्वर ऐसी संतान दुश्मन को भी न दे। जिसके कारण जीते जी नर्क भोगना पड़े। जो हमेशा प्रतिष्ठा पाता चला आया है वह अपमान के घूँट पीकर पागल हो जायेगा। मैं भी पागलपन का अनुभव कर रहा हूँ और यह सोच रहा हूँ कि एक बार बदनामी का दाग जो दामन में लग गया तो मौत के आँसू भी उसे नहीं धो सकेंगे। मैं पूरन के पास जाऊँगा। उनको समझाऊँगा अधिक रुपये देने का लालच दूँगा और पूरी-पूरी कोशिश करूँगा कि बिगड़ी बात बन जाय, किसी को कानोंकान खबर न हो।

दोपहर ढलने को आ गई; लेकिन नवलबाबू कमरे से बाहर नहीं निकले। उनके मस्तिष्क में उथल-पुथल मच रही थी। वे उस समय बहुत परेशान थे।

---

## ६

शालिनी थी पान-फूल की तरह सुकुमार और कोमल। उसका रंग धुली चाँदनी जैसा गोरा था। मुख पर एक कान्ति थी जो हमेशा उदासी में ही डूबी रहती। नंगी नासिका और सूने कान होने पर भी उसके चेहरे की आकृति देखते ही बनती थी। उसमें तनिक भी गुमान नहीं था। कभी-कभी जब वह प्रसन्न होती और उसके चेहरे पर हँसी फूट पड़ती तो लगता फूल झर रहे हैं। सुडौल देह और साधारण लिबास में वह इतनी सुन्दर लगती थी मानो साक्षात् अप्सरा हो। लेकिन इतना सब होने पर भी उसके सौभाग्य का सूरज अस्त हो गया था। वह प्रगट में हँसती-बोलती और गृहकार्यों में संलग्न रहती; किन्तु मन ही मन रोया करती थी अपने भाग्य की विडम्बना पर।

भाई देवराज बहन को पुत्रीवत् स्नेह करता; लेकिन सावित्री का कलेजा पत्थर का था। उसमें एक भी सूराख नहीं था। जिसमें दया और स्नेह का नीर भरता। वह एकदम कठोर थी। बाहर में कुछ नाम और अन्दर में बिल्कुल ज्वालामुखी। वह आठ-वर्षीया पुत्री जालपा को सदैव इस बात के लिए मना करती रहती कि वह बुआ शालिनी के पास न बैठे और घर के किसी भी काम में उसका हाथ न बँटाये। मगर जालपा स्नेह और दुलार की भूखी थी। वह जब पाठशाला जाती तो बुआ से चोटी बँधवाती और हँसते-हँसते घर से बाहर निकल जाती। फिर जब वापस लौटती तो आते ही उससे खाना माँगती। इस भाँति उसी के साथ वह बातों तथा खेल-कूद में अपना समय बिताया करती।

सावित्री का रंग एकदम काला था आबनूस की तरह। वह बेहद लम्बी थी, दुबली-पतली हड्डियों की ठठरीमात्र। ऐसा लगता था कि क्रोध के आधिक्य ने उसका सारा खून जला दिया है। वह जबान की इतनी कड़ी थी कि सीधे भी बात करती तो मालूम होता कि लड़ रही है। शालिनी से वह कभी अच्छी तरह बात नहीं करती। कदम-कदम पर उसे टोकती रहती और गलतियाँ निकालती रहती। यद्यपि देवराज को यह बुरा लगता था; लेकिन अधिकांश वह चुप ही रहता। वह जानता था कि सावित्री एक जहरीली नागिन है। अगर डसेगी नहीं तो इतनी जोर से फुफकार छोड़ेगी कि उससे ही आदमी काला पड़ जायेगा।

रात को जब देवराज ने घर में आकर बतलाया कि वह दो महीने के लिए नौकरी से अलग कर दिया गया है तो सावित्री बात पूछना और सहानुभूति दिखलाना सब कुछ भूल छूटते ही यह कहने लगी—"घर में जब एक आदमी नसूढ़ा होता है तो उसका असर रोजी-रोजगार पर पहले पड़ता है। तुम्हें बुरा तो जरूर लगेगा; लेकिन मैं मुँह तक आई बात कहकर ही रहूँगी। जबसे तुम्हारी बहन रानी ने घर में पैर रक्खा है आये दिन एक न एक मुसीबत खड़ी ही रहती है। मेरी·····।"

"सावित्री! जबान सम्हालकर बात करो। मैं देख रहा हूँ तुम्हारी हरकतें दिन पर दिन बढ़ती जा रही हैं। खबरदार अब जो ऐसा कहा तुम्हारी जबान खींच लूँगा।" देवराज गुस्से से थर-थर काँपने लगा। वह उठकर खड़ा हो गया और सावित्री दोनों हाथों से अपना सिर पीटने लगी। वह चिल्ला-चिल्लाकर कह रही थी—"तुम मेरी जबान खींचोगे। कह देती हूँ मुझसे बात मत करना। खरी-खरी कहो तो चूना-सी लगती है। अभी क्या अभी तो दो महीने के लिए नौकरी से जवाब हुआ है। देखते जाओ एक दिन बर्खास्त न कर दिये जाओ तो मेरा नाम सावित्री नहीं। मुझे रुआब दिखाते हो और बहन से कुछ नहीं कहते जो सिर पर पहाड़ बनी बैठी है। मैं·····।"

"सावित्री! जबान बन्द कर लो।" देवराज ने जोर से चिल्ला-

कर कहा।

शालिनी उस समय रसोई में थी। जालपा उसके पास बैठी आटे की लोइयाँ काट रही थी। दोनों बुआ-भतीजी सहमकर बाहर आ गई और उस कमरे में पहुँची जहाँ लालटेन टिमटिमा रही थी और साक्षात् काली का रूप बनाये सावित्री सामने खड़े पति से कह रही थी—"अरे जाओ मुझे क्या जलाते हो। जो अपना घर देखकर नहीं चलता उसकी यही गति होती है।"

शालिनी अपनी भाभी के पास आ गई और घबड़ाहट के स्वर में पूछने लगी—"क्या हुआ भाभी? क्या बात हो गई, तुम बिगड़ क्यों रही हो?"

सावित्री क्रोध से जल रही थी। वह उसको झिड़ककर बोली—"जाओ अपना काम करो। तुम तो यह चाहती ही हो कि घर में रोज हाय-हाय मचे। मेरे मुँह न लगो नहीं तो कुछ कह दूँगी तो तुम्हारे भाई को बुरा लगेगा।"

शालिनी हैरान हो उठी। उसकी समझ में कुछ भी नहीं आया कि आखिर मामला क्या है? वह धीरे से शान्त स्वर में बोली—"तो मैंने क्या कर दिया भाभी, मुझसे कोई गलती हो गई है क्या?"

सावित्री ने कुछ कहने के लिए अपना मुँह खोला ही था कि देवराज बहन की ओर उन्मुख हो बोल उठा—"नहीं शालिनी कोई बात नहीं। तुम जाओ अपना काम करो। आज डाकखाने से शाम को नोटिस मिला है—मैं दो महीने के लिए नौकरी से अलग कर दिया गया हूँ। वही कह रहा था कि बात सुनना तो दूर रहा श्रीमती जी आपे से बाहर हो गईं और·····।"

"देखो। मेरा नाम न लेना मैं चुप नहीं रहूँगी एक की अठारह सुनाऊँगी, जो ऐड़ी से चोटी तक जहर-सी लगेगी।" दोनों हाथ नचाती हुई सावित्री यह कहने के साथ खड़ी हो गई और तेजी से कदम रखती हुई कमरे से बाहर जाने लगी।

देवराज ने एक ठंडी साँस ली और लम्बे लहजे में बोला—"जान बख्शो बाबा जाओ भी।"

देवराज का अनुमान था कि सावित्री जा चुकी होगी वह मेरी बात क्या सुनेगी। उसका लक्ष्य शालिनी की ओर था। वह उससे कुछ कहने ही जा रहा था कि चौखट पर खड़ी हो पीछे घूमकर सावित्री बोल उठी—"हाँ! हाँ! मैं तो जाती ही हूँ; लेकिन याद रखना कि दूसरे की आत्मा दुखानेवाला कभी सुख की नींद नहीं सो पाता। तुम जिन्दगी भर ऐसे ही तबाह और परेशान रहोगे। मुझसे कहते हो जाओ जान बख्शो। मैं तेरे घर की कुछ हूँ ही नहीं। जब देखो तब यों ही जली-कटी सुनाते रहते हो।" यह कहकर वह धाड़ मारकर रो पड़ी और रोते-रोते वहाँ से चली गई।

जालपा माँ को रोते देख उसके पीछे भागी; लेकिन उस निर्मम पति ने उसको हाथ से पीछे ढकेल दिया और अंगारों पर पैर रखती हुई सीढ़ियों पर जा शहन्नी में साँस ली।

बालिका गिरकर रोने लगी। लपककर शालिनी ने उसको अपनी गोद में उठा लिया। वह उसको चुप कराने लगी देवराज भी वहां आ गया था। वह शालिनी को नोटिस मिलने का कारण बतलाने लगा। जिसे सुनकर शालिनी के होश-हवास गुम होने लगे।

× × ×

उस रात किसी ने भोजन नहीं किया। शालिनी ने भाई को बहुत समझाया। भाभी की खुशामद की; लेकिन दुःखमय वातावरण खुशी में नहीं बदल सका। अतः उसने भी कोर नहीं तोड़ा, जालपा को खिला-पिला रसोई बढ़ा चारपाई पर जाकर लेट रही।

जाड़े की चाँदनी रात बर्फ जैसी ठंडी हो गातों में कँपकँपी पैदाकर रही थी। शीतल जुन्हाई छत पर रुपहली चादर की भांति बिछ रही थी। शहन्नी के किवाड़ खुले थे। कलेजा कँपा देनेवाली ठंडी हवा उसमें प्रविष्ट हो रही थी; लेकिन सावित्री सोचने में व्यस्त थी। उसकी आँखों से चिन्गारियाँ निकल रही थीं और सारा खून क्रोधावेश के कारण गरम

हो गया था। स्वयं उसे ही महसूस होता कि वह खौल रहा है। वह घर की परिस्थिति पर विचार न कर हवा में गाँठें बाँध रही थी कि नहीं, यह कभी नहीं होगा। मैंपर् की मालकिन हूँ घर में मेरा अदल चलेगा। देखो तो उनकी (देवराज) मति न जाने क्यों मारी गई है? भला कहती हूँ बुरा लगता है।

सावित्री इधर क्रोध से जली-भुनी इसी तरह न जाने क्या-क्या सोच रही थी और उधर देवराज के पास लेटी थी शालिनी। वह पड़ा-पड़ा गृह-कलह के प्रति गहरे विचारों में डूब रहा था कि सावित्री में तनिक भी क्षमा तो नहीं है उसकी उच्छृंखलता दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। किसी की बात पूरी सुने बिना बीच में बोल उठना और उल्टी-सीधी दलीलें करना उसकी आदत में शुमार है। कितने बड़े अफसोस का विषय है कि उसने मेरा दुःख-दर्द तो नहीं समझा और बीच में कलहपात मचाकर चित्त को और भी अशांत कर दिया। कैसी होती हैं वे स्त्रियाँ जो गाढ़े समय में पति का दाहिना हाथ बनकर चलती हैं। एक मैं हूँ बदनसीब जिसके पल्ले ऐसी पत्नी पड़ी जो बैठी बैठे हुकूमत जानती है। और जख्मों पर मरहम लगाने की अपेक्षा मिर्चें छिड़क कर कहती है कि दोषी तुम हो। कहाँ तक सोचूँ और कहाँ तक झींकूँ? जिन्दगी एक अंधकारमय बन गई है मुझे लगता है कि पतन सामने आ रहा है। उसके बचाव के लिए मेरे पास कोई साधन नहीं। जहाँ शान्ति है वहीं वृद्धि है, विपत्ति है और समृद्धि है। लेकिन मेरे घर में अशान्ति बरस रही है मैं जानता हूँ कि इसका परिणाम बहुत भयंकर होगा; मगर विवश हूँ क्या करूँ? सावित्री को जितना समझाने की कोशिश करता हूँ उतना ही वह चौंकती है। शालिनी उसको एक बहुत बड़ा भार मालूम होती है। वह नहीं चाहती कि वह उसके साथ रहे; किन्तु मैं अपने कर्तव्य पर अडिग हूँ। वह दुनिया से न डरे; लेकिन मैं डरता हूँ इसीलिए फूक-फूंककर कदम रखता हूँ?

और भाई तथा भाभी से भी अधिक चिन्तनीय स्थिति थी शालिनी की। वह चुपचाप आँखें मूँदे लेटी थी। उसे आज की घटना बार-बार याद आ जाती और वह सोचने लगती कि इस झगड़े का मूल कारण मैं हूँ। भैया

खून के रिश्ते को अधिक महत्त्व देते हैं और भाभी मुझे पराया हाड़ समझ-कर घर से बाहर फेंक देना चाहती हैं। मैं घर में ही नहीं समाज में भी उपेक्षिता हूँ। मेरे पास अपना कहने को क्या है? तन है और मन है। मैं सेवा-भाव से भाभी को प्रसन्न रखने का यत्न करके हार चुकी। उनकी भौंहें कभी सीधी ही नहीं होतीं। आत्म-हत्या को मैं कायरता समझती हूँ। आखिर किस तरह अपनी जिन्दगी बिताने की राह बनाऊँ। सभी ओर बाधायें हैं। भैया कहते हैं कि शालिनी तुम पढ़ लो। दसवीं पास कर लो। उसके बाद धीरे-धीरे आगे अपनी पढ़ाई जारी रखना। कोशिश करके मैं तुम्हें किसी प्राइमरी स्कूल में लड़कियों को पढ़ाने के लिए नियुक्त करा दूँगा। इसके लिए वे बेचारे बहुत कोशिश करते हैं। सवेरे और रात को मुझे पढ़ाते हैं। गाँव की पाठशाला में मैंने दर्जा चार तक ही शिक्षा पाई थी और अब आठवीं कक्षा की अँग्रेजी की किताब पढ़ रही हूँ इससे हिम्मत बँधती है, आशा होती है कि शायद किसी दिन भैया का सपना साकार हो जाय। लेकिन भाभी उग रहे पौधे की जड़ में तेजाब छिड़क रही हैं। "विनाशकाले विपरीत बुद्धि" जैसी उनकी स्थिति हो रही है। क्या करूँ? और भी तो कोई आगे-पीछे नहीं है जहाँ चली जाऊँ? ससुराल एक सपना बनकर रह गई है और पीहर का फूटा खण्डहर मेरी ही भाँति रो रहा है। काश! जिसने जिन्दगी दी है वही अगर दुःख-दर्द का साथी बन जाता तो दुनिया में कोई भी अनाथ नहीं रहता, कहीं पर भी संघर्ष नहीं होता। सर्वत्र शान्ति के बादल बरसते रहते और यह संसार सीधा-सादा स्वर्ग बन जाता, जिससे देवता भी ईर्षा करने लगते।

शालिनी को अपने तन-बदन का होश नहीं था। वर्षों पुरानी चीथड़े-चीथड़े हो रही रजाई ओढ़ने के लिए उसको सावित्री ने दे रक्खी थी। इस पर उसने कभी क्षोभ नहीं प्रकट किया। इस समय रात बीत रही थी। ठंड बढ़ रही थी और हवा बह रही थी पैनी होकर। शालिनी विचारों की दुनिया में मग्न थी। रजाई पैताने पड़ी थी। उसको ओढ़ने का उसे बिल्कुल ध्यान ही नहीं था।

---

सबेरा होते ही प्रभात कौशिक के घर जा पहुँचा और उसके कमरे में बैठे धीरे से पूछने लगा—"देवराज के सम्बन्ध में तुमने क्या सोचा है कौशिक? निर्धनता आदमी के जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप है। और बेकारी तथा भुखमरी के युग में आदमी इस शाप से मुक्त कभी नहीं रह सकता। मैं कोशिश करूँगा। तुम भी अपने प्रयत्न से पीछे न रहो। देवराज को कम-से-कम दो ट्यूशनें मिल जायँ या कहीं पार्ट टाइम वह काम करने लगे तो मुझे बहुत बड़ा संतोष हो जाय। किसी का दुःख मुझसे देखा नहीं जाता है। ऐसे समय मन में यह भावना उठने लगती है कि युवराज सिद्धार्थ ने जिन्दगी के सुखों को तिलान्जलि इसीलिए दे दी थी कि उनके हृदय में दुनिया का दुःख-दर्द समाकर रह गया था। कहीं मैं भी पागल न हो जाऊँ यही सोचने लगता हूँ।"

कौशिक हँस पड़ा वह मित्र के कन्धे पर हाथ मार हँसता हुआ कहने लगा—"प्रभात! जिन्दगी की राह काँटों का मेला है। उस पर हँसते-हँसते चलना और काँटा चुभ जाने पर भी उफ न करना यही इन्सानियत है। जिनके मन में दूसरों के लिए दया होती है उनकी मदद ईश्वर करता है। पहले जब मेरा और तुम्हारा साथ नया-नया हुआ था तो मैं तुम्हें केवल कोरा भावुक ही समझता था; लेकिन सम्पर्क ने मुझे यह दृढ़-विश्वास दिला दिया है कि कर्त्तव्य-परायणता के समय तुम भावनाओं को भूल जाते हो और कर्त्तव्य की वेदी पर सब कुछ उत्सर्ग कर देने के लिए तत्पर हो जाते हो। आओ हम लोग देवराज के घर चलें। हमारे जाने से उसकी

कुछ राहत मिलेगी। वह कुछ देर के लिए अपना दुःख भूल जायेगा।"

इस तरह दोनों मित्र परस्पर बातें करते हुये देवराज के घर जाने के लिए उद्यत हो उठ खड़े हुये। तब तक गौरी ने टोक दिया—"अरे कहां चल दिये प्रभात? चाय तैयार हो रही है। बैठो ऐसी क्या जल्दी है और कहीं तुम्हारे घर का कुछ समाचार मिला?"

प्रभात वहीं बैठ गया और सामने पड़ी मेज पर दाहिना हाथ रखता हुआ बोला—"चाची जी आप सच ही कहती हो और यही आज दस तारीख होने को आ गई; लेकिन पिताजी का मनीआर्डर नहीं मिला। शायद मुझको सजा देने के लिए उन्होंने यह पहला कदम उठाया है।"

"हैं! क्या कहा नवलबाबू ने रुपया नहीं भेजा। सच, वे नहीं आता आखिर तुम्हारे सिवा उनके और बैठा ही कौन है?....."

आश्चर्य से चौंकती हुई गौरी ने प्रभात से यह कहा और उसकी ओर देखने लगी। बीच में ही रह गई बात तक रामचरण बाबू भी वहां आ गये थे। वे सामने दालान में बैठे दोनों की बातें सुन रहे थे। आते ही बोल उठे—"प्रभात! तुम्हारा सोचना सच है नवलबाबू रुपया जरूर भेजेंगे और देर-सबेर तो चलती ही रहती है।"

रामचरण बाबू प्रभात और कौशिक के पास आकर बैठ गये। गौरी चाय लेने चली गई। कौशिक को बाप की बातें सुनकर सोचने का मौका मिल गया था। वह धीरे से बोल उठा—"हां! यह भी हो सकता है कि मनीआर्डर भेजा गया हो और प्रभात को अभी प्राप्त न हो सका हो। डाकखाने की तो माया ही निराली है। देखो तनिक-सी भूल के कारण बेचारे देवराज को दो महीने के लिए सस्पेंड कर दिया गया। बड़ी आधागर्दी है। गरीब की कोई नहीं सुनता। न जाने आजकल लोगों को क्या हो गया है कि कोई एक-दूसरे को फूटी आंखों नहीं देखना चाहता। हर बड़ी मछली छोटी मछली को समूचा ही निगल जाना चाहती है। पता नहीं देश का भविष्य क्या होगा।"

अब बातचीत का प्रसंग दूसरी ओर मुड़ गया था। तीनों में देवराज

के सम्बन्ध में बातें होने लगी। थोड़ी देर बाद जब गौरी चाय लेकर आई तो वह भी उसमें भाग लेने लगी।

चाय समाप्त होने पर प्रभात देवराज के घर जाने के लिए तैयार होकर खड़ा हुआ तो कौशिक भी उसके साथ जाने का आयोजन कर माँ गौरी से बोला—"माँ! मैं देवराज के घर जा रहा हूँ अभी लौट आऊँगा।"

लेकिन गौरी को तब तक एक बात का स्मरण हो आया। वह तत्क्षण ही बोल उठी—"अरे हाँ अच्छी बात आ गई। डाक्टर सेठ के यहाँ चले जाओ। अपने पिताजी की दवा तो बनवा लाओ। कल से कुछ आराम है। गाँठों में दर्द कम रहा और रात को पूरी नींद भी आई थी। चले जाओ बेटा फिर देर हो जायेगी। दस बजे उन्हें बाहर जाना है।"

माँ की बात सुनकर कौशिक दवा लेने चला गया। उसका मन था कि प्रभात भी उसके साथ चले; लेकिन बाहर सड़क पर आकर प्रभात दूसरी ओर मुड़ गया। कौशिक ने पूछा तो उसने जवाब दिया—"तुम्हें देर लगेगी। मैं अकेला ही देवराज के घर जा रहा हूँ।" यह कहकर प्रभात ने आगे कदम बढ़ा दिया। वह कौशिक के उत्तर की प्रतीक्षा नहीं कर सका।

× × ×

प्रभात जब देवराज के घर पहुँचा तो वह आँगन में बैठा जालपा को उसकी पाठ्य पुस्तक का एक सबक पढ़ा रहा था। शालिनी नल पर कपड़े धोने में व्यस्त थी और रागिनी का कहीं पता नहीं था। प्रभात ने जालपा से पूछा—"तुम्हारी माँ कहाँ है जालपा?"

इस पर जालपा के बोलने से पहले ही देवराज कहने लगा—"गोमती नहाने गई है, देर हुई है, आती ही होंगी।"

प्रभात चारपाई पर देवराज के बराबर जाकर बैठ गया और धीरे से पूछा—"कहो भाई कुछ सोचा? मेरा मन आप के पास ही लगा रहा। मैं पूरी-पूरी कोशिश करूँगा कि किसी प्रकार ये दो महीने आप के साथ खैरियत से बीत जायें। आज ही अपने मित्रवर्ग में इस बात की चर्चा करूँगा कि कम-से-कम दो ट्यूशन तो अभी फिलहाल आप को मिल ही

जायें। इसके अतिरिक्त आप भी प्रयत्न कीजिये; क्योंकि कोशिश करने से बड़े से बड़ा काम भी आसान हो जाता है।"

देवराज ने एक दीर्घ उच्छ्वास ली और प्रभात के मुख पर दृष्टि टिका धीरे-धीरे कहने लगा—"प्रभात! विपत्ति के समय आदमी के अपने भी पराये हो जाते हैं। तुमने मेरा इतना ख्याल रक्खा यहाँ तक दौड़े आये। यह मेरा बहुत बड़ा सौभाग्य है। दुनिया में अकेला आदमी कुछ नहीं कर सकता। सहयोग और सहानुभूति उसके जीवन के दो सबसे बड़े आदर्श हैं। मुझे तुम पर विश्वास है कि इस विपत्ति के समय में तुम मेरा पूरा-पूरा साथ दोगे। मैं कहाँ जाऊँ और क्या कोशिश करूँ? समझ में नहीं आता। अब तुम्हीं लोग सहारा दोगे तो उठकर खड़ा हो जाऊँगा वरना मेरी जिन्दगी में रोना और सिर धुनना तो लिखा ही है।"

प्रभात और देवराज की बातचीत चल रही थी। सावित्री अभी तक गोमती स्नान करके नहीं लौटी थी और शालिनी बर्तन मल उन्हें साफ कर अन्दर रख आई। फिर भाई के पास आकर जालपा से बोली—"जालपा! जाओ थोड़ा दूध ले आओ प्रभात बाबू के लिए चाय बनानी है।"

यह सुनकर देवराज ने बहन के हाथ से गिलास ले लिया और उठकर जाता हुआ बोला—"शालिनी तुम चाय के लिए पानी चढ़ाओ मैं अभी दूध लेकर आता हूँ। जालपा कहाँ जायेगी, आधा दूध फैला देगी।"

देवराज जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाता हुआ घर से बाहर निकल गया। जालपा भी इस लालच से बाप के पीछे दौड़ी कि मुझे एक-दो पैसे मिल जायेंगे जिनके कम्पट खरीदूँगी। खुद खाऊँगी और स्कूल में जाकर अपनी सहेलियों को दूँगी।

शालिनी ने चूल्हा नहीं जलाया। वह आँगन में रक्खी अँगीठी में कोयले डाल उसे परचाने लगी। कोयला घर की लकड़ी का था कल रात का बुझाया हुआ, एकदम गीला। काफी प्रयत्न करने के बाद भी उसमें आग नहीं लग रही थी। धुआँ उठ रहा था कड़ुआ-कड़ुआ, जो शालिनी की आँखों में भर रहा था और उसके आँसू निकल रहे थे।

प्रभात शालिनी से लगभग दो गज की दूरी पर बैठा था। वह सहानुभूति भरे मीठे शब्दों में बोला—"क्या बात है शालिनी? उठ क्यों नहीं आतीं? चाय की कोई जरूरत नहीं। मैं अभी-अभी कौशिक के घर से पीकर आ रहा हूँ। अब एक काम करो ज्यादा-सा मिट्टी का तेल छिड़ककर दियासलाई लगा दो और दूर हट जाओ। कोयले अपने आप ही सुलग-सुलग कर जलेंगे। जानमारी करने से क्या फायदा?"

शालिनी ने वैसा ही किया जैसा प्रभात ने बतलाया था। अँगीठी में मिट्टी का तेल ऊँची लपट में जलने लगा, उसकी दुर्गन्ध उड़ी और काला-काला बदबूदार धुआँ आँगन में छाकर रह गया। उसके आँखों में आँसू आ गये जिन्हें आँचल से पोंछती हुई वह प्रभात के पास जाकर बैठ गई और दुखी स्वर में कहने लगी—"प्रभात बाबू! भैया दो महीने के लिए नौकरी से अलग कर दिये गये हैं। उनकी मदद कीजिये कोई भी छोटा-मोटा काम दिलवा दीजिये, मैं आपका आभार मानूँगी।"

प्रभात तत्क्षण ही बोल उठा—"शालिनी तुम्हारे कहने की जरूरत नहीं मुझे स्वयं इसका ध्यान है और मैं·····।"

प्रभात की बात अधुरी ही रह गई; क्योंकि शालिनी फिर कहने लगी थी—"छोटी-छोटी बातों को लेकर भाभी भैया से झगड़ पड़ती हैं। आजकल वे बहुत परेशान हैं। देखते नहीं बेचारों की देह सूख कर काँटा हो गई है। न जाने वे मेरा पक्ष लेकर नाहक ही भाभी को क्यों नाराज कर देते हैं? मैं किसी की बातों को बुरा नहीं मानती। भाभी बड़बड़ाया करती हैं; लेकिन मैं कान नहीं देती। इस पर भी चैन नहीं है प्रभात बाबू। काश! मेरी जिन्दगी का अन्त हो जाता तो घर की कलह हमेशा-हमेशा के लिए शान्त हो जाती।"

"चुप रहो! छिः छिः कैसी पागलपन की बातें करती हो शालिनी। तुम्हें जिन्दगी को भार नहीं एक संग्राम समझना चाहिये। जिसमें···।"

सहसा प्रभात बोलते-बोलते रुक गया; क्योंकि हाथ में पीतल की गंगाजली लटकाये सावित्री आँगन में आकर खड़ी हो गई थी। उसने

देखा कि अँगीठी खूब परच रही है, कोयले दहक रहे हैं और शालिनी चारपाई के पास फर्श पर बैठी प्रभात की बातें सुनने में मगन है। वह प्रभात से हमेशा जली-भुनी रहती थी; क्योंकि वह मुँह देखाकर कभी पसंद नहीं करता। हमेशा दो टूक बात कह देने की उसकी आदत थी। वह गगाजली एक ओर रख दोनों हाथ कमर पर धर आँखें तरेरकर बोली—"मैंने कहा कि यह अँगीठी क्यों जल रही है मालूम रहता? क्या तीर्थ-धाम में आते हैं? तुम्हें तनिक भी कदर नहीं है किसी चीज की।"

शालिनी जल्दी से उठकर चली गई और बाल्टी-लोटा की केतली में पानी भरकर ले आई फिर केतली अँगीठी पर चढ़ाती हुई बोली—"प्रभात बाबू आ गये थे। भैया दूध लेने गये हैं। मैंने कहा था कि अभी-अभी तो कोयलों में आग लगी है।"

यह सुनकर सावित्री घूमकर वहाँ से चल दी। वह कह रही थी—"सो तो देख रही हूँ; भाई का मुँह पाकर हौसला बढ़ गया है यह कोई नई बात नहीं बहुत पुरानी है।"

शालिनी को ऐसी बातों पर चुप रहने में ही शांति मिलती थी। वह मौन थी; लेकिन प्रभात को सावित्री की बातें जहर-सी लगीं। वह कुछ कहना चाहता था कि तब तक देवराज हाथ में दूध भरा गिलास पकड़े आँगन में आ खड़ा हो गया।

चाय बनी! प्रभात के साथ देवराज ने भी पी। थोड़ी देर तक दोनों मित्रों में बातचीत होती रही। फिर जब प्रभात वहाँ से उठकर रास्ते में आया तो उसका सारा शरीर घृणा और क्रोध की अग्नि से जला जा रहा था। वह मन ही मन सोच रहा था कि मेरी इतनी उम्र हो गई; लेकिन सावित्री जैसी कठोर स्वभाव की स्त्री कभी नहीं देखी।

## १२

प्रभात के चित्त की उद्विग्नता दिन पर दिन बढ़ती ही जा रही थी। वह यूनिवर्सिटी अब नित्य नियम से नहीं जा पाता। नहीं तो पहले घंटों वहाँ के पुस्तकालय में बैठा रहता और अपने शोध कार्य में व्यस्त रहता। 'जाति-भेद और वर्ण-व्यवस्था' पर वह रिसर्च कर रहा था उसे उम्मीद थी कि अगले वर्ष थीसिस अवश्य पूरी हो जायेगी। वह पुराने विचारों को एकदम बदल देने के पक्ष में कभी नहीं था। और न उसका सिद्धान्त ही था कि बिल्कुल नये सिरे से किसी नये काम को आरम्भ किया जाय। वह चाहता था नये और पुराने विचारों में साम्य, जिसमें जन-जागरण और जग-कल्याण की भावनायें निहित हों।

जाति-भेद प्रभात के सम्मुख अपना कुछ भी महत्त्व नहीं रख पाता। वह पूरे देश को एक सूत्र में बँधा देखना चाहता था। यही उसकी अन्तः-प्रेरणा थी जो उसे अहर्निश प्रेरित करती रहती कि हमारे राष्ट्र से जाति-पाँति का भेद मिट जाय। पूरे देश में केवल एक जाति हो, न कोई किसी से ऊँचा और न कोई किसी से नीचा। रूढ़िवादी विचार और दकियानूसीपन को वह दूर से नमस्कार करता था। किन्तु समाज का अटपटा विधान उसकी राह में रोड़े अटका रहा था। उसके सम्मुख आजकल समस्याओं का जमघट लग रहा था। मालती का ब्याह गाँव में हो रहा है यह उसकी इच्छा के विरुद्ध था। वह सोचा करता कि तिलक चढ़ गया होगा। अब पूस का महीना चल रहा है। फागुन में उसका ब्याह हो जायेगा और वह अपनी बहन के लिए कुछ भी नहीं कर पायेगा। लगभग एक महीने से

ऊपर हो गया उसे कानपुर का कोई समाचार नहीं मिला। पिछले महीने खर्चा नहीं आया और इस महीने भी पिताजी कुछ नहीं भेजेंगे, ऐसी उसकी धारणा थी, अतः जीविकोपार्जन और अपने रिसर्च कार्य के लिए उसने प्रयत्न करके एक आफिस में चन्द घंटों के लिए नौकरी कर ली। दो घंटे प्रात. और दो घंटे सायं वह उसमें समय देता था। पचहत्तर रुपये मासिक वेतन तय हुआ इससे उसने ही नहीं, बल्कि गयारी ने भी संतोष की साँस ली।

शालिनी की भी समस्या प्रभात के लिए बहुत बड़ी थी। उसे बहुत दुःख होता जब उसके प्रति सोचने लगता कि उसकी सुकुमार भावनाओं को सावित्री किस तरह कुचल-कुचल देती है। युवती विधवा को इस बात के लिए विवश होना पड़ रहा है कि वह एकाकी, नीरस और शुष्क जीवन व्यतीत करे। कदम-कदम पर उसे प्रतारणा मिलती है। उठते-बैठते वह कोंची जाती है और हँसने-बोलने पर तो ऐसा प्रतिबन्ध है कि छींकते ही सावित्री उसकी नाक काटने के लिए तैयार हो जाती है। कैसी तकदीर की लकीरें हैं उसकी जो बनकर मिटी और मिटकर फिर बनते-बनते रह गई। जिस कुसुम को लता में लहलहाना चाहिये था वह धूलधूसरित होकर पददलित हो रहा है। फिर भी दुनिया दम भरती है अभी धर्म का बोलबाला है नहीं तो यह संसार रसातल को चला जाता।

देवराज को प्रभात ने अपने एक सहपाठी के यहाँ बच्चों के लिए शिक्षक नियुक्त करवा दिया। चार बच्चे थे सभी छोटे-छोटे। वे प्राइमरी कक्षाओं में पढ़ते थे। चालीस रुपया मासिक वेतन यद्यपि बहुत कम था; लेकिन देवराज को इतने में ही महान् संतोष था कि बेकारी से यह लाख दर्जे अच्छा है।

अब प्रभात और देवराज की घनिष्टता बहुत गहरी हो गई थी। वह जिस भाँति नित्य कौशिक के यहाँ जरूर जाता वैसे ही उसका नियम बन गया था कि दिन में जब तक वह देवराज से मिल नहीं लेता उसे चैन नहीं पड़ती। घर आने पर अक्सर ऐसे मौके आते कि वह शालिनी का पक्ष लेकर सावित्री से बोल उठता। परिणाम यह होता कि सावित्री मुँह फुला लेती

और जब वह चला जाता तो घंटों बड़बड़ाया करती। धीरे-धीरे यह स्थिति आ गई कि वह प्रभात की बात कहते ही फटकार देने लगी कि तुम कौन होते हो जी? किसी के घर के मामलों में दखल देने वाले। प्रभात को यह बहुत बुरा लगता; लेकिन देवराज उसे समझा-बुझाकर शान्तकर लेता था। और शालिनी भी मौका पाकर उससे भाभी के कहे हुये कटु शब्दों के लिए क्षमा याचना कर लेती। बस इससे प्रभात के मन का मैल धुल जाता और वह शालिनी तथा देवराज की समस्या को अपनी समस्या समझ उसके सुलझाने में लग जाता।

किन्तु दुष्ट प्रकृति के लोग काले को गोरा कहने लगते हैं, मान को अपमान और निन्दा को प्रशंसा में बदलते उन्हें तनिक भी देर नहीं लगती। सावित्री जब भी कभी शालिनी और प्रभात की बात करते देखती तो वह आग-बबूला हो जाती और बाद में पति से चिल्ला-चिल्लाकर कहती कि आँखें खोलो, कानों को साफ कर डालो, साफ-साफ कहे देती हूँ कि मेरे घर में यह नाटक नहीं चलेगा। जब घर में मैं मौजूद हूँ भाई है तो फिर शालिनी यह बेहयायी क्यों करती है कि आते ही प्रभात से चट-चट बातों में लग जाती है।

देवराज को यह सह्य नहीं होता तो वह बिगड़ उठता और सावित्री की खूब छीछालेदर करता। धीरे-धीरे यह बात सारे मुहल्ले में फैल गई कि शालिनी को प्रभात से लगाव है इसीलिए वह रोज दौड़कर उसके घर आता है। कहीं कुछ नेकबद न हो जाय इसलिए सावित्री बड़बड़ाती है तो देवराज बहन का पक्ष लेकर उससे लड़ता है और उसको भला-बुरा कहता है। प्रभात से उसको लालच है; क्योंकि वह अमीर बाप का बेटा है। देवराज की गरीबी को चाहे तो मिनटों में दूर कर सकता है।

गणेशगंज मुहल्ले में शालिनी और प्रभात की बदनामी उड़ रही थी। उसको फैलानेवाली कोई और नहीं सावित्री थी। ऐसा करने में उसका एक बहुत बड़ा स्वार्थ था कि किसी तरह शालिनी उसकी आँखों के सामने से दूर हो जाय। फिर वह अकेली अपने घर में राज्य करे।

अब गणेशगंज में ही नहीं अमीनाबाद के उन घरों में भी यह बात पहुँच गई कि शालिनी और प्रभात का एक-दूसरे से प्रेम है जो समाज के लिए एक बहुत बड़ा अपवाद बन सकता है। मगर कौशिक ने इस बात की ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया। उसने सुनी-अनसुनी कर दी और यह सोचकर टाल दिया कि यह व्यर्थ की अफवाह है। हर भला काम करने में पहले बुराई सामने आती है यही परिस्थिति इस समय प्रभात की है। गौरी और रामचरण बाबू इन फिजूल की बातों को सुनकर हँस देते और कहने लगते कि सावित्री को ऐसा नहीं करना चाहिये। न जाने वह कैसी नासमझ है जो बात का बतंगड़ बनाकर इधर-उधर कहती घूमती है, जिसमें कोई तत्त्व नहीं, कोई सार नहीं। वह मूर्खा इतना भी नहीं सोचती कि इससे उसके ही घर की बदनामी होती है। बड़े दुःख का विषय है यह।

इस तरह एक दिन शालिनी और प्रभात के सम्बन्ध की चर्चा कानपुर भी पहुँच गई। नवलबाबू और जमुना भयभीत हो उठे कि कहीं ऐसा न हो प्रभात एक दिन शालिनी को लाकर घर में बैठा दे। दम्पति इसी सोच में डूबने-उछलने लगे। उन्हें लगता था कि इस समय उनके भाग्य का सितारा डूब रहा है न जाने फिर कब उदय होगा?

पूरन महाराज के पास नवलबाबू जाकर लौट आये थे। वे उनको दो हजार और अधिक देने को तैयार थे; लेकिन पूरन राजी नहीं हुए। उनका कहना था कि मुझे समाज में रहना है, सबसे मिलकर चलना है। मैं लालच में पड़कर अपनी मिट्टी पलीत नहीं करूँगा।

एक ओर घर में जवान लड़की बैठी थी और दूसरी ओर यह भय सामने आ गया था कि अगर कहीं शालिनी के साथ प्रभात ने ब्याह कर लिया तो फिर वे लोग कहीं के नहीं रहेंगे।

## १२

अनहोनी घटना जिस तरह अचानक ही आकर घट जाती है और लोग विस्मय से चौंक उठते हैं उसी भाँति अशुभ समाचार भी फैलते देर नहीं लगती। मीलों की दूरी मिनटों में तय करके अपवाद हर जगह पहुँच जाता है। यद्यपि नवलबाबू ने प्रभात को यह सूचना नहीं दी कि माधवी का फलदान लौट आया है; लेकिन ऊमधूम कर आखिर एक दिन उसको यह बात मालूम हो गई।

प्रभात को इस समाचार से अत्यधिक प्रसन्नता हुई। वह गयारी से बोला—"दादा! लगन से किया हुआ काम कभी निष्फल नहीं होता। माधवी का तिलक लौट आया। लड़केवालों ने अपनी तौहीन समझी कि भाई के होते हुए आखिर नाई तिलक चढ़ाने क्यों आया। पिताजी ने जो बहाना खेला था कि प्रभात की तबियत खराब है वह नहीं आ सकता, सुना है उसके लिए वहाँ यह कहा गया कि ऐसी क्या जल्दी थी? जब प्रभात ठीक हो जाता फलदान तब चढ़ सकता था। आज मैं बहुत खुश हूँ दादा। मेरी मन की हो गई। जानते हो अब मैं क्या करूँगा?"

"हाँ क्या करोगे बबुआ?" बूढ़ा गयारी यह कहने के साथ मगन हो प्रभात के मुँह की ओर देखने लगा।

तब प्रभात उमंग भरी वाणी में बोला—"अब मैं अपनी माधवी का ब्याह कौशिक के साथ करूँगा। मैं·····?"

"सो कैसे बबुआ? यह बहुत मुश्किल है। मालिक बाबू कभी नहीं मानेंगे।"

गयारी की यह शंका निर्मूल नहीं थी। उसने जो कुछ कहा था सोच-समझकर ही; लेकिन प्रभात को स्वयं अपने पर दृढ़-विश्वास था कि लाख बाधायें आने पर भी वह अपनी योजना में सफल होकर ही रहेगा। गयारी की बातें सुनकर वह मुस्कराया और उसके कान के पास मुँह ले जा धीरे-धीरे कुछ कहने लगा। गयारी का झुर्रियोंदार चेहरा प्रसन्नता से खिल उठा और वह गद्गद् कंठ से बोला—"जुग-जुग जिओ बबुआ। तुम्हारा जैसा लड़का पाकर माँ-बाप को अपने को धन्य समझना चाहिये। लेकिन अफसोस! मालिक बाबू पुरानी कोटि के आदमी हैं तभी वे हर नये काम और हर नये विचार को एक बकवास समझते हैं। मगर मैं कहता हूँ कि उनकी यह सबसे बड़ी भूल है।"

गयारी की सब भाँति अपने अनुकूल पा प्रभात खुशी से फूला नहीं समा रहा था। उसे लगता कि काश! गयारी आज को उसका नौकर न होकर बाप होता तो उसे माधवी के ब्याह के लिए इतना चिन्तित नहीं होना पड़ता और न अब तक वह क्वाँरी ही बैठी रहती। दोनों में बड़ी देर तक इसी सम्बन्ध में बातें होती रहीं।

रिसर्च क्लास के विद्यार्थियों के लिए यह आवश्यक नहीं होता कि वे नियमित रूप से प्रतिदिन विश्वविद्यालय जाकर अपना शोध कार्य करें। प्रभात आज यूनिवर्सिटी नहीं गया। वह घर पर भी नहीं बैठा। सीधा कौशिक के घर जा उसको बतलाने लगा कि किस तरह गाँव से माधवी का तिलक वापस आ गया और बहन से मिलने वह रात की ट्रेन से कानपुर जा रहा है।

कौशिक, गौरी और रामचरण बाबू सब लोग प्रभात की बातों का समर्थन करने लगे कि हाँ उसे कानपुर जाना चाहिये। यह जरूरी है। और कोशिश करके इसी साल सहालगों में माधवी के हाथ पीले कर दिये जायँ। लड़की पराई अमानत होती है। उसको अधिक दिन घर में बैठाये रहना ठीक नहीं।

इस तरह प्रभात रात को कानपुर के लिए रवाना हो गया। बरौली

में पहुँच जब उसने नवलबाबू के चरण-स्पर्श किये तो वे देखते ही आग-बबूला हो बोल उठे —"तुम कैसे आ गये प्रभात ? तुम्हें किसने बुलाया है ? जाओ ! चले जाओ। मैं तुम्हारी सूरत भी नहीं देखना चाहता। मैं जानता हूँ कि तुम रकम लेने आये होगे सो यहाँ कारूँ का खजाना नहीं रक्खा है जो तुम्हारे जैसे कपूतों पर बिना मतलब खर्च करता रहूँ। मैं कहता हूँ जाओ वरना धक्के देकर तुम्हें बाहर निकाल दूँगा।"

प्रभात अपने स्थान पर निश्चल खड़ा था। नवलबाबू का तड़पना सुनकर जमुना तथा माधवी दोनों वहाँ आ गईं। प्रभात ने आगे बढ़कर माँ के पैर छुये। जमुना ने उसको वक्ष से लगा लिया तो छूटते ही क्रोध से काँपते हुये नवलबाबू फिर कहने लगे—"माधवी की माँ इससे पूछो यह यहाँ क्यों आया है ? अभी इसका कलेजा ठंडा नहीं हुआ क्या ? यह मेरे जख्मों पर नमक छिड़कने आया है। इसी के कारण मेरा सर नीचा हुआ। बनी बनाई बात बिगड़ गई। अब क्या इसकी सूरत देखूँ मैं ? इससे कह दो चला जाय और फिर अपनी मनहूस सूरत मुझे कभी न दिखलाये।"

प्रभात अब भी मौन खड़ा था। रात का सन्नाटा बरोठे में ही नहीं सारे घर में समा रहा था। उस नीरवता में नवलबाबू के शब्द बरोठे में गूँजकर रह गये। जिससे एकबार सारा बरोठा झनझनाकर रह गया। जमुना ने पुत्र को अब गले से लगा लिया और स्नेहपूर्वक उसके सिर पर हाथ फेरती हुई पति की ओर उन्मुख हो कहने लगी—"इतने दिन बाद लड़का घर आया है और तुम उसे जली-कटी सुना रहे हो यह कहाँ की समझदारी है ? मैं कहती हूँ कि आँखें खोलो और ज़माने की ओर देखो। अपने ही काम आते हैं और बेगाने केवल मुँह छू देते हैं, सुनकर हँस देते हैं; लेकिन साथ कोई नहीं देता। जाओ तुम आराम करो मैं समझा लूँगी इसे। तुम बाप हो क्या जानो माँ की ममता कैसी होती है ?"

इस पर नवलबाबू जोर से चिल्ला पड़े—"माधवी की माँ। यह मत भूलो कि तुम मेरा अपमान कर रही हो। यह तुम्हारा पूत नहीं काला नाग है इसके काटे का कोई मंत्र नहीं।"

किन्तु जमुना ने यह जैसे सुना ही नहीं। वह प्रभात का हाथ पकड़ उसको अन्दर लिवा ले गई। माधवी भी पीछे-पीछे चल दी! और नवल-बाबू देर तक वहीं पर खड़े-खड़े बड़बड़ाते रहे।—

× × ×

रात को प्रभात की माँ से काफी देर तक बातें होती रहीं। उसने घर का सब हाल जान लिया और अपना सब बतला दिया; लेकिन कहीं पर भी यह शिकायत नहीं की कि पिताजी ने मुझे खर्च नही भेजा और मैं नौकरी करके अपना काम चला रहा हूँ। जमुना बेचारी भी क्या जाने कि नवलबाबू प्रभात को रुपये भेज रहे है या नहीं। उसे न बाप ने ही कुछ बतलाया था और न कहा कुछ बेटे ने फिर वह मर्म को कैसे समझ पाती?

माँ सो गई भाई सो गया और बाप भी अपने कमरे में लेटा खुर्राटे भर रहा था; लेकिन माधवी जाग रही थी। वह कमरे में लेटी आँखें खोले सामने दीख पड़ रहे आकाश की ओर देख रही थी और सोच रही थी कि भैया प्रभात शायद इसीलिए घर आये हैं कि वे मेरे सम्बन्ध में कोई नया कदम उठाना चाहते होंगे। बीधापुर से सम्बन्ध विच्छेद हो जाने वाली बात उनको मालूम हो चुकी होगी। क्योंकि ऐसी अनहोनी बातें पर लगा-कर उड़ती हैं और धरती के एक छोर से दूसरी छोर तक चक्कर काट आती हैं। मैं ऐसा सोचती हूँ; मगर वास्तविकता क्या है? वह स्वयं ही सामने आ जायेगी। मुझे लगता है कि इस घर में मेरा कोई नहीं केवल भाई ही एक अकेला अपना है। भाग्य सबके साथ होता है। वही अनुकूल और प्रतिकूल परिस्थितियों को जन्म देता है। मैं अपने प्रति जितना सोचती हूँ उतनी ही उलझन बढ़ती है। मानसा-मन्थन से कोई परिणाम नहीं निकलता। होता वही है जो होनहार है और जो भावी के आंचल पर अंकित होता है।

रात को बहुत देर तक दुःख-निराशा और आशा के भँवर में माधवी डूबती-उतराती रही और जब सबेरा हुआ सूरज निकला धूप आंगन की दीवालों पर उतरने लगी तो वह नाश्ता तैयार कर भाई के सामने ले

जाकर बोली—"बहुत दुबले हो गये हो भैया। अबकी बार काफी दिनों में आये, कोई चिट्ठी भी नहीं डाली ? क्या मुझसे भी नाराज हो ?"

नवलबाबू रात को लाल-पीले हो रहे थे। जमुना जानती थी वे इस समय भी गुस्से में होंगे। अतः माधवी के हाथ जलपान का सामान न भेज वह स्वयं चाय की ट्रे लेकर उनके कमरे में गई। यहाँ दोनों भाई-बहन अकेले थे। प्रभात ने बहन से मन की बात कह दी। वह बोला—"यह बात नहीं माधवी। मैं भला तुमसे नाराज हूँगा—यह कभी स्वप्न में भी नहीं हो सकता। हाँ जो कारण मेरे न आने के थे वे तुम अच्छी तरह जानती होगी दुहराने से कोई लाभ नहीं। मैं तो यह कहूँगा कि मेरी इच्छा पूरी हुई। मैं नहीं चाहता था कि तुम्हारा जीवन उस मेढक के समान बने जो केवल कुएँ तक ही सीमित रहता है। कल मुझे मालूम हुआ कि बीधापुर से फलदान वापस आ गया है। इसीलिए आया हूँ माधवी। मैं तुमको अपने साथ लखनऊ ले जाऊँगा।"

माधवी चम्मच से कप में चीनी घोल रही थी। वह चौंक कर बोली—"कैसी बातें करते हो भैया ? पिताजी तुम्हारे साथ मुझे कभी नहीं भेजेंगे।"

कप उठाकर होंठों से लगाते हुये प्रभात ने एक स्नेहभरी दृष्टि सहोदरा पर डाली और गरम-गरम दो घूँट गले से नीचे उतार हँसता हुआ बोला—"इसके लिए भी मैंने सोच लिया है माधवी। तुम कह सकती हो कि मैं भैया के साथ जाऊंगी। दो-तीन दिन में लौट आऊँगी। माँ का समर्थन हम लोगों को सहज ही प्राप्त हो जायेगा। यह मैं जानता हूँ।"

माधवी हैरान होकर बोली—"आखिर आप ऐसा क्यों करना चाहते हैं भैया ? मुझे लगता है कि पिताजी मेरे विषय में किसी की क्या भगवान की भी बात नहीं मानेंगे। मैं·····।"

"यह सब न पूछो माधवी कि मैंने क्या-कुछ सोचा है। उसको थोड़े में समझ लो। मैं चाहता हूँ कि तुम्हारा जीवन दुःख और संकटों की कहानी बनकर न रह जाय। तुम हमेशा हँसती रहो, मुस्कराती रहो—तुम्हारा जीवन-पुष्प मुरझाने की अपेक्षा विकसित रहे। सोच नहीं पाता हूँ कि

कितना महान् सुख मिलेगा मुझे इसमें।" यह कहकर प्रभात चाय पीने लगा; क्योंकि वह ठंडी होने जा रही थी।

माधवी भाई से तरह-तरह की बातें करती रही और वह उसकी प्रत्येक बात का जवाब देता चला गया। उस बातचीत का सिलसिला तब टूटा जब जमुना वहाँ आकर खड़ी हो गई और आते ही कहने लगी—"बड़ी मुश्किल से नाश्ता किया। कहते थे कि मैंने प्रभात को रुपया नहीं भेजा क्या कुछ कहता था ?"

माधवी माँ का मुँह देखने लगी। तब जमुना ने स्थिति को स्पष्ट किया कि प्रभात को घर से रुपया नहीं भेजा गया यह बात उसे अभी मालूम हुई।

फिर दोनों माँ-बेटी प्रभात से इस सम्बन्ध में बातें करने लगी कि आखिर आजकल वह अपना खर्च कैसे चलाता है ?

---

## १३

पूरे दिन प्रभात घर में ही रहा। वह बाहर नहीं निकला; क्योंकि अभी वह माँ के सम्मुख यह प्रसंग भी नहीं चला पाया था कि मैं माधवी को अपने साथ लखनऊ ले जाऊँगा। नवलबाबू की स्थिति को वह भली-भाँति समझता था। अतः उनसे स्वयं कुछ न कहकर माँ जमुना से ही कहलाना चाहता था कि कुछ दिन के लिए वह माधवी को लखनऊ ले जायेगा। उसका मन है थोड़ा घूम आयेगी। धीरे-धीरे उसने उस तरह का जिक्र छेड़ा और माँ के कानों में अपनी बात डाल दी।

जमुना को कोई इन्कार नहीं था माधवी को लखनऊ भेजने में; लेकिन वह डरती थी कि नवलबाबू उसकी बात चलने नहीं देंगे। सबसे पहले उसने पति को पुत्र के प्रति बहुत समझाया कि अब उसके साथ रूखा व्यवहार न करो। उसे कुछ समझ तो आई जो अपने आप इतने दिन बाद घर आया। माधवी का ब्याह उचट गया कोई बात नहीं कोशिश करो अगली सहालगों में वह घर से निकल बाहर हो। जवान लड़का है मैं उसे अपने हाथ से नहीं जाने देना चाहती हूँ। तुम भी सोचो और विचार करो कि माँ-बाप के सामने लड़का ज़िद नहीं करेगा तो क्या राहगीरों से।

नवलबाबू यद्यपि बहुत सुलझे हुये व्यक्ति थे जल्दी झुकना नहीं जानते थे; लेकिन गृहस्थी के भ्रमजाल से वे भी मुक्त नहीं थे। जिस जमुना पर प्रभात के पीछे वे बात-बात पर बिगड़ उठते थे आज उसकी बातें उन्हें अच्छी लग रही थी। वे चुपचाप सुन रहे थे और वह कहती जा रही थी कि प्रभात कहता था कि माँ माधवी का मन है कि वह मेरे साथ दो-चार

दिन के लिए लखनऊ जाना चाहती है। अच्छा है, मैं भी सोचती हूँ चली जाय गयारी भेज जायेगा। मैं जानती हूँ कि तुम उसको वहाँ भेजना पसंद नहीं करोगे; मगर हमें प्रभात को नाराज होने का मौका नहीं देना है। उसका झुकाव आजकल घर की ओर हुआ है यह बहुत अच्छा है।

लेकिन नवलबाबू कड़े के आदमी थे। वे बीच में अपनी बात ले आये और कहने लगे कि शायद शालिनी के बारे में वहाँ प्रभात की काफी बदनामी हुई है। इसीलिए उसने घर में आकर शरण ली है। वाकई लड़का है बहुत चालाक। यह उसका दोष नहीं, जमाने की हवा ही ऐसी है।

जमुना ने पति को दूसरी ओर बहकने नहीं दिया। वह अपनी बात का जवाब माँगने लगी। नवलबाबू ने उसके मुँह से जब यह सुना कि प्रभात को अब मेरी आर्थिक सहायता की आवश्यकता नहीं रह गई है। अपने निर्वाह भर को वह स्वयं पैदा कर लेता है तो वे बहुत प्रसन्न हुये।

आखिर में जमुना के बहुत कहने-सुनने पर नवलबाबू ने माधवी को भाई के साथ लखनऊ जाने की अनुमति दे दी। उन दिनों वहाँ एक उत्कृष्ट नुमायश चल रही थी। माधवी ने उसको देखने का ही मूल उद्देश्य बतलाया था।

बाप-बेटे में चलताऊ बातों के अलावा कोई विशेष बातें नहीं हुईं। हाँ नवलबाबू का मन पुत्र की ओर से बहुत साफ हो गया था। वे उसके प्रति सोचने लगे कि लड़का है अभी जमाने की हवा नहीं देखी इसीलिए गलती कर बैठता है। धीरे-धीरे जब समझ आयेगी तो अपने आप ही सँभल जायेगा। उन्होंने जमुना को संकेत किया और जमुना चलते समय प्रभात को सौ रुपये का एक नोट देने लगी तो प्रभात हँसकर बोल उठा—"इसकी क्या जरूरत है माँ? मेरा खर्चा आसानी से चल जाता है। रख लो जब आवश्यकता होगी माँग लूँगा, आकर ले जाऊँगा।"

इसके बाद जब पूष की फीकी धूप लखनऊ नगरी का अन्तिम आलिंगन कर उससे विदा ले रही थी तो दोनों भाई-बहन गयारी के सामने जाकर खड़े हो गये। बुड्ढे ने माधवी को वक्ष से लगा लि[illegible] उसके बालों

पर अपनी ममत्व और स्नेह भरी उँगलियाँ फेरता हुआ गद्‌गद् होकर कहने लगा—"आ गई मेरी माधवी बिटिया बहुत दिनों से नहीं देखा था। कहो अच्छी तरह तो रही बेटी।" यह कहकर उसने ठुड्डी पकड़ कर माधवी का सिर ऊपर उठाया तो देखा उसकी आँखों में आनन्दाश्रु छलक आये हैं।

प्रभात अपने स्टडी-रूम में जाकर कपड़े बदलने लगा। बूढ़ा माधवी को दूसरे कमरे में लिवा गया। मूँग और गोंद के लड्डू उसने प्रभात के लिए बनाकर रख छोड़े थे। उनसे माधवी का मुँह मीठा कराया। फिर उस रात को बड़ी होड़ चली। गयारी कहता था कि खाना मैं बनाऊँगा और माधवी कहती थी कि नहीं दादा रोज आप हैरान होते हैं जब तक मैं यहाँ हूँ, अब आपको तकलीफ नहीं करने दूँगी।

आखिर बड़े के सामने छोटे की ही जीत हुई और उस समय का खाना माधवी ने ही बनाया। काफी देर तक सब लोग जागते रहे। किसी की भी बातों का अन्त ही नहीं होता था कि प्रभात ने अपनी आँखें मूँद लीं वह सोने का अभिनय करने लगा। यह देख माधवी भी सोने का उपक्रम करने लगी और गयारी को भला कितनी देर लगती थी दोनों को सोया देख वह भी नींद में खुर्राटे लेने लगा, जिसकी आवाज नीचे तक सहज ही सुनाई पड़ सकती थी।

गयारी प्रभात के पास उसके कमरे में अपनी चारपाई पर लेटा सो रहा था और माधवी का बिस्तर बिछा था दूसरे कमरे में। लगभग डेढ़ बजे का समय हो रहा था प्रभात की आँखों में नींद का नाम नहीं था। वह आँखें खोले जाग रहा था। कमरे की बत्ती बन्द थी और जाड़ा अधिक होने के कारण गयारी ने किवाड़ भेड़कर कुंडी लगा रक्खी थी ताकि वे हवा से खुल न सके ; क्योंकि वह आज सुरसुरी होकर तेजी के साथ बह रही थी। उस अँधेरे में सामने खिड़की से थोड़ा-सा आकाश दिखाई दे रहा था, जिसमें चन्द-तारे जुगुनू की भाँति चमक रहे थे। प्रभात अपनी समस्या पर विचार कर रहा था कि मूल काम था माधवी को यहाँ ले आना सो अनेकों विघ्न और बाधाओं के बावजूद भी उसमें पूरा उतर गया। अब सोचता

हूँ कि आगे क्या करना चाहिये ?

प्रभात के सामने कौशिक का चित्र नाच उठा। उसने मन ही मन निश्चय किया कि जिस तथ्य को मैं अब तक पचाये रहा उसे कल किसी समय अच्छा मौका देखकर कौशिक के सामने आइना-सा रख दूँगा। मैं जानता हूँ कि वह घर रूप, पैसा और कुल पर जान नहीं देता है। वहाँ का प्रत्येक पात्र गुणों का पुजारी है और मेरी बहन माधवी गुणों की खान है। उसकी वाणी की सरसता, व्यवहार की सरलता और मन की शिष्टता सभी कुछ उसके आदर्श को ऊँचा उठाते हैं। क्या नहीं है उसमें विद्या, बुद्धि और विवेक तीनों से उसका बहुत ही घना लगाव है। मैं जानता हूँ कि वह गौरी और रामचरण बाबू को श्रद्धा तथा सेवा-भाव से जीत लेगी। वह बड़ों की सेवा करने में कितना सुख पाती है यह मेरा स्वयं का अनुभव है। काश ! मेरी इच्छा का हनन न होता। जिस सुन्दर महल को बनाने की मैं कल्पना कर रहा हूँ वह कहीं अधूरा न रह जाय और कहीं ऐसा भी न हो कि वह बीच में ही ढह जाय। मैं उसे पूरा देखना चाहता हूँ; क्योंकि विनाश के पंजों से मैं माधवी को छुड़ाकर लाया हूँ और अब उसके भविष्य निर्माण के लिए मुझे तत्पर रहना चाहिये।

प्रभात इसी तरह विचारों की उधेड़-बुन में लगा रहा। फिर पता नहीं कब उसकी आँख लग गई; किन्तु आश्चर्य कि अलख सबेरे ही उसकी आँख खुल गई और लगा जैसे किसी ने उसे चौंका कर जगा दिया हो।

## १४

प्रातः की चाय घर पर ले प्रभात माधवी को अपने साथ कौशिक के घर लिवा गया। उस दिन पूस की पूर्णिमा थी। गौरी गोमती स्नान करने गई थी। कौशिक और रामचरण बाबू घर में थे। माधवी ने रामचरण को नमस्ते किया। उन्होंने उसे पूरे वर्ष भर बाद देखा था। हँसते हुये आशीर्वाद दे वे फिर कहने लगे—"अरे तू तो बहुत बड़ी हो गई माधवी।"

माधवी यह सुनकर शरमा गई। उसकी पलकें नीचे झुक गईं और प्रभात मुस्कराने लगा। कौशिक के लिए माधवी का परिचय कोई नया नहीं था। वह उसे कई बार देख चुका था। प्रभात रामचरण बाबू के साथ बातों में व्यस्त हो गया और माधवी सिकुड़ कर बैठ गई एक ओर। वहीं निकट ही बैठा था कौशिक। दोनों मौन थे और शिष्टाचार का उसी मौन द्वारा पूरा-पूरा पालन कर रहे थे।

थोड़ी देर बाद जब गौरी गोमती नहाकर लौटी तो माधवी को अपने घर में बैठी देख वह खुशी से फूली नहीं समाई और निकट आ उसकी बलायें लेती हुई घर का हाल-चाल पूछने लगीं।

माधवी ने माँ के तुल्य गौरी का मान किया। श्रद्धा और सद्भावना भरी बातें कर उसको ऐसा मुग्ध कर लिया कि उसके मुँह से बरबस ही निकल पड़ा—"माधवी! काश! तुमने मेरी कोख से जन्म लिया होता तो मैं तुम जैसी बेटी को पाकर अपने को धन्य समझती। लेकिन अफसोस है कि तुम्हारे पिताजी पुरानी बातों पर अधिक विश्वास करते हैं। पता नहीं वे यह क्यों नहीं सोचते कि उनकी सन्तान को दुःख मिलेगा या सुख।

ऐसी भी परम्परा किस काम की जिसके पीछे किसी की हँसी-खुशी और सुख का बलिदान हो।"

रामचरण बाबू के दफ्तर जाने का समय हो रहा था। वे भोजन से निवृत्त होते ही कपड़े बदलने लगे। प्रभात और कौशिक की बातें खत्म होने नहीं आ रहीं थीं और माधवी रसोई में गौरी का हाथ बंटा रही थी।

उधर रसोई में माधवी और गौरी की सुखद वार्ता चल रही थी और इधर प्रभात ने सहसा कौशिक से एक अटपटा प्रश्न कर दिया। वह बोला—"तुमने माधवी को देखा कौशिक। क्या वह इतनी कुरूप है कि कोई उसके साथ ब्याह करने को तैयार नहीं होगा?"

कौशिक ने छूटते ही जवाब दिया—"इसके लिए न पूछो प्रभात। उथली दृष्टिवालों की बात और है उनकी आस्था क्षणभंगुर वस्तुओं पर अधिक होती है। मुझे आदमी के अन्दर की खूबसूरती ही अच्छी लगती है। बाहर की बदसूरती और खूबसूरती को मैं कोई महत्त्व नहीं देता।"

प्रभात का चेहरा खिल उठा। वह उसकी ओर देखता हुआ कहने लगा—"बस मैं तुम्हारे मुँह से यही सुनना चाहता था। मेरी भी ऐसी ही धारणा है।"

प्रभात मुँह तक आई बात कह देना चाहता था कि कौशिक मैं तुम्हारे साथ ही माधवी को ब्याहना चाहता हूँ; लेकिन वह कुछ कह नहीं सका। उसके अन्तःकरण ने उसे इस बात की अनुमति नहीं दी। वह दूसरी बातें करने लगा। काफी देर तक वहाँ बैठा कौशिक के साथ ही भोजन किया; किन्तु कहीं पर भी अपने मन की ग्रन्थि नहीं खुलने दी।

दोपहर को प्रभात जब घर जाने लगा तो माधवी को गौरी ने रोक लिया। वह बोली—"ऐसी क्या जल्दी है प्रभात? शाम तक चली जायेगी माधवी, कौशिक भेज आयेगा।"

उसी दिन तीसरे पहर गौरी से मिलने आई शालिनी, माधवी उसके लिए अपरिचिता थी। गौरी ने दोनों का परिचय कराया। तब यह जानकर कि माधवी प्रभात की बहन है शालिनी उससे ऐसी मिली, मानो

वह जन्म जन्मान्तर की उसकी साथिन हो और एक बहुत बड़ी मुद्दत बाद मिली हो।

प्रभात के मुँह से शालिनी उसके घर और माधवी के ब्याह आदि की बातें सुना करती थी। उसने यह भी सुना था कि माधवी काली और बदसूरत है इसीलिए उसका ब्याह कहीं नहीं होता। लेकिन आज जब उसने उसको देखा तो यह आभास हुआ कि माधवी हीरे की कनी है जिस पर शनि की कुदृष्टि पड़ गई है तभी हीरे की चमक स्याही में बदल गई। शालिनी को थोड़ी देर में ही यह अटूट विश्वास हो गया कि माधवी के अन्दर की नारी हमेशा कसौटी पर खरी उतरेगी। कुरूप कहकर जो लोग उसका अपमान करते हैं वे बहुत बड़ी भूल करते हैं।

दोनों में थोड़ी ही देर में इतना अधिक घनिष्टत्व हो गया कि शालिनी चलते समय माधवी को अपने घर लिवा ले गई। वहाँ सावित्री से किसी की अधिक बातें नहीं हुई। लेकिन एकांत में वे दोनों परस्पर मुक्त हो एक-दूसरे से अपना दुःख-सुख कहने लगीं।

शालिनी के विषय में माधवी ने सुन रक्खा था कि भाभी सावित्री उसे दिन-रात कोंचा करती है। एक क्षण के लिए भी संतोष की साँस नहीं लेने देतीं। और दूसरी बात यह भी जानती थी कि वह उसके भाई से श्रद्धा करती है जिसका मतलब दुनिया यह निकालती है कि उसका आकर्षण भैया की ओर है। आखिर उसने शालिनी से यह पूछ ही दिया—"शालिनी। यह बतला सकती हो कि भैया प्रभात का तुम्हारी दृष्टि में क्या मूल्य है? और तुम्हारी भाभी उनके प्रति रुष्ट हैं; उनका यह आचरण कहाँ तक उचित है?"

इस पर शालिनी ने जवाब दिया—"माधवी इन बातों को तुम क्यों पूछ रही हो? मैं ऐसी बातों को मन में स्थान नहीं देती। भाभी क्या कहती हैं मैं सुनती ही नहीं, अपने काम में लगी रहती हूँ। हाँ तुम्हारे भैया सचमुच हीरा आदमी हैं। उनमें मनुष्य के असली रूप के प्रत्यक्ष

दर्शन होते हैं। इसीलिए देवता समझ कर मैं 'उनसे श्रद्धा करती हूँ। दुनिया के हजार मुँह हैं मैं किसी की चिन्ता नहीं करती।"

इसी तरह माधवी के हर प्रश्न का उत्तर शालिनी सरलता के साथ देती चली गई उसने अपने मन की स्थिति उसके सामने स्पष्ट कर दी। रात हो गई तो देवराज माधवी को उसके घर पहुँचा आया।

शालिनी की आँखों के सामने अब भी माधवी का चित्र नाच रहा था। वह सोच रही थी कि जैसा भाई है वैसी ही बहन। दोनों के विचारों में नवीनता है। दुनिया इसीलिए उन्हें दोषी कहती है। कुरूपता ईश्वर प्रदत्त वस्तु है। उसके लिए दूसरे को कुछ कहना सबसे बड़ी भूल है। दुनिया उन लोगों को अच्छा समझती है जो तन के गोरे और मन के काले हैं। पता नहीं क्या होने वाला है? क्योंकि आजकल सारा संसार असलियत से कोसों दूर होता चला जा रहा है। बनावट, ढोंग और पाखण्ड इनका बोल बाला है। मान और अपमान भी अब खरीद-दारी की वस्तु बन गये हैं। मुँह देखा व्यवहार दुनिया बहुत पसंद करती है।

और माधवी सोच रही थी अपने घर में कि शालिनी एक कुलीन नारी है। उसकी गुरुता उसमें सब भाँति निहित है। दुःख और शोक को वह ऐसे पी जाती है जैसे कोई अमृतपान कर रहा हो। वह दूसरे की शिकायत का एक भी शब्द कभी अपने मुँह से नहीं निकालती जब कि लोग अकारण ही उसको टीका-टिप्पणियाँ किया करते हैं। ठीक है अगर नारी का नारीत्व उसमें जाग्रत है तो मान और अपमान का उस पर किंचितमात्र भी प्रभाव नहीं पड़ता। ऐसी ही स्थिति शालिनी की है। सचमुच उसका संयम ही उसका शृंगार है।

१५

माधवी जब घर पर लौट कर आई तो भाई को बतलाया कि कौशिक की माँ ने उसके साथ बहुत अच्छा व्यवहार किया। ऐसा लगता था कि जैसे वह उसकी सगी माँ हो और रामचरण बाबू ने भी उससे पुत्रीवत् स्नेहभरी बातें कीं। इसके अतिरिक्त वहाँ शालिनी आ गई थी वह अपने साथ मुझे अपने घर ले गई। वहाँ मैंने देखा कि उसकी भाभी बहुत ही टेढ़े स्वभाव की हैं। कहाँ तक कहूँ वे मुझसे अच्छी तरह बोलीं भी नहीं। लेकिन देवराज बाबू पूरे साधु हैं, ठीक वैसे ही जैसे उनकी बहन शालिनी। मैंने यह अनुभव किया भैया कि उस बेचारी से वहाँ मन की बात पूछनेवाला कोई नहीं। कदम-कदम पर प्रतिबन्ध और प्रतारणायें हैं। वह मन ही मन रोती है और कोई फूटे मुँह से भी उससे सहानुभूति के दो शब्द नहीं कहता।

प्रभात बहन की बातें सुनकर धीरे से हँस दिया। वह कहने लगा—"माधवी दुनिया दुरंगी है जो लोग अपवाद स्वरूप हैं, उन्हें सभी की मान्यता, सभी का स्नेह और सभी का औदार्य प्राप्त है। लेकिन जिनमें मानवता के प्रत्यक्ष दर्शन होते हैं उनसे दुनिया दुराव रखती है और दूर-दूर भागती है। शालिनी की स्थिति बिल्कुल तुम्हारी जैसी है। तुम्हें ईश्वर ने सुन्दरता नहीं दी और नसीब ने शालिनी का सिन्दूर धो दिया। वह विधवा है इसीलिए उपेक्षिता है।

माधवी भाई के सम्मुख अपने मन की बात स्वच्छंद होकर कहती थी। वह तत्क्षण ही बोल उठी—"भैया! समाज के कानून बहुत पुराने

हो गये हैं। मैं यह नहीं कहती कि उन्हें एकदम बदल दिया जाय। हाँ इतना जरूर चाहती हूँ कि उन्हें संशोधित कर सबके अनुकूल बनाया जाय ताकि किसी को भी शिकायत करने का मौका न रहे। क्या ऐसा सम्भव हो सकता है?"

"क्यों नहीं! संसार में क्या नहीं सम्भव हो सकता। नये हाथ नये कदम, नई राह और नये विचार ये सब क्या हैं? युग हमेशा सोता ही नहीं रहता। वह करवट भी बदलता है माधवी। तब अज्ञानी लोग एकदम चौंक उठते हैं और कहने लगते हैं कि ज़माना तेजी से बदल रहा है। दिन पर दिन समय खराब आ रहा है। यह बीसवीं सदी है। इसमें मनुष्य प्रगति की गाड़ी पर बैठा है और उसके पहिये खूब जोर-जोर से चल रहे हैं। आजकल निर्माण और विध्वंस दोनों के साधन जुट रहे हैं। यह अपनी-अपनी क्षमता की बात है आदमी जिधर चाहे उधर झुक जाय।" यह कहकर प्रभात ने एक लम्बी साँस ली।

माधवी भाई की बातों को ध्यानपूर्वक सुन रही थी। उसने समर्थनस्वरूप अपना भी मत प्रगट किया। वह बोली—"भैया! जिन बातों को आप सोचते हैं, मैं सोचती हूँ उन्हें और लोग क्यों नहीं सोचते? पुरानी रूढ़ियों के प्रति यदि आज का समाज जागरूक हो जाय तो यह सृष्टि हँस सकती है फूलों की तरह। आदमी की सारी समस्यायें स्वयं ही सुलझाव की ओर अग्रसर होने लगें और इसी भाँति समाज की सारी विकृति सहज ही दूर हो सकती है।"

माधवी की बातें सुनकर प्रभात को बहुत प्रसन्नता हुई। वह सोचने लगा कि ऐसे ही स्वतंत्र विचारोंवाला युवक है कौशिक। उसकी और माधवी की जोड़ी कैसी रहेगी? ठीक राधा-मोहन जैसी।

जब बातचीत का सिलसिला समाप्त हुआ तो प्रभात अपने दैनिक कार्यों में व्यस्त हो गया और दूसरे दिन विश्वविद्यालय में उसकी कौशिक से भेंट हुई। दोनों यूनिवर्सिटी की लाइब्रेरी में बैठे शोधपूर्ण पुस्तकों की छानबीन कर रहे थे। सहसा प्रभात ने बात चलाई। वह बोला—

"आओ कौशिक कैफे चलें। तबियत बोर हो रही है। एक-एक कप चाय पी ली जाय।"

कौशिक प्रभात के प्रस्तावों को कभी नहीं ठुकराता। वह उसकी हर बात को बड़े सम्मान के साथ मानता था। दोनों कैफे पहुँचे, चाय आ गई, उसकी चुस्कियाँ लेता हुआ धीरे-धीरे प्रभात बोला—"कौशिक तुम जानते हो कि माधवी को मैं लखनऊ क्यों लाया हूँ?"

"नहीं।" कहने के साथ कौशिक ने न द्योतक सिर हिलाया।

तब प्रभात कहने लगा—यह सेहरा मैं तुम्हारे सिर पर बाँधना चाहता हूँ कौशिक! बोलो क्या कहते हो?"

कौशिक की समझ में प्रभात की बातों का मर्म नहीं आया। वह अनजान की नाईं व्यस्त स्वर में पूछने लगा—"मैं तुम्हारी बातों का मतलब नहीं समझा प्रभात। आखिर तुम कहना क्या चाहते हो? साफ-साफ कहो। मैं·····।"

प्रभात बीच में ही हँस दिया और फिर गम्भीर होकर कहने लगा—"माधवी को मैं तुम्हारे हाथों में सौंपना चाहता हूँ, बोलो मंजूर है।"

कौशिक एकदम चौंक उठा और प्रभात के मुँह की ओर देखता हुआ बोला—"यह तुम क्या कहते हो प्रभात? तुमने अपने आप ही सारी बातें निश्चय कैसे कर डालीं। ब्याह-शादी के काम तो बड़े-बूढ़ों के ही हाथ शोभा देते हैं।"

प्रभात तनिक भी विचलित नहीं हुआ। वह दृढ़ता के साथ बोल उठा—"कौशिक। मेरे माँ-बाप की स्थिति जानते ही हो। इस सम्बन्ध में मेरी अपेक्षा तुम अधिक भाग्यशाली हो; क्योंकि तुम्हारे माँ-बाप परिस्थितियों के अनुकूल चलना जानते हैं। वे पुरानी पीढ़ी से असहमत नहीं और नई पीढ़ी के भी साथ हैं। वे जाति-पाँति, कुल, मर्यादा और ऊँच, नीच के चक्कर में नहीं पड़ते, जबकि मेरा घर दकियानूसी विचारों का एक खजाना है। मुझे विश्वास था कि तुम मेरी बात टालोगे नहीं। इसी बुनियाद पर मैं माधवी को यहाँ ले आया और यह निश्चय कर

चुका हूँ कि उसके हाथ यहीं पीले कर दूँ ताकि सारे झगड़े-झंझट समाप्त हो जायें। मुझे तुम्हारी स्वीकृति चाहिये। सबसे पहले मैंने तुम्हारे व्यक्तिगत विचारों को जान लेना अच्छा समझा। इसीलिए अभी तक चाचा रामचरण और चाची गौरी से इस सम्बन्ध में कोई बातचीत नहीं की।"

कौशिक असमंजस में पड़ गया। वह ठुड्डी पर हाथ रखकर सोचने लगा। कैफे की जिस कैबिन में ये लोग बैठे थे उसके बाहर प्लास्टिक का बेल-बूटोंदार पर्दा लटक रहा था। कैफे में लोगों की भीड़ थी। ग्रामोफोन पर रेकार्ड बज रहा था। बैरों की पदचाप, चम्मच, प्लेटों और गिलासों की खटपट लोगों की हँसी, बातचीत और कहकहों की भरमार सब कुछ मिलाकर वातावरण अपने पूर्णांशों में मुखरित था। प्रभात ने धीरे से टोक दिया—"तो फिर बोलो क्या कहते हो कौशिक ? मैं आगे कदम बढ़ाऊँ या निराश हो जाऊँ। सब कुछ मैंने तुम्हारे ऊपर छोड़ दिया है।"

कौशिक ने अपनी दृष्टि प्रभात के चेहरे पर टिका दी और धीरे-धीरे कहने लगा—"क्या बताऊँ कुछ समझ में नहीं आता। इस सम्बन्ध में अगर तुम माँ और पिताजी से बातें कर लो तो अधिक अच्छा रहे। क्योंकि बहुत बेढब मसला है यह। हम लोग सारस्वत ब्राह्मण हैं और तुम ठहरे कान्यकुब्ज वंशावली के। तुम्हारे पिता यह रिश्ता कभी नहीं मंजूर करेंगे।"

इस पर छूटते ही प्रभात बोल उठा—"लेकिन मैं अपने पिताजी को बीच में डालता ही कब हूँ ? मैंने तो यही सोचा है कि अगर तुम मेरे प्रस्ताव से सहमत हो तो फिर चाचा रामचरण से बातें करूँ मुझे यकीन है कि वे राजी हो जायेंगे।"

"अगर ऐसा सम्भव हो गया तो क्या तुम अपने घर में सूचना भी नहीं भेजोगे। यह तो नहीं होना चाहिये प्रभात। दुनिया तुम्हें दोष देने लगेगी।"

कौशिक की ये बातें सुनकर प्रभात हँसकर कहने लगा—"ये तो बाद की बातें हैं इन पर फिर विचार करता रहूँगा पहले मैं तुम्हारा मन्तव्य जान लेना चाहता हूँ।"

कौशिक ने अब बात माँ-बाप के ऊपर डाल दी। वह बोला—"तुम पिताजी को राजी कर लो। माँ की अनुमति ले लो, फिर मुझे इन्कार क्यों होने लगा? जानते हो मैं तुम्हारी बातों को शायद ही कभी टालता होऊँ। वरना ऐसे क्षण बहुत कम आते हैं।"

अब प्रभात का चेहरा खिल उठा। वह मगन होकर कहने लगा—"ब स कौशिक। मैं यही जानना चाहता था। अब आगे जो कुछ करना है वह मैं सहज ही सम्पन्न कर लूँगा। आओ चलें क्या करोगे यूनिवर्सिटी चलकर? मेरा तो मन अब लिखने-पढ़ने में लगेगा नहीं।"

दोनों मित्र कैफे के बाहर आ गये। वे रास्ते पर चल रहे थे बातें करते हुये। उनमें एक नया उत्साह था, एक नई उमंग और एक नया जोश वे परस्पर एक-दूसरे से घुल-मिल जाना चाहते थे; क्योंकि उनकी मैत्री अब सम्बन्ध की डोर में बँधने जा रही थी; जिसमें युग की समस्याओं का एक बहुत बड़ा समाधान निहित था।

तीसरा पहर हो रहा था। नगर की हलचल बहुत कुछ बढ़ गई थी। चहल-पहल का बाजार गर्म था। सड़कों पर भीड़ बढ़ रही थी। दोनों मित्र चले जा रहे थे एक-दूसरे से कंधा मिलाये हुये। उनके सम्मुख अपनी निज की बातचीत का अधिक महत्त्व था। जन कोलाहल जैसे उनके कानों में पहुँच ही नहीं रहा था। पहले अमीनुद्दौला पार्क आया। प्रभात अपने घर चला गया और कौशिक जब अपने मकान के जीने पर चढ़ रहा था तो वह सोच रहा था कि बहुत बड़ी समस्या है प्रभात की। मित्र होने के नाते मुझे अपने कर्त्तव्य का पालन अवश्य करना चाहिये।

१६

उस दिन नहीं दूसरे दिन सवेरे ही प्रभात जा पहुँचा बाबू रामचरण के पास और मौका देखकर उसने अपनी बात छेड़ दी। रामचरण ने उसका प्रस्ताव सुना तो गौरी को भी वहाँ बुला लिया और उससे कहने लगे—"प्रभात कहता है कि वह माधवी का ब्याह कौशिक से करेगा। बोलो तुम क्या कहती हो?"

गौरी एकदम सन्नाटे में आ गई। वह कहने लगी—"लेकिन सोचना तो यह है कि प्रभात के पिता यह रिश्ता मंजूर करेंगे?"

इस पर रामचरण बाबू बोलते-बोलते रुक गये और प्रभात अपनी बात कहने लगा—"पिताजी की मर्जी का मैं कायल नहीं। यह सम्बन्ध मैं अपने मन से कर रहा हूँ और अगर आप लोग स्वीकृति देंगे तो माधवी का ब्याह मैं लखनऊ से ही करूँगा।"

गौरी पति का मुँह देखने लगी। कौशिक उस समय अपने कमरे में था। वह जानता था कि प्रभात आज ब्याहवाला पचड़ा लेकर आया होगा इसीलिए वहाँ नहीं गया। रामचरण बाबू कई क्षण तक मौन रहे। फिर खाँस कर गला साफ करते हुये बोले—"प्रभात! तुम कौशिक को राजी कर लो और उसकी माँ को, फिर मुझे कोई एतराज नहीं रह जायेगा। हाँ, यह जरूर अच्छा नहीं लगता कि तुम्हारे माँ-बाप के होते हुये माधवी का ब्याह लखनऊ से हो और वे लोग उसमें शामिल न हों।"

"इसके लिए तो मैंने अभी कुछ नहीं सोचा है; लेकिन इतना जरूर जानता हूँ कि ब्याह की सूचना पिताजी को समय से पहले दे दी जायेगी।

वे आयें या न आयें यह उनकी इच्छा। रह गई कौशिक की बात। सो उसके स्वभाव को मैं भली-भाँति जानता हूँ। जब आप लोगों की सहमति होगी तो वह कभी इन्कार नहीं करेगा।" यह कहकर प्रभात ने गौरी की ओर देखा और व्यस्त स्वर में पूछने लगा—"चाचीजी फिर आप क्या कहती हैं?"

गौरी दुविधा और असमंजस में पड़ गई। वह चिन्तित मुद्रा बनाकर बोली—"इतनी जल्दी न करो प्रभात। इस विषय पर हम लोगों को दो-एक दिन सोचने दो।"

ठीक इसी समय पत्नी के समर्थन में रामचरण बाबू भी बोल उठे—"हाँ प्रभात! तुम्हारी चाची ठीक कहती हैं। कुछ तो दो-चार दिन का मौका दो हम लोगों को सोचने के लिए।"

इस पर हँस कर प्रभात बोल उठा—"हाँ, हाँ! क्यों नहीं चाचाजी मैं एतराज कब करता हूँ?"

इसके बाद प्रभात थोड़ी देर वहाँ और बैठा। फिर कौशिक के पास होता हुआ अपने घर चला गया।

× × ×

घर आकर प्रभात ने गयारी को सारी बातें बताईं और कहा—"दादा! मैंने यही सोचा है कि बस ब्याह तय हो जाय और फिर इसी महीने माधवी की भाँवरें डाल दूँ। पिताजी को भी सूचित कर दूँगा। अगर वे आना चाहेंगे तो चले आयेंगे। मैं अपने हक से अदा हो जाऊँगा—आगे उनकी मर्जी।"

माधवी दूसरे कमरे से भाई की बातें सुन रही थी। उसने वहाँ जाना उचित नहीं समझा। उसने सुना, गयारी कह रहा था—"अरे बबुआ। तुम्हारी बुद्धि तो नहीं मारी गई है। सब बातें तो ठीक हैं; लेकिन ग्याऊँ का मुँह कौन पकड़ेगा? शादी-ब्याह के कामों में सबसे पहले पैसे का सवाल उठता है। उसके लिए तुम क्या इन्तजाम करोगे, मेरी समझ में नहीं आता?"

इस पर प्रभात जोर से खिलखिलाकर हँस पड़ा और हँसते-हँसते बोला—"पैसे की मुझे जरूरत ही नहीं पड़ेगी दादा! मैं ब्याह बिल्कुल साधारण ढँग से करना चाहता हूँ। पहले उन लोगों की स्वीकृति तो मिल जाय।"

गयारी कुछ सोचने लगा। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि बिना धूमधाम के ब्याह आखिर किस तरह शोभा देगा? इस सम्बन्ध में उसने खूब तर्क किये; लेकिन प्रभात उसके हर तर्क को खूबसूरती के साथ काटता चला गया। उसने अपनी योजना के अन्तर्गत आखिर में गयारी से यह कह डाला—"दादा! देश को आज पैसे की जरूरत है। अपने राष्ट्र को शक्तिशाली बनाने के लिए बचत योजना का होना बहुत आवश्यक है। मेरा सिद्धांत है कि कहीं पर भी पैसे का दुरुपयोग न हो। ब्याह-बारात के आयोजनों में लोग बहुत अधिक फिजूल खर्ची करते हैं यह नहीं होना चाहिये। मैं इसके खिलाफ हूँ। आपको मालूम होना चाहिये दादा कि एक समय था जब इस भारतवर्ष को लोग सोने की चिड़िया कहते थे; किन्तु अफसोस आज के दिन इस सोने की चिड़िया के पंखों पर ही केवल सोना शेष रह गया है। उसे सिर से पाँव तक सोने से लाद देना है। कोई इस विषय में सोचे या न सोचे; लेकिन मैं अपने सिद्धांतों को बदल नहीं सकता।"

गयारी प्रभात की बातें सुनकर बहुत प्रभावित हुआ। उसकी खुशी का पारावार न रहा। उसने उठकर प्रभात का मुँह चूम लिया और सिर पर हाथ फेर बलायें लेता हुआ बोला—"बबुआ। सचमुच तुम्हारे विचार बहुत ऊँचे हैं। मालिक बाबू को तो गर्व करना चाहिये तुम्हारा जैसा पुत्र पाकर; लेकिन क्या बताऊँ उनके लिए तो घर की मुर्गी दाल बराबर है।"

माधवी बैठी-बैठी सुन रही थी। प्रभात और गयारी की बातों का अन्त ही नहीं हो रहा था। दो-तीन दिन तक इसी तरह छुटपुट चर्चा चलती रही। और एक दिन प्रभात ने आकर बतलाया कि दादा। कौशिक के माँ-बाप ब्याह के लिए राजी हो गये हैं। मुहूर्त भी उन्होंने पंडित से पूछ

लिया है। माघ वदी दसमी की लगन है। अब आप जुट जाइये ब्याह की तैयारी में। आज सप्तमी हो गई है। ब्याह को केवल तीन दिन शेष रह गये हैं। मैं अभी जाकर पिताजी को तार दिये आता हूँ। जिसमें अगर वे आना चाहें तो माताजी को साथ लेकर दो-एक दिन पहले आ जायँ।

बुड्ढा गयारी खुशी से बावला हो उठा। वह बीच में कुछ थोड़ा-सा असमंजस व्यक्त करता हुआ बोला—"मुझे तो उम्मीद नहीं है बबुआ कि मालिक बाबू आयेंगे और अगर वे आ गये तो यह ब्याह कभी नहीं होने देंगे।"

"वे दिन दूर गये दादा जब खलील खाँ फाख्ता उड़ाते थे। अजी राम भजो मैं उनकी एक नहीं चलने दूँगा। मैं खून-पसीना एक कर दूँगा और माधवी का ब्याह कौशिक के साथ करके ही रहूँगा।"

यद्यपि ये बातें प्रभात ने आवेश में कही थीं, लेकिन फिर भी गयारी को पक्का यकीन हो गया कि प्रभात ने जो सोचा है वह करके रहेगा। उसे उसके निश्चय से कोई डिगा नहीं सकता।

घर में तीन आदमी थे। तीनों ही एक धार में बह रहे थे। प्रभात सोच रहा था कि यदि मैं इस कार्य में सफल हो गया तो मेरी बहन की भावी जिन्दगी मुस्करा उठेगी। वह सुख से रहेगी और जीवन में उसको यह कहने का मौका नहीं रह जायेगा कि मेरे बाप तथा भाई ने मुझे भाड़ में झोंक दिया।

और गयारी की विचारधारा ऐसी थी कि माधवी का ब्याह बिना किसी विघ्न-बाधा के सम्पन्न हो जाय तो फिर क्या कहना है। सारे काम बन जायेंगे। फिर जब ब्याह हो जायेगा तो मालिक बाबू कहाँ तक निष्ठुरता करेंगे। ले देकर उनके एक लड़की है और एक लड़का। वे दोनों में से किसी को नहीं छोड़ पायेंगे; यह मैं जानता हूँ।

किन्तु माधवी सोच रही थी कुछ और ही कि जो किला बनने जा रहा है क्या वह पूरा हो जायेगा? अगर कहीं वह अधूरा रह गया या

बनते-बनते ढह गया तो फिर मैं किसके मुँह में समाऊँगी। दुनिया जिन्दगी भर मेरी ओर उँगली उठाती रहेगी। काश! अगर मनुष्य के जीवन में समस्यायें न आतीं तो वह सुख और सन्तोष का जीवन व्यतीत कर सकता। ऐसी स्थिति में तोष, परितोष और असन्तोष किसी का भी कुछ अस्तित्व नहीं होता। और आदमी मृत्युलोक का वासी होने पर भी अपने सम्मुख प्रत्यक्ष स्वर्ग के दर्शन करने लगता। मेरा भाई हजारों में नहीं, बल्कि लाखों में एक है। ईश्वर उसकी मदद करे। वह अपने कार्य में सब भाँति सफल हो।

इस तरह घर के सभी सदस्य अपने-अपने अन्तर्द्वन्द्व को लेकर दूर की सोच रहे थे। भविष्य उनकी ओर देख रहा था। इच्छायें ललचा रही थीं कि कब मेरी पूर्ति होती है, किन्तु समय और संयोग पर्दे की आड़ में थे। उनका रँग निराला था। वे अनुकूल रहेंगे या प्रतिकूल यह कोई नहीं जानता था।

---

१७

प्रभात के पास रुपया नहीं था; इस बात को कौशिक और रामचरण बाबू दोनों जानते थे। रामचरण बाबू ने पत्नी से इस सम्बन्ध में परामर्श किया और गौरी ने इसी बुनियाद पर अपने पास बुलाया प्रभात को। वह उससे कहने लगी—"देखो प्रभात! संकोच मत करना! मैं तुम्हें गैर नहीं समझती हूँ। बहन का ब्याह खूब धूमधाम से करो। जितने रुपये की जरूरत हो मुझसे ले जाओ।"

"यह नहीं होगा चाची! मैं इस बात का कायल नहीं कि किसी भी काम में फिजूलखर्ची हो। मैं ब्याह बिल्कुल साधारण ढंग से करना चाहता हूँ। अगर आपको इसमें एतराज है तो आप अपने घर पर मोहरें लुटाइये; मुझसे मतलब नहीं।"

प्रभात की ये बातें सुनकर गौरी हँस पड़ी। वह बोली—"तुम भी बिल्कुल कौशिक जैसे ही हो प्रभात। वह भी ऐसी बहकी-बहकी बातें करता है। मैं दहेज नहीं चाहती और न उसका अच्छा ही समझती हूँ; लेकिन फिर भी लड़की पक्षवालों के दरवाजे पर कुछ तो शोभा होनी ही चाहिये। बोलो क्या कहते हो?"

प्रभात सहज स्वभाव ही बोल उठा—"मैं क्या बताऊँ चाची। मैं इन बातों को तनिक भी महत्त्व नहीं देता वैसे जो आप की मर्जी होगी उसके लिए मुझे कोई इन्कार नहीं होगा; क्योंकि माधवी को मैं आपके हाथों में सौंप चुका हूँ।"

इस तरह की बातें जब गौरी ने रामचरण बाबू को बतलाई तो वे

अवाक् रह गये और उससे कहने लगे—"कौशिक की माँ एक काम करो। इस बारे में कौशिक की भी राय जान लो। देखो वह क्या कहता है।"

गौरी ने पति की इस बात पर अवसर अनुकूल देख उसी रात को कौशिक से बातचीत की तो उसने पाया कि उसके विचार भी बिल्कुल प्रभात जैसे हैं। उसने साफ-साफ कहा था कि माँ प्रभात ठीक कहता है।

इस तरह कौशिक के घर में ब्याह की तैयारियाँ होने लगीं और जुट गया प्रभात भी अपने काम में। गयारी उसका हाथ बँटा रहा था। दूसरे दिन अष्टमी थी। माधवी बार-बार गर्दन उठाकर बाप का रास्ता देखती और मन ही मन भय से काँप जाती कि अगर कहीं पिताजी आ गये तो यह ब्याह कभी नहीं होने देंगे। कल भैया उनको तार दे आये थे वे जरूर आयेंगे और आकर विघ्न ही नहीं एक बहुत बड़ा बवाल खड़ा कर देंगे जिसमें चार आदमी तमाशा देखेंगे। वे अपने मन की कर के रहेंगे। काश! वे न आते तो कितना अच्छा होता।

किन्तु नवलबाबू पत्नी जमुना के साथ उसी दिन रात को आ गये। तब माधवी और गयारी रसोई में थे और प्रभात बैठा विचार कर रहा था कि ब्याह को दो दिन रह गये हैं तैयारी क्या करनी है? कोई खास नहीं। बस अपने मित्रवर्ग को दस्ती निमंत्रण पत्र भेज दूँ, यह काफी रहेगा। इस आधार पर उसने हाथ में पैड उठाया और लोगों की सूची बनाने के लिए अभी उस पर कलम चलाया ही था कि नवलबाबू सामने आ खड़े हुये। वे ऊनी शाल में अपने बदन को लपेटे थे। आते ही प्रभात पर उबल पड़े। वे बोले—"वाह! सपूत वाह! खूब हिम्मत की तुमने। मैं नहीं जानता था कि तुम्हारे पेट में दाढ़ी है और तुम इतना नीच काम कर सकते हो।"

प्रभात ने जल्दी से लपक कर माँ के पैर छुये। जमुना ने इस पर कोई आपत्ति नहीं की; लेकिन नवलबाबू एक कदम पीछे हट गये। उन्होंने अपने पैर नहीं छूने दिये। प्रभात यह तो पहले से ही जानता था कि पिता जी आते ही उस पर बिगड़ेंगे। मगर उसने यह कभी नहीं सोचा था कि उनके मुँह से ऐसे भी शब्द निकलेंगे कि ब्याह जैसे पुनीत काम को वे नीच

काम बतलायेंगे। उसने माँ-बाप से बैठने के लिए विनय की और फिर बाप की ओर उन्मुख हो पूछने लगा—"कौन-सा नीच काम मैंने कर डाला है पिताजी।"

नवलबाबू बैठे नहीं वे खड़े ही खड़े झल्ला कर कहने लगे—"इन सब बातों में समय न खराब करो प्रभात। माधवी कहाँ है? मैं उसको अपने साथ अभी कानपुर लिवा जाऊँगा।"

प्रभात बाप को कुछ जवाब दे इसके पूर्व ही उसकी दृष्टि सामने की ओर उठ गई। उसने देखा गयारी आकर नवलबाबू के पैर छू रहा है और माधवी माँ के वक्ष से आकर लग गई है।

नवलबाबू अब गयारी को डाँटने लगे। वे बोले—"क्यों गयारी प्रभात मनमाना करता रहा और तुमने उसे मना भी नहीं किया? अच्छा! तो तुम उसकी बातों में आ गये होगे। लेकिन मैं सावन में अन्धा नहीं हुआ हूँ जो मुझे सब हरा ही हरा दिखाई दे। मैंने दुनिया देखी है गयारी। आजकल के लड़कों को क्या; अगर उनका बस चले तो क्रिस्तान के घर खाना खा लें, मेहतर के हाथ का पानी पी लें। उनकी तो माया ही निराली है। मैं कनौजिया ब्राह्मण हूँ कनौजिया। सारस्वत ब्राह्मण के यहाँ अपनी लड़की कभी नहीं दूँगा। मैं तय करके आया हूँ कि माधवी को अभी अपने साथ ले जाऊँगा।"

नवलबाबू की बातें सुनकर गयारी की बोलती बन्द हो गई। वह कभी प्रभात की ओर देखता; कभी नवलबाबू को ऊपर से नीचे तक निहारने लगता; तो कभी जमुना की ओर देखकर रह जाता। वह बेचारी गुमसुम खड़ी थी। पति के भय के कारण उसका होंठ पर से होंठ नहीं उठ रहा था। और प्रभात बिल्कुल सन्नद्ध खड़ा था बाप से तर्क करने के लिए। वह कहने लगा—"आप माधवी को नहीं ले जा सकते पिताजी। मैंने आपको इसलिए नहीं बुलाया है। आप·····।"

"क्या कहा? मैं माधवी को नहीं ले जा सकता हूँ। तू मुझे रोकेगा। बराबर का हो गया है इसलिए थोड़ा लिहाज करता हूँ वरना एक थप्पड़

में ही तुम्हारी आँखें निकल पड़ेंगी।"

नवलबाबू क्रोध से थर-थर काँप रहे थे। उनकी बातों का प्रभात पर तनिक भी प्रभाव नहीं पड़ा। उल्टे वह उनकी उपेक्षा करके बोला—"इसकी मुझे परवाह नहीं है पिताजी। मैं आपके थप्पड़ से नहीं डरता। आपकी औलाद हूँ। आपका मुझ पर पूरा-पूरा हक है; लेकिन माधवी को मैं यहाँ से कभी नहीं जाने दूँगा। परसों उसका ब्याह है। उसका सौभाग्य सराहिये कि कौशिक जैसे योग्य पात्र के साथ उसका गठबन्धन हो रहा है। मेरी बहन कितने अच्छे घर जा रही है; यह आपको पता नहीं। आप·····।"

नवलबाबू आपे से बाहर हो रहे थे। वे जोर से चिल्ला पड़े—"बन्द करो बकवास और माधवी।" कहकर वे पीछे घूमे और माधवी से कहने लगे—"माधवी जैसे खड़ी हो ऐसे ही चल दो मेरे साथ। तुम्हारा भाई तो पूरा अंग्रेज हो रहा है। ऊँच और नीच में कोई भेद ही नहीं समझता।"

नवलबाबू आगे बढ़े। उन्होंने जमुना से भी कहा—"माधवी की माँ! लड़की को लिवा चलो। प्रभात पर तो भूत सवार हुआ है। चलो हम लोग अभी आखिरी गाड़ी से लौट चलेंगे। यहाँ मैं एक मिनट भी रुकना नहीं चाहता।"

जमुना कुछ कहने ही वाली थी कि गयारी बीच में आ गया। वह अपने मालिक बाबू की खुशामद कर कहने लगा—"न जाइये मालिक बाबू। कम-से-कम रातभर तो रुकिये। क्या पता बबुआ की बातें आपकी समझ में आ जायँ। रसोई बिल्कुल तैयार है। चलिये भोजन कीजिये आप·····।"

नवलबाबू जोर से तड़प उठे। वे बोले—"दूर हो जाओ मेरी आँखों के सामने से गयारी। तुम्हीं ने मेरे लड़के को बहकाया है; उसका दिमाग खराब किया है। तुम्हारी तरह मेरे मगज में भूसा नहीं भरा है जो बेतुकी बातों को सुनने बैठूँ। तुमने मुझे समझ क्या रखा है? नौकर हो उसी हैसियत से बात करो। जाओ फौरन दूर हो जाओ। मैं तुम्हारी

सूरत भी नहीं देखना चाहता हूँ।"

गयारी बच्चों की तरह बलर-बलर रोने लगा। यह देख जमुना का मुँह खुला वह पति से उलाहने के रूप में कहने लगी—"गयारी पर बेकार बिगड़ते हो। तुम्हें जो कहना है प्रभात से कहो। वह बेचारा क्या करे?"

इस पर नवलबाबू कुछ खिसिया गये और उसी खिसियाहट में वे पत्नी से कहने लगे—"मुझे किसी से कुछ नहीं कहना है। चलो जल्दी नीचे उतरो। जहाँ अधर्मी लोग रहते हों उस जगह जाना ही सबसे बड़ा पाप है और फिर मैं तो इतनी देर यहाँ ठहरा रहा। चलो माधवी को भी ले चलो।"

किन्तु माधवी अपने स्थान से टस से मस नहीं हुई। जमुना उसकी ओर देखने लगी और जब डपटकर नवलबाबू ने उससे कहा—"माधवी चलती क्यों नहीं खड़ी क्यों है, क्या लकवा मार गया है?"

अब प्रभात हँस पड़ा। और कहने लगा—"बस अब मैंने फैसला माधवी पर ही छोड़ दिया है। अगर वह जाय तो खुशी से आप उसे ले जा सकते हैं।"

नवलबाबू के क्रोध का पारावार न रहा। वे एकदम आग-बबूला हो उठे और माधवी से कहने लगे—"माधवी मैंने जो कहा क्या सुना नहीं तुमने? चलो नीचे उतरो।"

"नहीं पिताजी।" कहकर माधवी बाप के सामने घूमकर खड़ी हो गई और धीरे-धीरे संयत स्वर में कहने लगी—"पिताजी। अब जब भैया भेजेंगे तभी मैं यहाँ से जाऊँगी। वह आपका घर था। यह मेरे भाई का घर है। आप बड़े हैं, भाई भी बड़ा है। मैं दोनों में से किसी की भी उपेक्षा नहीं कर सकती। आप भैया को राजी कर लें।"

नवलबाबू की आँखें फटकर रह गईं। जमुना माधवी का मुँह देखने लगी और प्रभात अपने मन में फूला नहीं समा रहा था कि माधवी ने उसके पक्ष की बात कही है। गयारी का रोना भी अब बन्द हो गया था और नवलबाबू आवेश में आ माधवी का हाथ पकड़कर जीने की

ओर खींचते हुये दाँत पीसकर कह रहे थे—"अच्छा तुम राजी से नहीं चलोगी तो मैं तुम्हें जबर्दस्ती ले जाऊँगा। तुम्हें चलना पड़ेगा माधवी। मैं जानता हूँ कि प्रभात ने तुमको खूब सिखा-पढ़ाकर पक्का कर दिया है।"

माधवी रोने लगी। वह जीने की चौखट पर पैर अड़ाकर रह गई थी और नवलबाबू एक सीढ़ी उतर उसे अपनी ओर खींच रहे थे। गयारी प्रभात और जमुना तीनों खड़े भौचक्के से यह दृश्य देख रहे थे। तभी सहसा जीने पर पदचाप सुनाई दी। सब लोग चौंककर देखने लगे। रामचरण बाबू ऊपर आ रहे थे और उनके पीछे थी कौशिक की माँ गौरी। दम्पत्ति ऊपर का दृश्य देखकर स्तम्भित रह गये। वे ठिठककर खड़े हो गये और प्रभात उन्हें ऊपर बुलाने लगा।

## १८

माघ का महीना। चिल्ला जाड़े की कड़ी शीत भरी रात। यद्यपि अभी आठ ही बजे थे; लेकिन लगता था कि काफी रात हो गई है। रामचरण बाबू और गौरी दोनों सन्ध्या को अपनी भावी बहू के लिए गहने खरीदने निकले थे। लौटते समय रामचरण बाबू का मन नहीं माना। वे पत्नी से बोले कि चलो प्रभात को भी दिखाते चलें। वहाँ उसकी बहन भी है। दुकानदार से कह ही रक्खा है कि अगर कोई जेवर पसंद न आया तो कल आकर बदल ले जायेंगे। जिसके लिए खरीदे हैं उसकी भी पसंद बहुत जरूरी है। लेकिन प्रभात के घर में महाभारत मचा हुआ है यह वे नहीं जानते थे।

रामचरण बाबू को नवलबाबू अच्छी तरह पहचानते थे, कई बार उनके मिल चुके थे। उनको देखते ही वे ऊपर आ गये और माधवी का हाथ छोड़ दिया।

रामचरण बाबू के पूछने पर जब प्रभात ने उन्हें सारी परिस्थिति समझाई तो वे नवलबाबू से कहने लगे---"आप व्यर्थ की ज़िद करते हैं। ज़माना अब यह नहीं है कि हमारे आगे की पीढ़ियाँ लकीर की फकीर बनकर चलती रहें। अगर हमें अपना बड़प्पन रखना है तो हर बात में छोटों की राय लेना और उनकी योजना पर चलना जरूरी हो जाता है। आप गहराई से इस पर सोचिये। फिर देखिये मैं गलत कहता हूँ या सही ?"

"जी हाँ ! आपकी बातों को मैं दाद देता हूँ। मुझको यह सिखाते

हो कि अपना ही घर फूँककर आप ही तमाशा देखूँ। आपको क्या? आपकी तो पाँचों घी में हैं। कितने बड़े गर्व की बात है आपके लिए कि मर्यादा में हीन होकर भी आप कुलीन ब्राह्मण की लड़की से अपने लड़के का ब्याह कर रहे हैं। सो यह धाँधली नहीं चलेगी। मैं माधवी को अपने साथ ले जाऊँगा। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि आप ही ने बरगलाया है मेरे लड़के को। मैं आपसे सलाह नहीं माँग रहा हूँ। आप जाइये अपना काम कीजिये।" नवलबाबू यह कहकर जोर-जोर से हाँफने लगे।

रामचरण बाबू को क्रोध बहुत कम आता था उनकी मुद्रा हमेशा ऐसी लगती मानो वे मुस्करा रहे हों। वे हँसकर बोले—"अपने गुस्से पर काबू पाइये नवलबाबू। होनहार को कोई नहीं रोक सकता। लड़की के जैसे संस्कार होते हैं और जैसा शिष्टा होता है वह उसी घर जाती है। मैं सफाई नहीं देता कि मैं गुनाहगार हूँ या पाकदामन। लेकिन इतना जरूर कहूँगा कि जो लोग युग की आवाज के साथ कदम नहीं उठाते हैं वे पिछड़ जाते हैं और जमाना उन पर हँसता है। आप दुनिया को नवीनता को उसका बिगड़ा हुआ रूप बताते हैं, प्रगति को पतन कहते हैं; लेकिन मैं कहता हूँ कि पुरानी रूढ़ियाँ दम तोड़ रही हैं और नई सोच नये विचार लेकर नवनिर्माण की ओर बढ़ रही है। आपको प्रभात की बात मान लेनी चाहिये।"

गौरी दोनों हाथों से गहनों के डिब्बे पकड़े माधवी के पास खड़ी थी। और माधवी खड़ी थी एक बुत की तरह। वह जैसे इस समय संज्ञा-शून्य हो गई थी। प्रभात अपनी दोनों भुजाओं पर हाथ रक्खे गर्वोन्नित खड़ा था। गयारी एक कोने में खड़ा यह सब तमाशा देख रहा था। नवल बाबू जिनकी जबान में इस समय लगाम ही नहीं रह गई थी, ताव में भरकर कह रहे थे—"दूसरों का घर बिगाड़ने में लोगों को बहुत आनन्द आता है। आपने यह काम किया तो कोई नई बात नहीं। आपका फर्ज था, आप प्रभात को समझाते; लेकिन आप ठहरे अवसरवादी आदमी

मौके से फायदा उठाना नहीं भूले। तभी यह सब स्वाँग रचा जा रहा है।"

रामचरण बाबू को अब भी क्रोध नहीं आया। वे धीरे से बोले——"मैंने प्रभात को कोई ऐसी राह नहीं दिखलाई है जिस पर चलने में उसकी हानि हो और आपके नाम पर बट्टा लगे। उसकी इच्छा थी कि माधवी के साथ कौशिक का ब्याह हो जाय। मैंने उसका मन रखने के लिए ही ऐसा किया है। आप जो चाहें सो कह सकते हैं। लेकिन मैं इतना जरूर कहूँगा कि आपको अपनी ज़िद छोड़ देनी चाहिये। बराबर का लड़का है। उसकी सलाह मानना आपके लिए जरूरी हो जाता है। मैं ·····।"

"अब रहने दीजिये आप अपनी दलीलें। बहुत सुन चुका। मैं खामख्वाह के लिए दुनिया भर के बवाल में नहीं पड़ना चाहता। माधवी को मैं अपने साथ लिए जा रहा हूँ। फिर देखूँ किसके साथ आप कौशिक का ब्याह करते हैं?" यह कहकर नवलबाबू आगे बढ़े और माधवी का हाथ पकड़कर अपनी ओर खींचते हुये बोले——"माधवी चलती है या नहीं? तू ही सारे झगड़ों की जड़ है। भगवान न तुझे मौत देता है और न मुझे। चल मैं तुझको लेकर ही जाऊँगा। सारे झगड़ों को यहीं खत्म कर दूँगा।"

माधवी असहाय की भाँति रोने लगी और जोर से चिल्ला पड़ी——"मैं नहीं जाऊँगी। आप मुझे जबर्दस्ती नहीं ले जा सकते! भैया····।"

"भैया की बच्ची! मैं जो कहता हूँ वह नहीं सुनती। दुनिया भर का राग अलापती है। चल! चलती है कि नहीं?" यह कहकर नवल बाबू ने माधवी के गाल पर एक जोर का थप्पड़ जमा दिया। वह तिलमिलाकर रह गई।

तभी रामचरण बाबू बीच में आ गये। वे नवलबाबू का हाथ पकड़ते हुये क्रोधित स्वर में कहने लगे——"छोड़िये यह आपकी अच्छी समझदारी है। जबान लड़की पर हाथ उठाते हैं।"

और प्रभात आवेश में आ बाप के हाथ से बहन का हाथ छुड़ाते

हुये रोषपूर्वक कहने लगा—"पिताजी आप जबर्दस्ती करते हैं। माधवी आपके साथ नहीं जायेगी। आप नाहक उस पर हाथ उठाते हैं। मैं···।"

नवलबाबू अब आपे से बाहर हो गये थे। वे प्रभात पर बाज से टूट पड़े। दोनों हाथों से वे उसके मुँह पर थप्पड़ लगा रहे थे और प्रभात पिटता हुआ कह रहा था—"खूब मारिये पिताजी। किसी तरह आपका गुस्सा तो ठंडा हो। आप को मेरी कसम है। आप····।"

जमुना बीच में आ गई। उसने पति के दोनों हाथ पकड़ लिये और रामचरण भी धिक्कारने लगे नवलबाबू को। परिणाम यह हुआ कि वे खिसियाकर वहाँ से चल दिये। विवश जमुना को भी उनके साथ जाना पड़ा।

इस समय रात्रि के दस बज रहे थे। लखनऊ से कानपुर के लिए आखिरी गाड़ी साढ़े-दस बजे जाती थी। दम्पत्ति पैदल ही स्टेशन की ओर बढ़े चले जा रहे थे। रात रो रही थी चाँदी के आँसुओं में, जिसे शबनम और ओस कहा जा सकता था। हवा चल रही थी फहराती हुई मानो यह कह रही हो कि मंजिल बहुत दूर है और मुसाफिर अभी बहुत पीछे है।

जमुना की आँखों से आँसू बह रहे थे। वह आँचल से उन्हें पोंछ रही थी और नवलबाबू उसकी ओर देखकर कह रहे थे—"रोती क्यों हो जमुना? समझ लो कि तुम निःसन्तान थीं। तुम्हारे बच्चे पैदा ही नहीं हुये। ओफ! न छेड़ो अब टूटे तारों को। वे कभी नहीं जुड़ सकेंगे प्रभात लड़का नहीं मेरा दुश्मन है।"

काफी देर के बाद अब चन्द्रमा आकाश में आया था। वह हँस रहा था। जमुना रो रही थी और नवलबाबू अन्दर ही अन्दर सुलग रहे थे।

---

## १९

माघ बदी दसमी को कौशिक और माधवी का ब्याह निर्विघ्न समाप्त हो गया। सब रस्में साधारण ढंग से निभाई गई थीं। बारात रात को आई थी और लड़की सबेरे बिदा कर दी गई।

माधवी अपनी ससुराल चली गई। घर में रह गये प्रभात और गयारी। दोनों उसकी याद कर कर रोते थे और बार-बार यह सोचते कि चलो अच्छा हुआ पिताजी नाराज रहे। खानदानवाले तथा अन्य लोग भी नाक-भौं सिकोड़ रहे होंगे। लेकिन माधवी गई है ऐसे घर जो लोग सच्चे इन्सान हैं और इन्सानियत के मूल्य को अच्छी तरह जानते हैं।

दो दिन बाद प्रभात माधवी को उसकी ससुराल से बिदा करा लाया। वह आई तो ऊपर से नीचे तक सोने-चाँदी के जेवरों से लदी थी। गयारी ने उसे गले लगा लिया और प्रभात के हर्ष का ठिकाना न रहा। वह बहन की बलायें लेता हुआ बोला—"माधवी सच कह बहन तू सुखी तो है?"

माधवी मुस्करा दी और धीरे से बोली—"भैया! तुम जो करोगे उसमें कोई दोष होगा, यह कभी सम्भव नहीं हो सकता। मुझसे क्या पूछते हो? शिकायत अपने आप सामने आ जाती है। और प्रशंसा के बोल लोग बहुत देर में बोलते हैं। आज मैं कितनी प्रसन्न हूँ और मुझे कितना गर्व है कि अगर आप जैसा मेरा भाई न होता तो मैं किस घाट उतरती। भैया मैं.....।" यह कहते-कहते माधवी की आँखों में आँसू भर आये। प्रभात उन्हें पोंछने लगा और वह भाई के कण्ठ से लग गई।

× × ×

कौशिक और माधवी का ब्याह हो गया था; लेकिन नवदम्पत्ति अभी तक जमुना और नवलबाबू का आशीर्वाद लेने नहीं गये थे। एक दिन गौरी ने प्रभात को अपने घर बुलाया और उससे कहा—"प्रभात मैं सोचती हूँ कि बहू और कौशिक को एक दिन के लिए कानपुर भेज दूँ। दोनों माँ-बाप का आशीर्वाद ग्रहण कर घर लौट आयेंगे। बोलो तुम क्या कहते हो ?"

यद्यपि प्रभात अच्छी तरह जानता था कि पिताजी माधवी और कौशिक से सीधे मुँह बात भी नहीं करेंगे; लेकिन फिर भी उसने इस कार्य का विरोध नहीं किया। वह बोला—"मैं क्या बताऊँ चाचीजी ? आपने जो सोचा है वह ठीक ही है।"

बस ! फिर क्या था, दूसरे ही दिन माधवी और कौशिक का कानपुर जाने का आयोजन हो गया।

नवलबाबू जिस दिन से लखनऊ से लौटकर आये थे उस दिन से घर के बाहर नहीं निकले। वे अक्सर सोचा करते कि मैं समाज को कैसे मुँह दिखलाऊँ ? काश ! मेरे बच्चे पैदा ही न हुये होते। मैं निःसन्तान होता। मगर अब क्या करूँ ? अपनी ही औलाद अपने ही मुँह में कालिख पोत रही है किससे जाकर रोऊँ ? समझ में नहीं आता कि क्या होनहार है ? घर में जमुना उनको समझाया करती। वह दुनिया भर की बातें करती; किन्तु नवलबाबू की समझ में कुछ भी नहीं आता। घर के अन्दर वे अपने अन्तर्द्वन्द्व को लेकर केवल अपने तक ही सीमित रह जाते और बाहर मुहल्ले का समाज उन पर कीचड़ उछाल रहा था।

मुहल्लेवाले कह रहे थे कि नवलबाबू की एक भी नहीं चली। माधवी का ब्याह एक सारस्वत ब्राह्मण के घर में हुआ है। सुना है कि उन लोगों ने बिना दहेज लिए ही ब्याह कर लिया है। अब नवलबाबू अपने खानदान-वालों के साथ पंगत में बैठकर खाना नहीं खा सकते। खानदान से ही नहीं, बल्कि जाति से भी उनका बहिष्कार हो गया है। उनको अब कान्य-कुब्ज ब्राह्मण नहीं कहा जा सकता। सारस्वत ब्राह्मणों के वे रिश्तेदार हैं।

इस तरह बाहर के समाज में खिचड़ी पक रही थी। मुहल्ले के निकट सम्पर्कीय लोग जब आकर उनको ये बातें बतलाते तो वे नीचे से लेकर ऊपर तक काँप उठते और जमुना से कहने लगते—कि देखा तुमने माधवी और प्रभात के पीछे मेरी कैसी किरकिरी हो रही है। लोग थू-थू कर रहे हैं। काश! भगवान ने मुझे औलाद न दी होती तो ये बातें सुनने को क्यों मिलती।

जमुना और नवलबाबू अपनी वर्तमान परिस्थितियों में उलझ रहे थे। उन्हें स्वप्न में भी यह आशा नहीं थी कि कौशिक और माधवी एक दिन कानपुर आयेंगे।

नवलबाबू आज बहुत दिनों के बाद घर से बाहर निकले थे। वे चबूतरे पर कमर पर दोनों हाथ बाँधे टहल रहे थे। दिन जा रहा था और रात आ रही थी। दोनों का संगम था। इसीलिए चिड़ियाँ कलरव गान कर रही थीं। आकाश सुरमई हो रहा था। उजाले को विदा देने के लिए अँधेरा आ पहुँचा था और वसन्ती बयार शनैः शनैः बहकर वातावरण में एक मादकता भर रही थी। नवलबाबू सोच रहे थे कि बहुत अच्छा हो अगर मैं यह शहर छोड़ दूँ। लेकिन क्या करूँ बुरी तरह उलझा हूँ। लेन-देन और गिरवीं का काम भी एक बहुत बड़ी बला है। आदमी इसके चक्कर में पड़कर कभी मुक्त नहीं रह पाता। एक जान और हजार बाधायें। कैसे सहूँगा मैं? मुझे तो लगता है कि एक दिन वह आयेगा जब मेरा मस्तिष्क बिल्कुल काम नहीं करेगा और दुनिया मुझे पागल करार कर देगी। तब शायद प्रभात की आँखें खुलें कि मैंने जो कुछ किया, बुरा किया। समाज-समाज है और प्रतिष्ठा-प्रतिष्ठा। एक घर है और दूसरा शृंगार। दोनों ही जीवन के लिए आवश्यक हैं। किसी से भी विमुक्त नहीं हुआ जा सकता।

नवलबाबू अपने विचारों की दुनिया में खो रहे थे। सहसा उनकी दृष्टि सामने उठ गई। एक मोटर ट्रक का हार्न लगातार बजता ही जा रहा था। उन्होंने देखा ट्रक के सामने एक रिक्शा रुका है। उस पर से

एक स्त्री और एक पुरुष नीचे उतर रहा है। ट्रक का ड्राइवर रिक्शेवाले पर बिगड़ रहा है कि किनारे पर न लगाकर उसने बीच में ही रिक्शा क्यों रोक दिया है ? और पुरुष रिक्शेवाले को पैसे दे रहा है।

लेकिन यह क्या ? ये तो माधवी और कौशिक हैं। ये यहाँ कैसे आ गये ? किसने बुलाया था इन्हें आदि-आदि प्रश्न नवलबाबू अपने मन से ही करने लगे और नवदम्पत्ति सामने की ओर बढ़े चले आ रहे थे। अब नवलबाबू को समझते देर नहीं लगी कि ये लोग मेरे घर आ रहे हैं। वे जल्दी से अन्दर चले गये और किवाड़ भेड़कर कुन्डी बन्द कर ली।

कौशिक और माधवी विवाह के बाद जमुना और नवलबाबू का आशीर्वाद लेने आये थे। लेकिन वहाँ बन्द किवाड़े देखकर माधवी आश्चर्य से चौंक उठी और कौशिक से कहने लगी—"अरे अभी तो पिता जी चबूतरे पर खड़े थे शायद हम लोगों को देखकर ही वे अन्दर चले गये। मेरी समझ से पुकारने और आवाज़ देने से कोई फायदा नहीं होगा।"

बाहर माधवी यह कह रही थी और अन्दर किवाड़ों की ओट में खड़े नवलबाबू सब सुन रहे थे। कौशिक माधवी की बातों की ओर ध्यान न देकर आवाज़ दे रहा था—"खोलिये मैं हूँ कौशिक। खोलिये पिताजी हम लोग आपका आशीर्वाद लेने आये हैं।"

जमुना इस समय आँगन में बैठी एक पड़ोसिन से बातें कर रही थी। उसे सामयिक परिस्थिति का तनिक भी बोध नहीं था और नवलबाबू अन्दर से अपने दामाद को जवाब दे रहे थे—"न मेरे कोई लड़की है और न कोई दामाद। तुम लोग वापस लौट जाओ। अगर तनिक भी देर रुक गये तो मेरी बदनामी चार हाथ और आगे बढ़ जायेगी।"

यह सुनकर माधवी ने कौशिक की ओर देखा और कौशिक उसके आनन को निहारने लगा। तब तक अन्दर से फिर आवाज़ आई—"जाओ ! अभी गये नहीं तुम। मैं कहता हूँ अभी इसी दम चले जाओ।"

अब कौशिक को सह्य नहीं हुआ और माधवी की भी आँखों में बल पड़ गये। दंम्पत्ति घूम कर चल दिये। तब अमावस की काली रात धरती

पर स्याही पोत रही थी। तारे उसका उपहास कर रहे थे और मानव निर्मित विद्युत-प्रकाश यत्र-तत्र फैल रहा था। दम्पत्ति चले जा रहे थे पथ पर बढ़ते, आपस में बातें करते हुये। माधवी पति को लक्ष्य करके कह रही थी—"देखा तुमने बाप कितना कठोर होता है।"

लेकिन इसके उत्तर में कौशिक दूसरी ही बात कह रहा था—"माँ-बाप किसी के कठोर नहीं होते माधवी। जो समाज की पुरानी रूढ़ियों से डरते हैं वे कायर होते हैं, जिन्दगी भर हतोत्साहित रहते हैं। ऐसे ही व्यक्तियों में तुम्हारे पिताजी का भी शुमार है।"

स्टेशन करीब आ गया था। रेलों की सीटियाँ सुनाई दे रही थीं। माधवी और कौशिक बातें करते-करते पैदल ही चले आये। रास्ता किस तरह तय हो गया यह उन्हें बोध ही नहीं हुआ।

सामने सेन्ट्रल धर्मशाले के पोर्टिको में एक कार खड़ी थी। देशी दवा का उस पर एक बड़ा-सा पोस्टर लगा था—लिखा था—'वेदना-हरण' रस' शरीर के हर दर्द को पुड़िया खाते ही आराम पहुँचाता है। कार में लगा लाउडस्पीकर बज रहा था। गीत चल रहा था 'बहुत बेआबरू होकर तेरे कूंचे से हम निकले'—कौशिक ने माधवी की ओर देखा। उसका सिर लज्जा से नत हो गया था। धर्मशाले की छत पर स्लाइड्स स्क्रीन पर दिखलाई जा रही थीं। वह कनखिओं से उधर देखने लगी। तभी सामने खड़ी बस का भोंपू बज उठा। दम्पत्ति एक किनारे होकर चलने लगे।

---

# भाग २

## २०

होली जैसा वर्ष का महान् त्यौहार हो गया; लेकिन प्रभात कानपुर नहीं आया और न उसको माँ-बाप का कोई पत्र ही मिला जो वह होली घर पर मनाने की सोचता। उसके कान उस दिन खड़े हो गये थे जब माधवी और कौशिक वापस लौट आये और उसको बतलाया कि नवलबाबू ने उन लोगों को देखकर घर के किवाड़ बन्द कर लिये। तब से वह घर की ओर से बिल्कुल उदासीन हो गया था और अक्सर सोचा करता कि पिताजी की जिद उनके बुढ़ापे की दुश्मन हो रही है। अपनी सन्तान से विमुख होकर वे सुख-लाभ कभी नहीं कर सकते। सोचने-विचारने में ही एक दिन उनके जीवन का दीप बुझ जायेगा। वे हाथ पसारे चले जायेंगे और सब कुछ यही पड़ा रह जायेगा।

घर में गयारी था। माधवी ससुराल चली गई थी। उसके लिए ससुराल के घर में कोई प्रतिबन्ध नहीं था। वह ससुर रामचरण के आगे मुँह ढकती और सास गौरी को माँ के तुल्य समझती थी। दम्पत्ति अपनी बहू को पुत्रीवत् स्नेह करते थे। तभी वह स्वतंत्र थी जब मन होता तो भाई के घर चली जाती और थोड़ी देर बाद वापस लौट आती। सास-ससुर उससे मन ही मन फूले नहीं समाते।

उधर प्रभात शालिनी को भी नहीं भूला था। वह अवसर उसके घर पहुँच जाता। देवराज फिर अपनी नौकरी पर जाने लगा था। घर में सावित्री का अन्याय शालिनी पर निरन्तर जुल्म बनकर बरस रहा था; लेकिन शालिनी की समाई असीम थी। वह एक आँख से हँसती और दूसरी

से रोती थी।

एक दिन कौशिक और माधवी में परस्पर पढ़ाई-लिखाई की बातें हो रही थीं। माधवी ने अफसोस जाहिर करते हुये कहा—"मेरा यह साल बेकार चला जायेगा, परीक्षा नहीं दे पाऊँगी। अब परसाल ही इम्तहान में बैठ सकूँगी।"

कौशिक यह सुनते ही हँस पड़ा और हँसते-हँसते कहने लगा—"अच्छा तो तुम शिक्षा को अधिक महत्त्व देती हो यह बहुत अच्छा है। ढील-ढाल में इस साल मामला रह गया वरना कोई मुश्किल नहीं था तुम इस साल भी परीक्षा दे सकती थी।"

इसके बाद ही कौशिक दूसरी बात कहने लगा। वह बोला—"अगर भारतीय नारी तुम्हारी ही तरह माधवी शिक्षा का महत्त्व समझने लगे और माँ-बाप, पति तथा सास-ससुर इस बात पर कमर कस लें कि उनके परिवार की कोई भी लड़की, कोई भी बहू अशिक्षित न रहे तो हमारे जर्जर समाज में एक नई ज्योति जग सकती है। पुरुषों के साथ स्त्रियाँ भी आगे बढ़ें, देश के लिए यह कितने बड़े गौरव की बात है। लेकिन दुःख का विषय है माधवी। हमारी पुरानी रूढ़ियों का जादू अब तक समाज के सिर पर चढ़कर बोल रहा है। लोग स्त्रियों की पढ़ाई-लिखाई की ओर बिल्कुल ध्यान ही नहीं देते हैं। दूर क्यों जाओगी यहीं देख लो, देवराज के घर में कैसी छीछालेदर मची रहती है। शालिनी को देवराज घर पर पढ़ाता था इसलिए कि किसी तरह वह प्राइवेट मैट्रिक की परीक्षा पास कर ले उसके बाद आगे थोड़ा-बहुत और पढ़ लेने पर उसे किसी कन्या पाठशाला में अध्यापिका की जगह मिल जायेगी। किन्तु सावित्री इस पक्ष में नहीं है। वह हमेशा विरोध ही करती रहती है।"

यह सुनकर माधवी कुछ गम्भीर हो आई। वह धीरे-धीरे कहने लगी—"यह सावित्री की ज्यादती है। वह गाँव के मूढ़ समाज में पली और दकियानूसी विचारों से खेली है। उसके संस्कार पुरानी परम्परा की डोर में बँधे हैं। उसकी जबान में तो खाई-खन्दक ही नहीं। वह सब कुछ कह सकती है। देखो न! भैया के प्रति लाँछन लगाते भी वह नहीं

चूकी कि शालिनी से प्रभात का लगाव है। तभी वह रोज दौड़-दौड़ कर आता है। मैं कहती हूँ कि यह सब कोरी बकवास नहीं तो और क्या है।?"

इस पर कौशिक ने पत्नी की बातों का समर्थन किया। वह बोला—"तुम ठीक कहती हो माधवी। प्रभात को मैं अच्छी तरह से जानता हूँ। वह कर्त्तव्यपरायण व्यक्ति है। दुनिया मूखे में रपटती है; लेकिन गीले में भी उसका पैर नहीं रपट सकता—यह मुझे विश्वास है। वह पीछे हटने वाला आदमी नहीं, आगे बढ़नेवाला जीव है। उसे शालिनी से सहानुभूति है तभी वह उससे समवेदना प्रकट करता है। दुनिया उल्टे-सीधे और गलत-सही कुछ भी अर्थ लगाती रहे इसकी उसे पाई भर चिन्ता नहीं है। देखो हम लोगों के ब्याह में ही उसने कितने साहस से काम लिया और सच बात तो यह है माधवी कि आगे बढ़ने वाले को दुनिया कभी नहीं रोक पाती है अगर उसमें सच्ची लगन हो।"

इस तरह उस दिन देर तक दम्पत्ति में प्रभात और शालिनी की चर्चा चलती रही। रात को जब माधवी चारपाई पर लेटी सोने का उपक्रम कर रही थी तब भी उसके मस्तिष्क में स्त्रियों की स्वतंत्रता का प्रश्न चक्कर काट रहा था। वह सोच रही थी कि स्वतंत्र विचारधारा वाले घर किस तरह खुशहाल हैं। मेरे पीहर में इस समय दुःख के बादल छा रहे हैं ऐसे ही पता नहीं कितने घर होंगे जहाँ पर नारी विवश और लाचार होगी। मेरी माँ और सास गौरी में कितना अन्तर है, एक कुएँ की मेढकी है और दूसरी मुक्त गगन की चिड़िया। दोनों में समता कभी नहीं हो सकती। बन्धन और आजादी दोनों एक-दूसरे के कट्टर विरोधी हैं। ऐसे ही वातावरण में पल रही है शालिनी। उसका जीवन भी उस कठपुतली की भाँति हो रहा है जो मदारी के इशारों पर नाचती है। काश! सारी दुनिया बदल जाती। स्त्री और पुरुषों को समान अधिकार प्राप्त होते। सभी मुक्त होकर धरती पर विचर सकते तो सोने में सुगन्ध आ जाती। पत्थर में फूल खिल उठते और अन्धे भारतीय समाज को आँखें मिल जातीं। जिससे वह अपना वास्तविक रूप अच्छी तरह देख सकता।

माधवी को जब तक नींद नहीं आई वह इन्हीं विचारों में तल्लीन रही। वह खुली छत पर सास के पास चारपाई डाले लेटी थी। शुक्ल पक्ष की चन्द्रिका चाँदी-सी फैल रही थी। चैती बयार अपने में भीनी-भीनी सुगन्ध का समावेश लिए धीरे-धीरे डोल रही थी। तभी सहसा गोरी ने करवट बदली। उसकी आँखें खुल गईं। उसने देखा कि माधवी नीले शून्य की ओर ताक रही है। उसके चेहरे पर गम्भीरता की स्पष्ट छाप है तो वह उठ बैठी और निकट जा स्नेहपूर्वक पतोहू के सिर पर हाथ फेरती हुई बोली—"अरे! तू अभी सोई नहीं पगली! क्या सोचा करती है? आधीरात हो गई है सो जाओ नहीं तो फिर सबेरे देर से आँख खुलेगी।"

माधवी सास का स्नेह पाकर—निहाल हो उठी। उसने कुछ भी नहीं कहा—चुपचाप पलकें मूँद लीं और सोने का उपक्रम करने लगी।

## २१

माधवी का ब्याह हो जाने के बाद नवलबाबू में बहुत बड़ा परिवर्तन आ गया था। वे प्रायः घर से बहुत कम निकलते । बहुत से आवश्यक कामों को भी टाल जाते। दिन-रात घर में पड़े रहते थे। जमुना उनको दुनिया भर की बातें समझाया करती; लेकिन वे जैसे कुछ सुनते ही नहीं थे। हमेशा अपने मन में ही गुना करते। प्रभात, माधवी, और कौशिक उनकी आँखों के सामने विचार के क्षणों में आकर नाचने लगते और वे अकारण ही क्रोध से साक्षात् कर अपना मन खराब करते रहते।

बरसात का मौसम था। इस साल पानी अभी तक नहीं बरसा। पूरा अषाढ़ बीत गया था। जमुना के कुछ फुन्सियाँ निकलीं और ठीक हो गईं। किन्तु होनहार की बात; नवलबाबू के पेट में फोड़ा बन गया जो भीतर ही भीतर पक गया और वे समझ रहे थे कि पेट में दर्द है जो चौबीस घंटे रहता है, एक मिनट के लिए भी शान्त नहीं होता। जब पेट की पीड़ा अधिक बढ़ी तो उन्होंने दौड़-धूप शुरू की। डाक्टरों ने बताया कि पेट के अन्दर दाहिनी तरफ एक फोड़ा बन गया है जिसमें मवाद भी पड़ चुका है, अगर कहीं फोड़ा पेट में ही फूट गया तो सारी देह में जहर फैल जायेगा। ऐसी स्थिति में बहुत कठिनाई हो जायेगी। फोड़ा खतरनाक है। इसका आपरेशन जल्दी से जल्दी हो जाना चाहिये।

नवलबाबू की जान सूख गई और जमुना भी मन ही मन देवी-देवता मनाने लगी। एक डाक्टर थे नवलबाबू के पड़ोसी और उनके समवयस्क। उनकी सलाह थी कि फोड़े का आपरेशन अगर लखनऊ के मेडिकल कालेज

में हो तो बहुत अच्छा है; क्योंकि पेट का आपरेशन है। यहाँ अगर तनिक भी बिगड़ गया तो फिर लेने के देने पड़ जायेंगे।

नवलबाबू को उक्त सलाह बहुत पसंद आई। उन्होंने जमुना सहित लखनऊ जाने की पूरी तैयारी कर ली और साथ में एक दिन के लिए अपने डाक्टर मित्र को भी लिवा गये। उनका अनुमान था कि डाक्टर के साथ जाने से मेडिकल कालेज में उनको पूरा-पूरा आराम मिलेगा। आपरेशन भी सावधानी के साथ होगा और केस बिगड़ने की तो बिल्कुल सम्भावना ही न रहेगी।

इस तरह अपने निश्चयानुसार नवलबाबू लखनऊ पहुँच गये। उसी दिन वे मेडिकल कालेज में भर्ती हो गये और दूसरे दिन प्रातः उनके फोड़े का आपरेशन हो गया जो सर्वथा सफल रहा। उनका डाक्टर मित्र वापस लौट गया और जमुना रह गई वहीं प्राइवेट वार्ड में, जहाँ आपरेशन होने के बाद नवलबाबू को लिटाया गया था।

× × ×

प्रभात इतवार को देवराज के घर गया। उसका आशय था कि आज छुट्टी का दिन है देवराज फुरसत में होगा। कुछ देर बैठकर उससे बातें करूँगा। वहाँ जाने पर ज्ञात हुआ कि देवराज एक मुर्दनी में गया है और शालिनी को अभी-अभी आकर माधवी लिवा ले गई है। सावित्री ऐसे स्वभाव की स्त्री नहीं थी कि प्रभात उसके पास कुछ देर बैठता और बातें करता। वह चुपचाप उन्हीं पैरों लौट आया। सावित्री ने उससे बैठने तक के लिए नहीं कहा। पता नहीं उसे प्रभात से कितनी घृणा थी, कितना द्वेष था और थी कितनी ईर्ष्या। सभी कुछ असीम था। उसकी माया को ईश्वर ही समझ सकता था।

प्रभात, देवराज के घर से अपने घर नहीं गया। वह सीधा कौशिक के घर पहुँचा। वहाँ भीतर स्त्रियों में विनोदपूर्ण वार्ता चल रही थी। गौरी बैठी मुस्करा रही थी। शालिनी और माधवी हँस-हँसकर बातें कर रही थीं। कौशिक नहाने की तैयारी कर रहा था और मण्डी से सब्जी

लेकर लौट रहे थे रामचरण बाबू। वे कमरे में पैर रखते ही आवाज़ देकर पुकारने लगे—"कौशिक की माँ! कहाँ हो? जरा सुनना तो।" यह कहते-कहते वे गौरी के पास जा खड़े हुये और आश्चर्य प्रकट कर कहने लगे—"अरे कुछ सुना तुमने? हमारे समधी नवलबाबू के पेट का आपरेशन परसों यहीं मेडिकल कालेज में हुआ है। सुना है कि पेट के अन्दर फोड़ा बन गया था। मुझे तो अभी एक आदमी ने बतलाया; वह वहीं का है मुझे अच्छी तरह जानता है। वे·····।"

"एँ! अच्छा बड़े निठुर हैं समधी जी। किसी को खबर भी नहीं दी। कम-से-कम ऐसे मौके पर उन्हें प्रभात को नहीं भूलना चाहिये था।" चौंकती हुई गौरी यह कहने लगी।

अब प्रभात भी वहाँ आ गया था। शालिनी और माधवी की भी मुद्रा आश्चर्य चकित हो रही थी और रामचरण बाबू कह रहे थे—"प्राइवेट वार्ड में हैं। मैं तो अभी जाता; लेकिन दफ्तर को देर हो जायेगी। लौटने ही मिलूँगा।"

प्रभात यह सुनकर सन्न रह गया। वह दुःखी होकर रामचरण बाबू से कहने लगा—"चाचाजी बाप कभी कठोर नहीं हो सकता। समय और परिस्थितियाँ उसे विवश कर देती हैं। यही गति पिताजी की है। मैं अभी जाता हूँ और देखता हूँ क्या हाल है?" यह कहकर प्रभात जाने को उद्यत हो गया।

माधवी सास के कान में कुछ कहने लगी। यह देख रामचरण बाबू वहाँ से चले गये। तब गौरी ने आवाज़ दी और प्रभात को रोककर कहा—"ठहर जाओ प्रभात अपनी बहन को भी लिवाते जाओ।"

इतने में गीले तौलिये से देह पोछता हुआ कौशिक भी वहाँ आ गया। परिस्थिति का बोध होते ही वह भी साथ जाने को तैयार हो गया। तब चल दी थी शालिनी भी माधवी के साथ न जाने क्या सोचकर दुनियादारी के नाते अथवा विशेष घनिष्टत्व के कारण।

× × ×

नवलबाबू को आपरेशन हो जाने के बाद काफी आराम मिल गया था। यद्यपि पेट में मीठा-मीठा दर्द हो रहा था; लेकिन वे उसकी अनुभूति न कर जमुना के साथ बातों में लगे थे। वार्ड में सीलिंगफैन अपनी हवा फैला रहा था; किन्तु उमस के कारण वह गर्म-गर्म-सी लगती। मोसमी का रस निचोड़ प्याली पति की ओर बढ़ाती हुई जमुना कह रही थी—"आज बहुत गर्मी है, लगता है पानी बरसेगा।"

पत्नी के समर्थन स्वरूप नवलबाबू कुछ कहने जा ही रहे थे कि सहसा सामने कुछ लोगों को आते देख वे चुप रह गये। आगे-आगे प्रभात था उसके पीछे कौशिक और उन दोनों के पीछे थीं दो स्त्रियाँ। जिनमें से एक को तो नवलबाबू पहचान गये वह माधवी थी और दूसरी अपरिचिता को जमुना भी नहीं पहचान पाई कि वह कौन है?

यह प्राइवेट वार्ड बहुत छोटा था। नवलबाबू के अतिरिक्त यहाँ दूसरा कोई मरीज नहीं था। जमुना ने फर्श पर चटाई बिछा रक्खी थी। माधवी और अपरिचिता दोनों उसके पास आकर बैठ गईं। कौशिक तथा प्रभात चारपाई के पास खड़े रहे। दोनों ने नवलबाबू को प्रणाम किया और उनको चरण रज माथे से लगाई; लेकिन नवलबाबू बहुत कठोर थे वे किसी से बोले ही नहीं।

जमुना भी प्रभात पर बहुत नाराज थी। उसने जब पैर छुये तो उसके मुंह से आशीर्वाद तो निकला; लेकिन फिर आगे उसने पुत्र की ओर आँख उठाकर देखा भी नहीं। माधवी से जमुना को जब यह ज्ञात हुआ कि वह अपरिचिता कोई और नहीं शालिनी है तो उसके चेहरे पर विकृति की रेखायें दौड़ गईं और मुंह घृणा से बिचक कर रह गया।

कौशिक और प्रभात देर तक नवलबाबू से बातें करते रहे; मगर उनका होंठ पर से होंठ नहीं उठा। इसी तरह जमुना केवल माधवी से बातों में व्यस्त रही और किसी की ओर उसने ध्यान ही नहीं दिया। प्रभात ने चलते समय उसको अपने घर ले जाने के लिए जोर दिया; किन्तु उसने टाल दिया कि यहाँ बीमार की देख-भाल कौन करेगा।

प्रभात सारी परिस्थिति समझ गया कि उसकी मौजूदगी माँ-बाप को अच्छी नहीं लग रही है। दूसरे दिन आने के लिए कहकर वह चल दिया। अन्य सब लोग भी उसके साथ हो लिये।

जब सब लोग चले गये तो नवलबाबू जमुना से कहने लगे—"देखा! प्रभात पर कैसी बेहयायी सवार है। शालिनी को साथ लिये-लिये डोलता है। इस लड़के ने तो मेरी सारी इज्जत धूल में मिला दी है। काश! भगवान मुझे अब उठा लेता तो बहुत अच्छा होता। मैं·····।"

"चुप भी रहो! कैसी बातें करते हो।" जमुना बीच में बोल उठी।

नवलबाबू पत्नी की ओर देखने लगे। बातचीत का प्रसंग यहीं पर समाप्त हो जाय इसलिए जमुना वहाँ से उठ गई। वह वार्ड के बाहर जा नल पर मुँह-हाथ धोने लगी। प्रातः से लेकर अब तक वह एक मिनट के लिए भी पति के पास से नहीं हटी थी। उपचार और परिचर्या में कहीं कोई त्रुटि न रह जाय। इसका उसे बहुत ख्याल था। पति के मुँह से निकली अशुभ बात उसे सह्य नहीं हुई। उसके प्रति वह मन ही मन कामना कर रही थी कि वे (नवलबाबू) जल्दी ही स्वस्थ हो जायें तो अगली पूर्णमासी को मैं सत्यनारायण भगवान की कथा सुनूँगी।

## २२

दूसरे दिन कौशिक नहीं आ सका केवल प्रभात और माधवी ही नवल बाबू को देखने आये। प्रभात माँ के पीछे पड़ गया और आखिर उसको इस बात के लिए राजी कर लिया कि शाम को वह उसके घर चलेगी। नवलबाबू को यह बहुत बुरा लगा। जब दोनों चले गये तो वे जमुना पर लाल-पीले होने लगे। वे डाँटकर बोले—"मेरे सामने तुम्हारी यह हिम्मत कैसे पड़ गई जो प्रभात से कह दिया कि हाँ शाम को आ जाना। तब तुम्हारे साथ चलूँगी।"

जमुना ने चुप रहने में ही भलाई समझी। लेकिन नवलबाबू का पारा गरम हो रहा था। वे छूटते ही फिर बोल उठे—"मेरे सामने मनमानी नहीं चलेगी। प्रभात के घर जाने की कोई जरूरत नहीं, समझीं। अगर कल तुमने माधवी को मुँह न लगाया होता तो आज कोई नहीं आता। न जाने तुम इतनी जल्दी कैसे पसीज जाती हो जबकि औलाद माँ-बाप का नाम डुबाने पर तुली हुई है।"

अब जमुना को बोलना पड़ा। वह मोसमी छील रही थी। उसको एक ओर रख पति की ओर उन्मुख हो धीरे-धीरे कहने लगी—"जो कुछ नेकनामी और बदनामी होने को थी सो हो गई, अब क्या जिन्दगी भर के लिए अपने लड़के और लड़की से तल्ला तोड़ लूँ? यह मुझसे नहीं होगा। तुम अपने को पत्थर का बना लो; लेकिन मैं निठुर नहीं बन सकती। मैं माँ हूँ। मुझे·····।"

"आवेश में न आओ प्रभात की माँ। तुम्हें कुछ मान-मर्यादा का

भी ध्यान है। भला सोचो तो कि खानदान और मुहल्लेवाले क्या कहेंगे। मैं अपना सिर ऊँचा रखना चाहता हूँ और तुम·····।"

जमुना की देह में आग-सी लग गई। वह बात काटकर बोल उठी—"मुहल्ले और खानदानवाले लोग आकर मेरी चिता में आग नहीं लगायेंगे। प्रभात और माधवी ने कोई बुरा काम नहीं किया है जिसके लिए समाज उन्हें थूकेगा। जमाने की हवा ही बदल रही है अगर उन पर नये युग का प्रभाव पड़ गया है तो इसके यह मतलब तो नहीं कि हम लोग उनसे मुंह से न बोलें और घर से निकाल दें। मुझे अकेला घर सूना लगता है। मैं अपने बच्चों से अलग नहीं रह सकती।"

"तो फिर तुम्हें मेरा साथ छोड़ना होगा। बोलो है मन्जूर?"

नवलबाबू की यह बात सुनते ही जमुना ताव में आकर कहने लगी—"बस ऐसी ही धमकियों से तो तुम मुझे डरा लेते हो। कभी घर के भविष्य की ओर नहीं देखते कि वह किधर जा रहा है। बहुत हो चुका। अच्छे हो जाओ फिर लड़की और दामाद को घर पर बुलाओ। सत्य-नारायण की कथा सुनो और·····।"

"और जब प्रभात शालिनी को लाकर घर में बैठा दे तो फिर ऐसा ही करो। यही न!" नवलबाबू का चेहरा क्रोध से लमलमा उठा था।

लेकिन जमुना ने पति के गुस्से की तनिक भी परवाह नहीं की। वह शिकायत के स्वर में बोल उठी—"तुम तो हमेशा उल्टी ही बात सोचते हो अगर सब लोग यही करने लगें तो फिर चल चुका काम दुनिया का। मेरा तो कहना यह है कि घर का कोई बर्तन अगर छूत हो जाता है तो उसे फेंक नहीं दिया जाता, बल्कि शुद्ध कर लिया जाता है। फिर प्रभात तो हाड़-माँस का पुतला है अपनी सन्तान है।"

नवलबाबू एकदम उबल पड़े। वे बोले—"मुझे उपदेश न दो। मैं सब जानता हूँ कि प्रभात का जादू तुम पर चढ़कर बोल रहा है। तुम उसके बहकावे में आ सकती हो; लेकिन मैं कच्ची गोलियाँ नहीं खेला हूँ। तुमसे एक बार फिर कह रहा हूँ कि अगर मेरा कहना न माना

और प्रभात के साथ उसके घर गई तो बहुत बड़ी बुराई हो जायेगी। मैं तुम्हें घर में नहीं घुसने दूँगा।"

इस पर जमुना मौन रही। वह वाद-विवाद को आगे नहीं बढ़ाना चाहती थी। नवलबाबू देर तक बड़बड़ाते रहे; किन्तु उसने एक भी बात का जवाब नहीं दिया।

× × ×

तीसरा पहर हो रहा था; लेकिन दम्पत्ति का मौन नहीं टूटा। वे अलग-अलग अपनी परिस्थितियों पर विचार कर रहे थे। जमुना सोच रही थी कि बहुत दिन तो समाई की, उनकी (नवलबाबू) बात मानी; मगर अब मुझसे नहीं रहा जाता। मैं अपने लड़के और लड़की को किसी भी शर्त पर नहीं छोड़ सकती। जाति-बिरादरी वाले साथ नहीं खायेंगे और न खिलायेंगे इससे कुछ भी बनता-बिगड़ता नहीं है। समाज के भय से मैं अपनी सन्तान की ओर से मुँह मोड़ लूँ यह मेरे वश का नहीं है। वे मना करते हैं तो करते रहें; किन्तु मैं प्रभात के साथ शाम को उसके घर जरूर जाऊँगी।

न जाने जमुना में कितना मोह माया बनकर उमड़ पड़ा था कि वह बावरी-सी हो रही थी। उसे समाज, जाति-बिरादरी और कुल की उच्चता का तनिक भी भय नहीं रह गया था। वह सोच रही थी कि घर में जब खेलने-खानेवाले ही न होंगे तो मर्यादा को लेकर मैं क्या चाटूँगी, ओढ़ूँ या बिछाऊँगी। लड़के-लड़कियों के ऊँचे-नीचे कदम पड़ जाते हैं तो क्या घरवाले उन्हें घर से निकाल देते हैं। फिर प्रभात ने कोई बुरा काम नहीं किया। उसने नई सभ्यता की ओर कदम बढ़ाया है, जिसमें नवनिर्माण निहित है। कुछ भी हो मैं प्रभात को कभी गलत नहीं कहूँगी। वे कहते हैं कि प्रभात ने उनकी खिलाफत की है; लेकिन मैं कहूँगी कि यह सब झूठ है प्रभात ने बाप के सामने अपने नये सुझाव पेश किये हैं और नये तथा पुराने विचार आपस में नहीं मिल पाते हैं यही झगड़ा है।

किन्तु नवलबाबू की विचारधारा कुछ और ही थी। वे जमुना

के प्रति सोच रहे थे कि बाप की अपेक्षा माँ अधिक दयालु होती है। उसकी ममता गीली होती है। वह अपनी सन्तान के लिए कभी कठोर नहीं बन सकती। यही हाल जमुना का है। मेरे डर से वह अब तक चुप रही और समाई किये बैठी रही। माधवी और प्रभात को देखते ही उनकी ओर झुकने लगी। वह औलाद को सिर्फ प्यार करना जानती है दण्ड देना नहीं। लेकिन मैं प्रभात को कभी माफ नहीं कर सकता। अगर आज जमुना उसके घर गई तो मैं उससे भी कोई मतलब नहीं रक्खूँगा।

लेकिन नवलबाबू ऐसा सोचते ही रह गये। शाम को प्रभात आया और जमुना को अपने साथ लिवा ले गया। उस समय उनकी आंखों से चिनगारियाँ निकल रही थीं लगता था कि क्रोध के आधिक्य से वे पागल हो रहे हैं।

---

## २३

जमुना जब प्रभात के घर पहुँची तो रात हो गई थी। गयारी आते ही अपनी मालकिन की खुशियाबरदारी करने लगा। फिर प्रभात का संकेत पा माधवी और कौशिक को बुलाने चला गया।

जमुना प्रभात के स्टडी-रूम में जाकर बैठ गई और इधर-उधर की बातें करने के बाद फिर कहने लगी—"जानते हो प्रभात कि आज तुम्हारे पिताजी ने मुझसे क्या कहा है?"

"क्या कहा है माँ?" प्रभात चौंककर माँ की ओर देखने लगा।

जमुना एक लम्बी साँस लेकर कहने लगी—"मैं तुम्हारे घर आई हूँ इसलिए वे अब मुझे घर में नहीं घुसने देंगे। बहुत बिगड़ रहे थे।"

"छोड़ो माँ इसकी मुझे चिन्ता नहीं है।" उपेक्षापूर्वक प्रभात ने कहा और फिर पूछने लगा—"मैं तुमसे पूछता हूँ माँ कि मैंने माधवी का ब्याह कौशिक के साथ करके गलती की है अगर तुम भी ऐसा समझती हो तो·····।"

"नहीं प्रभात! मैं तुम्हें दोष कैसे दूँ। मैं तो यह जानती हूँ कि तुमने अपनी बहन की सुख-सुविधा के लिए ही ऐसा किया है। जग हँसाई को छोड़ो। यह तो दुनिया है कुछ न कुछ कहती ही रहती है। अब जो हो गया है उसको पीछे डालकर आगे बढ़ना है। यही समझदारी है। काश! तुम्हारे पिताजी किसी तरह मान जाते तो मेरा उजड़ा घर एकबार फिर बस जाता।"

माँ के मुँह से यह सुनकर प्रभात हर्ष से फूल उठा। वह बोला—

"माँ दुनिया बहुत आगे बढ़ चुकी है और पिताजी अभी पीछे खड़े हैं। देश में ही नहीं सारे संसार में अन्तर्जातीय व्याह जोर पकड़ रहे हैं। जाति-पाँति के भेद-भाव ही ने देश में फूट को जन्म दिया, जिससे उसकी सारी समृद्धि क्षत-विक्षत हो गई। फिर कौशिक तो ब्राह्मण है। उस पर भी पिताजी चौंकते हैं तो फिर इसके लिए मैं क्या करूँ?"

जमुना प्रभात को समझाने लगी। दोनों में वार्ता चल रही थी कि माधवी और कौशिक भी वहाँ आ गये। इस तरह बातचीत में ही दस बज गये। तब जमुना को बोध हुआ कि उसे अभी मेडिकल कालेज जाना है।

थोड़ी देर बाद प्रभात माँ को नवलबाबू के पास छोड़कर चला आया। वे उस समय पत्नी से कुछ नहीं बोले; लेकिन प्रभात के जाते ही उस पर बरस पड़े। वे बोले—"अब तुम यहाँ क्या करने आई हो। जहाँ गई थी वहीं जाकर रहो। मुझे किसी के सहारे की जरूरत नहीं है। जाओ। मैं तुम्हें यहाँ एक मिनट भी नहीं ठहरने दूँगा।" यह कहकर वे उठने का प्रयास करने लगे।

यह देख जमुना उठकर खड़ी हो गई और पति को लेटाती हुई विनम्र स्वर में कहने लगी—"लेट जाओ। यह क्या करते हो? जख्म अभी ताजा है टाँके टूट जायेंगे। तुम·····।"

"मैं कहता हूँ कि मुझसे बात न करो। मेरे सामने से हट जाओ। मैं तुम्हारा मुँह भी नहीं देखना चाहता हूँ। मैं मना करता रहा और तुम चली गई।" दोनों हाथों से पत्नी को पीछे ढकेलते हुये नवलबाबू यह कह रहे थे कि सहसा आपरेशन के घाव का एक टाँका टूट गया। वे काँखकर रह गये और लेट रहे। जमुना पास आ गई और पूछने लगी—"क्या हुआ? क्या हुआ?"

लेकिन नवलबाबू मुँह से नहीं बोले। थोड़ी देर बाद जब नर्स और डाक्टर उन्हें देखने आये तो फौरन उनको आपरेशन-रूम में ले जाया गया और नया टाँका लगाया जाने लगा।

× × ×

रात बीत गई और सबेरा हो गया; किन्तु नवलबाबू पत्नी से नहीं बोले। यही नहीं उन्होंने उसके हाथ से दवा भी नहीं पी। पानी भी स्वयं उठाकर पिया उससे नहीं माँगा।

जमुना पति के इस व्यवहार से बहुत-कुछ चौंक गई। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करे?

प्रभात और माधवी को जब यह मालूम हुआ तो दोनों ने बाप को बहुत समझाया और अपनी सफाई दी कि उन लोगों ने कुछ बुरा काम नहीं किया है, कोई गलत कदम नहीं उठाया है। आगे आनेवाली पीढ़ियाँ उनके पक्ष में रहेंगी। पुराने विचारों के लोग उनकी कटु आलोचना तथा निन्दा जरूर करेंगे; लेकिन इसकी उनको चिन्ता नहीं है।

इस तरह प्रभात और माधवी बाप के सम्मुख बराबर बोलते चले जा रहे थे और वे मौन थे। आखिर जब अधिक सह्य नहीं हुआ तो उन्हें बोलना पड़ा। वे तैश में आकर कहने लगे—"तुम दोनों अभी चले जाओ यहाँ से। मेरी आँखों के सामने से दूर हो जाओ। अपनी माँ को खूबसूरती और बदसूरती समझा सकते हो मुझे अपनी ओर नहीं मोड़ सकते।"

जमुना सकते की हालत में आ गई। वह उठकर खड़ी हो गई। प्रभात ने धीरे-धीरे फिर कहना शुरू किया—"पिताजी आप नाहक ही इतना क्रोध करते हैं। आप मेरे विचारों को अपने अनुकूल देखना चाहते हैं; लेकिन ऐसा कभी सम्भव नहीं हो सकता। मेरा तो दावा है कि दुनिया से दूर मत भागो, बल्कि उसको ही बदल डालो। और आप····· ·····।"

"चुप रहो प्रभात। मेरे कान न फोड़ो। तुम जाते हो या नहीं?" यह कहकर नवलबाबू गुस्से से तड़प उठे।

माधवी एकदम सहम गई और जमुना भी सन्नाटे में आ गई; लेकिन प्रभात चुप नहीं रहा। वह फिर कहने लगा—"मैं जातिभ्रष्ट हो गया हूँ ऐसा तो नहीं। फिर आपने मेरा बहिष्कार क्यों कर रक्खा है? मैं

न्याय के लिए आप से ही नहीं भगवान से भी लड़ सकता हूँ। आप मेरी जबान नहीं बन्द कर सकते। आप·····।"

"प्रभात!" नवलबाबू जोर से चिल्लाये।

प्रभात खामोश हो गया और नवलबाबू हारे स्वर में खीझकर कहने लगे—"मैं आज ही कानपुर चला जाऊँगा। यहाँ तुम लोग मेरा पीछा नहीं छोड़ोगे।"

कोई नहीं बोला। वार्ड में सन्नाटा छाकर रह गया। नवलबाबू क्रोध से दाँत पीसते हुये फिर बोल उठे—"कहाँ आकर मैंने दुनिया भर की आफत मोल ले ली। इससे तो अच्छा यह होता कि आपरेशन कानपुर में ही करवा लेता। यह नहीं जानता था कि यहाँ आते ही तुम्हारा भी दिमाग खराब हो जायेगा वाकई तुमको साथ लाकर मैंने बहुत बड़ी गलती की।"

नवलबाबू का यह संकेत जमुना के लिए था। वह जान-बूझकर कुछ नहीं बोली चुप रही। और प्रभात साहस बटोर कर फिर कहने लगा—"पिताजी! न जाने आप इतना क्रोध क्यों करते हैं? आपको कैसे समझाऊँ कि·····।"

चुप रह कल का छोकरा तू क्या समझायेगा मुझे। तुम गये नहीं? अभी चले जाओ प्रभात वरना·····।" कहते-कहते नवलबाबू रह गये और हाथ में गिलास उठा लिया। तभी प्रभात का मुँह खुला। वह बोला—"पिताजी·····।"

अभी प्रभात इतना ही कह पाया था कि नवलबाबू ने ताव में आकर गिलास फेंककर मारा। प्रभात के मुँह से एक चीख निकल गई और माथे से खून बहने लगा। शीशे का गिलास फर्श पर गिरकर टुकड़े-टुकड़े हो गया था।

नवलबाबू गुस्से से काँप रहे थे। माधवी और जमुना दोनों प्रभात के पास दौड़ आईं। पुत्र का रक्त अपने आँचल से पोछती हुई क्रोध-भरी जमुना पति से कहने लगी—"तुम बाप नहीं जल्लाद हो। लड़के का माथा

फोड़ दिया अब ठंडा हुआ गुस्सा। मैं नहीं जानती थी कि तुम इतने निर्दय हो। तुम·····।"

"चुप रहो! बकवक मत करो। जाओ तुम सब अभी यहाँ से चले जाओ। मैं·····।"

नवलबाबू की बात अभी पूरी भी नहीं हो पाई थी कि जमुना अंगारों पर पैर रखती हुई उनके पास आ गई और दोनों हाथ फटकार कर कहने लगी—"तो कहते क्या हो? ऐसा ही होगा। कोई नहीं रहेगा यहाँ। तुमको अपने काटते हैं, तुम अकेले रहना चाहते हो, रहो। मैं बाज आई। बहुत हो चुका। लोग लड़कों का मुँह देखकर जीते हैं और तुम·····।"

"जमुना।" नवलबाबू खूब जोर से चिल्लाये। ऐसा करने से उनके पेट की पीड़ा बढ़ गई और वे जोर-जोर से काँखने लगे।

माधवी ने भाई का खून पोंछकर जल्दी से अपनी साड़ी फाड़कर पट्टी बाँध दी। दोनों चुपचाप खड़े थे। जमुना उनके पास आकर आवेशपूर्वक कहने लगी—"चलो। तुम दोनों यहाँ क्यों खड़े हो? मैं भी तुम्हारे साथ चलती हूँ। अब यहाँ नहीं रहूँगी।"

प्रभात और माधवी माँ का मुँह देखने लगे। नवलबाबू की पीड़ा अधिक बढ़ गई थी वे अब जोर-जोर से चिल्लाने लगे। यह देख प्रभात उनके पास आ गया और माँ को समझानेवाली बात भूल गया।

माधवी दौड़कर डाक्टर को बुला लाई। जमुना ठगी-सी खड़ी थी। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि यह सब क्या हो रहा है?

## २४

जिस दिन अस्पताल में नवलबाबू और प्रभात में काफी कहा-सुनी हुई। उसके बाद दोनों भाई-बहन कभी उनको देखने नहीं गये। और जमुना भी नहीं आई प्रभात के घर। नवलबाबू पत्नी से बात नहीं करते थे। वह भी बोलने का प्रयत्न नहीं करती। दोनों ओर से खिंचाव था। इस तरह लगभग उसके बाद दस दिन तक वे वहाँ रहे और कानपुर अकेले ही चले गये। जमुना से न तो उन्होंने जाने के लिए कहा और न उसने ही इच्छा प्रगट की। जब नवलबाबू का ताँगा स्टेशन की ओर चल दिया तो वह भी एक रिक्शे पर बैठ गई और रिक्शा चल दिया अमीनाबाद की ओर।

अभी दिन के दस बजे थे; किन्तु सबेरे से बादल थे तभी लग रहा था कि अभी-अभी सबेरा हुआ है। प्रभात भोजन करने जा रहा था कि सहसा कई दिनों के बाद माँ को सामने आता देख वह चौंक पड़ा और तत्क्षण ही यह भी सोच डाला कि मालूम होता है कि शायद आज माँ का पिताजी से फिर झगड़ा हुआ है। तभी वे यहाँ आई हैं।

गयारी चौके में बैठा थाली परोस रहा था अचानक अपनी मालकिन को सामने खड़ा देख वह बाहर आ गया और आदरपूर्वक उन्हें बिठलाया। लेकिन जमुना आते ही पुत्र के माथे का घाव देखने लगी, जिस पर अब पट्टी तो नहीं बँधी थी; घाव अभी अच्छी तरह भरा नहीं था उस पर ल्यूको-पलास्टर की चिट चिपक रही थी। वह पूछने लगी—"अब इस चोट में दर्द तो नहीं होता प्रभात। अभी जख्म भरा नहीं है। क्या बताऊँ?

बाप इतना कठोर होता है यह मैं नहीं जानती थी।"

प्रभात माँ के चरणस्पर्श कर हँस पड़ा और हँसते-हँसते बोला—'छोड़ो माँ! पिछली बातों को भूल जाओ। पिताजी का गुस्सा कभी न कभी शान्त होकर ही रहेगा। कहो अब उनकी तबियत कैसी है? मैं तो इसलिए फिर नहीं आया कि मेरे जाने से उलझन हो जायेगी; क्योंकि पिताजी मुझको देखते ही गुस्से से काँपने लगते हैं। वे·····।"

प्रभात की बात बीच में ही रह गई जमुना बाधा देकर कहने लगी—"तुम्हारे पिताजी तो आज कानपुर चले गये।"

"ऐं! यह क्या कह रही हो माँ? पिताजी अकेले चले गये और तुम·····?"

जमुना प्रभात का आशय समझ गई वह छूटते ही बोल उठी—"हाँ वे अकेले ही चले गये। जितने दिन अस्पताल में रहे मुझसे बोले नहीं और आज जाते समय कहने लगे कि अब तुम्हारा मन हो वहाँ जाकर रहो। मैं कानपुर जाता हूँ। खबरदार घर आने की कोशिश कभी मत करना। वरना मुझसे बुरा फिर कोई नहीं होगा।

प्रभात माँ की ये बातें सुनकर सन्नाटे में आ गया। गयारी के भी कान खड़े हो गये। जमुना की बातों का प्रवाह ही नहीं टूट रहा था। वह कभी माधवी का हाल पूछती तो कभी गौरी और रामचरण के विषय में पूछने लगती कि वे लोग कुछ कहते तो नहीं थे। इस बीच मौका देखकर गयारी उससे भोजन करने का आग्रह करने लगा।

जमुना ने देखा कि थाली परोसी रक्खी है और प्रभात अभी शिष्टता और संकोच में पड़ा तो वह खाने बैठ गई और बोली—"आओ प्रभात! आज मैं तुम्हें अपने हाथ से खिलाऊँगी।"

प्रभात यह सुनकर हँस पड़ा और गयारी का पोपला मुँह भी हँसी से फैल कर रह गया। दोनों माँ-बेटा एक ही थाली में भोजन करने बैठ गये। यह देख बूढ़े गयारी की आँखों में आनन्दाश्रु छलक आये।

× × ×

खबर लगी उसी दिन तीसरे पहर माधवी माँ से मिलने आई। उसके साथ शालिनी भी थी। जमुना उससे घृणा करती थी अतः उससे नहीं बोली। शालिनी इस तथ्य को नहीं समझ पाई। इसका पता उसको तब चला जब माधवी ने एक दिन उसको सारी परिस्थिति समझाई कि तुम पर माँ इसलिए नाराज हैं कि भइया प्रभात का आकर्षण तुम्हारी ओर है। उन्हें भय है कि कहीं एक दिन वे तुमको घर में न ले जाकर बैठा दें। यह सुनकर शालिनी हँस पड़ी और उसने मन ही मन निश्चय किया कि प्रभात की माँ को वह सेवा-भाव से जीतेगी। उनके मन से इस शंका को निकाल फेंकेगी कि उसका प्रभात के साथ लगाव है तो निश्छल और निष्कपट उसमें स्वार्थ का लेश भी नहीं। वह प्रभात से प्यार नहीं श्रद्धा करती है।

इसी तरह एक दिन जब जमुना प्रभात और माधवी के बहुत कहने पर शालिनी के घर गई तो वह उसके साथ बहुत ही विनय भाव से पेश आई। वहाँ पर जमुना ने परख की कि सावित्री कितनी कटुभाषिणी और उजड्ड है जबकि शालिनी मोम की पुतली है।

घर आकर जमुना ने प्रभात से कहा कि शालिनी को वास्तव में बहुत कष्ट है देवराज के घर में। उसकी पत्नी सावित्री टेढ़े स्वभाव की है उसका मुँह हमेशा फूला ही रहता है। बेचारी बहुत सफाई करती है शालिनी। किसी तरह वह अंग्रेजी का दसवीं पास कर ले तो उसके भाग्य जग जायँ। मुझे बड़ी खुशी हुई सुनकर कि अगले वर्ष वह हाई स्कूल की परीक्षा देगी।

इस पर प्रभात कहने लगा—"अब तुम्हीं सोच लो माँ कि मैं शालिनी से सहानुभूति क्यों रखता हूँ। लोग मुझे गलत समझते हैं, कुछ का कुछ कहते हैं; लेकिन इसकी मुझे चिन्ता नहीं है। मैं अपने कर्त्तव्य से पीछे नहीं हट सकता दुनिया कुछ भी बकती रहे।"

जमुना पुत्र की बातों से प्रभावित हुई। वह भी शालिनी के सम्बन्ध में हमदर्दी भरी बातें करने लगी।

दिन बीत रहे थे। अब क्वाँर का महीना चल रहा था। अपने सास-ससुर की आज्ञा पाकर माधवी ने भी पहले कालेज में दाखिला कराया।

फिर वह घर पर ही बैठकर पढ़ाई करने लगी और प्राइवेट परीक्षा पर निर्भर हो गई।

नवलबाबू के जाने के बाद आज तक उनका कोई समाचार नहीं मिला। प्रभात ने दो-तीन पत्र डाले; लेकिन उनका जवाब कौन देता। नवलबाबू तो चिट्ठी पर प्रभात का नाम देखते ही उसे फाड़कर फेंक देते थे।

जमुना के दिन अब सुखपूर्वक व्यतीत हो रहे थे। वह पुत्र के सम्पर्क में रहकर फूली नहीं समाती थी। गयारी उसकी सेवा-सुश्रूषा में कुछ उठा नहीं रखता। इसके अतिरिक्त कौशिक और माधवी की ओर से भी उसका मन पूरा था। गौरी यद्यपि उसकी समधिन थी; मगर वह उसके साथ इतनी शालीनता का व्यवहार करती कि वह गद्‌गद हो जाती।

इतवार का दिन था। जमुना प्रभात के साथ देवराज के घर गई। तब तीसरा पहर हो रहा था। देवराज ने बहन से कहा कि वह अभ्यागतों के लिए कुछ नाश्ता तैयार कर ले। आलू और पालक रात के लिए साग बनाने को रक्खा था। शालिनी बेसन फेंट कर पकौड़ी बनाने बैठ गई।

इस पर चौके में जाकर सावित्री धीरे-धीरे बड़बड़ाने लगी जिसे केवल शालिनी ही सुन रही थी बाहर बैठे लोग नहीं। वह कह रही थी—"अब रात को साग क्या बनेगा। पकौड़ी बनाने तो बैठ गई यह नहीं सोचा कि सबेरे की दाल रक्खी है वह भी थोड़ी-सी आखिर रोटी किसके साथ खाई जायेगी। न जाने तुम दोनों भाई-बहन की आदत कैसी है कि यह कभी नहीं सोचते हो कि कल क्या होगा। खूब आदर करो मेहमानों का इससे घरवालों का पेट भर जायेगा।"

सावित्री बड़बड़ा कर बाहर चली गई और आँगन में जमुना के पास जाकर बैठ गई। और शालिनी की आँखों से टपटप आँसू गिरने लगे। वह सोचने लगी कि क्या करूँ? किसी तरह भी तो चैन नहीं है। भइया घर की प्रतिष्ठा के लिए जान देते हैं और भाभी घर आये मेहमान को एक घूँट पानी के लिए भी पूछना नहीं चाहतीं। किसके मन की करूँ मेरी समझ

में नहीं आता। बहुत ऊब गई हूँ इस जिन्दगी से। भगवान उठा लेता तो इस किचकिच से छूट जाती।

शालिनी विचारों में तल्लीन थी। तेल खूब गरम हो गया था। उससे धुआँ उठने लगा। यह देख उसने पकौड़ियाँ चुआनी आरम्भ कर दीं। इतने में तेल तड़का और जोर से चटचटाया। कुछ छींटें शालिनी के हाथ पर पड़ीं। वह तनिक पीछे हटकर बैठ गई और करछुल से पकौड़ियों को पलटने लगी।

पहला घान पकौड़ियों का निकाल कर शालिनी दुबारा पकौड़ियाँ चुआने में व्यस्त हो गई। बेसन कुछ सूखा मालूम हुआ तो थोड़ा-सा पानी डाल उसे गीला कर लिया। लेकिन यह क्या? पकौड़ियाँ कढ़ाई में पड़-पड़ाने लगीं। छींटें शालिनी के हाथ और कलाई पर पड़ने लगीं। वह जल्दी करने लगी और उस जल्दी में ही एक पकौड़ी छप्प से जाकर कलकला रहे तेल में गिरी। तेल छलका और शालिनी के हाथ पर आकर गिरा। वह जोर से चीख पड़ी।

शालिनी की चीख सुनकर रसोईघर में जमुना और सावित्री जल्दी से पहुँच गईं। जालपा भी उनके पीछे भागी। प्रभात और देवराज भी चौंक गये कि आखिर क्या हुआ? इतने में जालपा चिल्ला पड़ी—"बुआ का हाथ जल गया।"

प्रभात और देवराज भी यह सुनते ही वहाँ आ गये। जमुना बोली—"आलू पीस कर जली हुई जगह पर थोप दो। फफोले नहीं पड़ेंगे।" यह कहकर उसने सावित्री की ओर देखा फिर हाथ में पकड़े खजूर के पंखे से शालिनी के हाथ पर हवा करने लगी।

सावित्री ने जल्दी से कढ़ाई उतारकर चूल्हे से नीचे रख दी और दौड़कर नीली स्याही की दावात उठा लाई। स्याही शालिनी के हाथ पर पोतती हुई वह जमुना से कहने लगी—"स्याही भी जले में जादू-सा काम करती है माँ जी। एक भी छाला नहीं पड़ेगा।"

देवराज सहानुभूति और समवेदना से भर आया था। वह जमुना

से बोला—"शालिनी को बाहर आँगन में ले आइये माँ जी।"

इस भाँति सब लोग अपनी-अपनी कह रहे थे और प्रभात चला गया था चुपचाप वहाँ से। किसी ने नहीं जाना। थोड़ी देर बाद जब वह लौटा तो उसके हाथ टेनफिक्स का एक ट्यूब था। शालिनी आँगन में बैठी थी। उसने ट्यूब दाबकर उसके हाथ पर दवा लगा दी और फिर ट्यूब शालिनी को देता हुआ बोला—"देखो हाथ सूखने न पाये। इसे बराबर ट्यूब की दवाई से तर करती रहो। जल्दी ही अच्छा हो जायेगा। न तो छाले पड़ेंगे और न जलन ही होगी।"

सावित्री यह देखकर जल-भुन उठी। उसकी नाक सिकुड़ गई और भौहो में बल पड़ गये। साथ ही उसने होंठ भी बिचका लिये।

शालिनी के हाथ पर अब ठंडक पहुँची तो धीरे से उसने सन्तोष की साँस ली। सावित्री ने शिष्टाचार का तनिक भी ख्याल नहीं किया। वह क्रुद्धा-सी आँगन में बैठी रही। थोड़ी देर बाद सब लोग चले गये। रसोई मे पकौड़ियाँ और बेसन वैसे ही रक्खा रहा।

---

२५

कर्कशा स्त्रियाँ हमेशा बाल की खाल निकाला करती हैं। वे इसी तलाश में रहती हैं कि कोई भी छोटा-मोटा कारण मिल जाय, जिससे उन्हें लड़ने का मौका मिले। शान्ति से उनका जन्मजात विरोध होता है और अशान्ति का गठबन्धन उनकी जीवन-ज्योति बुझने पर ही छूटता है। सावित्री का स्वभाव भी इसी तरह का बहुत ही विचित्र था। शालिनी के लिए दौड़कर प्रभात दवाई ले आया। आखिर इस हमदर्दी का कारण क्या है? जो नाटक ये दोनों खेल रहे हैं वह मुझे अच्छी तरह मालूम है। ऐसी धारणा मन में लिए सावित्री बैठी थी। जमुना के जाते ही वह शालिनी पर बिगड़ पड़ी और कहने लगी—"प्रभात की लाई हुई दवा तुम्हें नहीं लगानी चाहिये थी। कह देती कि क्या जरूरत है स्याही लग चुकी है छाले नहीं पड़ेंगे, ठीक हो जायेगा। लेकिन तुम्हें क्या? तुमने तो बेशरमी पर कमर कस रक्खी है। हम लोग गरीब हैं तो क्या हुआ? किसी का अहसान अपने सिर पर लेना मैं नहीं पसन्द करती हूँ। तुम·····?"

शालिनी चुप बैठी थी। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। और सावित्री कहती चली जा रही थी। यह देख देवराज को क्रोध आ गया। वह सावित्री को डाँटकर बोला—"क्या बक-बक लगा रक्खी है। अगर कोई आदमी आत्मीयता के नाते कुछ करे तो उसके अर्थ गलत नहीं लगाने चाहियें। प्रभात अपने मन से दवा लाया था। उससे किसी ने कहा तो था नहीं। तुम शालिनी के पीछे क्यों पड़ी हो?"

यह सुनते ही सावित्री आग-बबूला हो उठी। वह झल्ला कर बोली—"क्या कहा? मैं शालिनी के पीछे पड़ी हूँ। कौन-सा भाला मार दिया

उसके जो घाव हो गया है। मुझे क्या ? जो मन आये करो। तुम्हें अपनी नेकनामी और बदनामी का तनिक भी डर नहीं है।"

देवराज झगड़े को आगे नहीं बढ़ाना चाहता था, अतः चुपकर गया और उठकर बाहर चला गया। जालपा भी बाप के साथ बाहर जा चबूतरे पर खेलने लगी।

साँझ हो गई थी। शालिनी मौन समाधि लिये बैठी थी। सावित्री बड़बड़ा रही थी और घर में अँधेरा उतर रहा था।

× × ×

सवेरे टहलता हुआ प्रभात देवराज के घर जा पहुँचा यह जानने के लिए कि कहीं शालिनी के हाथ में फफोले तो नही पड़ गये। उस समय वहाँ का दृश्य विचित्र था। देवराज बाल कटवाने सैलून गया था। नट-खट जालपा स्कूल गई थी और सावित्री एक पड़ोसिन के साथ गोमती नहाने गई थी। शालिनी घर में अकेली थी वह बैठी बर्तन मल रही थी। यह देख प्रभात को आश्चर्य हुआ। वह चौंककर बोला—"अरे! यह क्या कर रही हो शालिनी ? तुम्हारे हाथ में तकलीफ है। तुम्हें अभी आराम करना चाहिये।" यह कहता हुआ प्रभात उसके पास जाकर खड़ा हो गया।

शालिनी ने शीघ्रतापूर्वक अपनी अस्त-व्यस्त लटों को कुहनी द्वारा माथे और कपोलों पर से हटाया फिर वैसे ही राख और मिट्टी भरे हाथों को जोड़ती हुई शिष्ट एवं मृदु स्वर में बोली—"अब ठीक हूँ। छाले तो नहीं पड़े हाँ थोड़ी-सी जलन जरूर है। दवा लगा रही हूँ।" यह कहकर उसने सामने पड़ी चारपाई की ओर इंगित किया और शालीनतापूर्वक कहने लगी—"बैठिये! भइया सैलून गये हैं आते ही होंगे।"

"लेकिन तुम बर्तन माँज रही हो। यह.....।"

प्रभात की बात पूरी होने के पहले ही शालिनी उसका आशय समझ गई। वह बोल उठी—"हथेली के उल्टी तरफ मैं जली हूँ, लिहाजा काम तो करना ही पड़ेगा। भइया ने मेरे काम करने पर रात को ही आपत्ति

की थी; मगर भाभी ने कहा कि बहाना लेकर बैठने की बात दूसरी है। मामूली-सी ऊपर की खाल झुलस गई। कोई घाव नहीं हो गया है जो काम नहीं होगा। मैं उनको नाराज नहीं करना चाहती प्रभात बाबू। वे बहुत जल्दी बिगड़ने लगती हैं।"

बात समाप्त कर शालिनी अपने काम में लग गई; किन्तु प्रभात को सन्तोष नहीं हुआ। उसकी उलझन दुगुनी हो गई। वह चारपाई पर बैठा नहीं जोर देकर शालिनी से कहने लगा—"मेरी बात मानो शालिनी। ईश्वर के लिए तुम हाथ धो डालो और जल्दी से दवा लगा लो।"

इस पर शालिनी हँस दी। वह निरन्तर अपने काम में व्यस्त रही। यह देख प्रभात कुछ खीझ-सा उठा। वह उसके बिल्कुल निकट आ पास रक्खी बाल्टी से लोटा भरकर पानी हाथों पर डालता हुआ बोला—"लो धोओ।"

"अरे! यह क्या करते हैं आप? भाभी गोमती स्नान कर लौट रही होंगी। आते ही बिगड़ने लगेंगी कि अभी तक टहल नहीं हुई। बर्तन वैसे ही जूठे पड़े हैं।" यह कहकर वह प्रभात की ओर देखने लगी।

प्रभात अब मुस्करा रहा था। शालिनी शरमा गई। हाथ धुल गये थे उनको धोती के एक छोर में पोंछती हुई वह उठकर खड़ी हो गई। प्रभात चारपाई पर बैठ गया और दोनों में बातें होने लगी।

आँगन में कातिक की धूप धीरे-धीरे दीवालों पर उतर रही थी। गौरैयाँ फुदक रही थीं चीं-चीं करती हुई। न जाड़ा था और न गर्मी। मौसम गुलाबी था। शालिनी नीचे फर्श पर एक बोरा बिछा कर बैठी थी। प्रभात कह रहा था—"मैं देखता और अनुभव करता हूँ शालिनी कि तुम्हें इस घर में बहुत कष्ट है। तुम·····।"

"ऐसा न कहिये प्रभात बाबू। मैं अपने प्रति तनिक भी कष्ट का अनुभव नहीं करती हूँ। हाँ इतना जरूर चाहती हूँ कि घर में शान्ति रहे, व्यर्थ की हाय-हाय न हुआ करे। लेकिन भाग्य को कहाँ ले जाऊँ? भाभी का क्रोध उतरता ही नहीं। काश! वे घर की पतली परिस्थिति को समझ पातीं

तो फिर कोई अभाव नहीं रहता।" शालिनी ने यह कहकर एक लम्बी सांस ली।

प्रभात समझ गया कि शालिनी का स्वाभिमान जाग्रत है तभी वह ऐसी बातें कर रही है। वह प्रसंग बदल कर बोला—"हाथ चर्रा रहा होगा ट्यूब कहाँ है? दवा से इसको तर कर लो।"

शालिनी संकोच से गड़ गई। वह धीरे-धीरे बोली—"दवा की जरूरत अब नहीं है प्रभात बाबू। बर्तन साफ कर लूँ फिर हाथ धोकर गरी (नारियल) का तेल लगा लूँगी।"

प्रभात को और भी अधिक आश्चर्य हुआ शालिनी की यह बात सुन कर वह जोर देकर अपनत्व भरी वाणी में बोला—"नहीं यह नहीं होगा। मेरी बात मानो शालिनी जाओ ट्यूब ले आओ। तुम तो बचपना करती हो।"

शालिनी ने कनखियों से प्रभात की ओर देखा। कितना ध्यान रहता है उसका प्रभात बाबू को यह अनुभव कर उसका मन प्रसन्नता से नाच उठा। वह उसका आग्रह नहीं टाल पाई जल्दी से जाकर दवा का ट्यूब उठा लाई।

ट्यूब प्रभात ने शालिनी के हाथ से ले लिया और स्वयं उसके हाथ पर उल्टी तरफ जिधर जली थी दवा चुआने लगा। तभी सावित्री ने घर में प्रवेश किया। तब प्रभात शालिनी से कह रहा था—"तुम जीवन को भार समझती हो यह तुम्हारी सबसे बड़ी भूल है शालिनी। जिन्दगी को हंसी-खुशी के साथ बिताना चाहिये। तुम·····।" कहते-कहते सहसा वह रुक गया; क्योंकि सावित्री बिल्कुल निकट आकर खड़ी हो गई थी।

शालिनी भाभी को सामने देखते ही काठ हो गई। वह उठकर नल की ओर चल दी और सावित्री भौंहें टेढ़ी कर तेज गले से कहने लगी—"मैं तो बहुत परेशान हो गई हूँ तुमसे। भला बताओ! अभी तक बर्तन साफ नहीं हुये, खाना कब बनेगा। दस बजे उन्हें डाकखाने जाना है।"

प्रभात उठकर खड़ा हो गया। शालिनी बर्तन माँजने लगी। वह

उसको मना करना चाहता था; लेकिन सावित्री की भृकुटी चढ़ी देख उसका साहस नहीं हुआ। फिर भी वह आवेश में भर आया और सावित्री से बिना किसी शिष्टाचार का प्रदर्शन किये ही वह वहाँ से चल दिया और फिर घर के बाहर ही आकर साँस ली।

बाहर सड़क पर जाता हुआ प्रभात सोच रहा था कि दुनिया कितनी निर्दय है आदमी ही आदमी का दुश्मन हो रहा है। शालिनी क्या इसलिए पैदा हुई है कि आजीवन वह दासी बनकर रहे? समझ में नहीं आता कि क्या होगा? आदमी का अहम् उसे नाग बनकर डस रहा है; किन्तु वह उसके मीठे जहर को अमृत समझ कर तृप्ति की साँसें ले रहा है। सावित्री कितनी कठोर है जिसकी समता नहीं। क्या इस पत्थर में सुराख नहीं हो सकता? क्या·····?

इसी तरह न जाने क्या-क्या सोचता हुआ प्रभात चला जा रहा था पथ पर। उसकी स्थिति बिल्कुल पागलों जैसी हो रही थी।

और अन्दर घर में शालिनी रो रही थी मन ही मन और सोच रही थी कि काश! कल हाथ पर तेल गिरने के बजाय मेरे कपड़ों में आग लग गई होती और मैं जलकर मर गई होती तो आज यह नौबत नहीं आती कि प्रभात बाबू को यहाँ से अपमानित होकर जाना पड़ता। माना कि भाभी ने उनसे कुछ नहीं कहा; लेकिन उनका रुख देखकर वे क्या कहते होंगे?

कभी-कभी जब बातचीत के सिलसिले में सावित्री व्यर्थ ही प्रभात के साथ उलझ जाती तो देवराज उसके सामने ही पत्नी को फटकार देता। यह बात सावित्री को बहुत बुरी लगती और उसको लेकर घर में झगड़ा हो जाता। सावित्री शालिनी को ही हर बात के लिए दोषी ठहराती। वह साफ-साफ कहती कि प्रभात शालिनी के कारण ही रोज-रोज आता है।

इस बारे देवराज और सावित्री में परस्पर नित्य ही कहा-सुनी होती रहती। एक दिन जमुना, माधवी और गोरी तीनों उसके घर आईं। प्रभात और कौशिक उस दिन घुड़दौड़ देखने जाने वाले थे। माधवी ने भी भाई से हठ की थी रेसकोर्स जाने के लिए। ये लोग खिलाड़ी नहीं थे, तमाशाई बनकर जाना चाहते थे। जमुना ने भी पुत्री की सिफारिश दामाद और पुत्र से की। वे दोनों उसको साथ ले जाने के लिए सहमत हो गये। तभी वह शालिनी को लेने आई थी कि आज उसको भी घुड़दौड़ दिखला-येगी। उसने शालिनी से कुछ कहने की अपेक्षा उसको लिवा जाने के लिए सावित्री से अनुमति मांगना उचित समझा। वह उसकी ओर उन्मुख होकर बोली—"मैं शालिनी को अपने साथ ले जाऊँगी भाभी। आज हम सब लोग घुड़दौड़ देखने जा रहे हैं। आप भी चलिये बड़ा अच्छा रहेगा।"

शालिनी प्रभात से द्वेष होने के कारण माधवी से भी जलती थी; लेकिन प्रकट में कुछ नहीं कहती। इस समय भी उसने एक मीठा व्यंग्य करके दुनियादारी का अच्छा-खासा प्रदर्शन किया। वह बोली—"मैं कुछ नहीं जानती हूँ माधवी। शालिनी जाने और तुम। मैं ऊँचे सपने नहीं

देखती कि घर में भूँजी भाँग नहीं और चल दें विलायत की सैर करने।"

माधवी ने फिर सावित्री को नहीं छोड़ा। शालिनी से उसने साथ चलने के लिए आग्रह किया तो वह संकोच भरे स्वर में बोली—"अरे मैं कहाँ जाऊँगी माधवी बहन। घुड़दौड़ तो पैसे वालों के देखने के लिए है। इसके अलावा मेरा मन भी नहीं है। मैं नहीं जा सकूँगी, मुझे क्षमा करो।"

माधवी ने शालिनी को बहुत समझाया; लेकिन वह किसी तरह भी रेसकोर्स जाने को तैयार नहीं हुई। तब देवराज को बीच में बोलना पड़ा। वह माधवी का समर्थन करता हुआ बोल उठा—"जब इतना आग्रह कर रही है माधवी तो चली क्यों नहीं जाती शालिनी? जाओ चली जाओ।"

भाई की बात को काटने का साहस शालिनी में नहीं था। वह चुपचाप माधवी के साथ चल दी।

जब सब लोग रेसकोर्स से लौटे तो रात हो गई थी। इसके बाद भी शालिनी थोड़ी देर जमुना के आग्रह पर प्रभात के घर में रुकी। वहीं चाय पी। फिर जब वह घर की ओर चली तो प्रभात उसके साथ चल दिया।

इतनी रात गये शालिनी घर आ रही है और प्रभात उसे पहुँचाने आया है यह देखते ही सावित्री जल-भुन उठी। उसने उसी समय बड़बड़ाना आरम्भ कर दिया। प्रभात उसके स्वभाव से भली-भाँति परिचित था। उसने इस की ओर कोई ध्यान नहीं दिया और वहाँ से चला गया।

सावित्री और देवराज में जब से शालिनी घुड़दौड़ देखने गई। थी लगातार कहा-सुनी हो रही थी। सावित्री ने रात की रसोई भी नहीं बनाई। वह क्रोध में भरी बैठी थी। शालिनी के आते ही मामला रंग पकड़ गया।

प्रभात चला गया था। सावित्री तनकर खड़ी हो गई और अकड़ के साथ बोली—"आई और सम्हल कर बैठ गई। मैं पूछती हूँ कि खाना नहीं बनेगा इस समय क्या?"

शालिनी परिस्थिति समझ गई। वह जल्दी से उठी और अन्दर कमरे

की ओर जाती हुई विनम्र स्वर में बोली—"कपड़े बदल लूँ भाभी! अभी रसोई चढ़ाती हूँ।"

"गरज हो बनाओ खाना और जैसा भाई कहे करो। मैं बाज आई तुमसे। राम! राम! आधी-आधी रात तक पराये मर्दों के साथ घूमती हो। दुनिया क्या कहेगी? किसी के मुँह में समा नहीं पाओगी ननद रानी। अभी····।"

देवराज को पत्नी की बातें जहर-सी लग रही थीं। वह खीझकर बीच ही में बोल उठा—"जालपा की माँ अब चुप भी रहोगी या सारी रात तुम्हारी जबान बन्द नहीं होगी? शरम नहीं आती तुम्हें कैसी नीच बातें करती हो कि शालिनी पराये मर्दों के साथ आधी-आधी रात तक घर से बाहर घूमती है। मैंने भेजा था उसे घुड़दौड़ देखने के लिए। तुम रुआब दिखलाने वाली कौन होती हो।"

यह सुनते ही सावित्री के तन-बदन में आग लग गई। वह पति के सामने आ कमर पर दोनों हाथ रख आँखें तरेर कर कहने लगी—"क्या कहा कि मैं कौन होती हूँ? तो यह भी करके देख लो। चार ही दिन में आटा-दाल का भाव मालूम हो जायेगा। मैं कल ही जाती हूँ अपने मैके।"

"तो कहती क्या हो? चली क्यों नहीं जातीं? कौन रोकता है?" देवराज ने भी खरी-खरी कही जो सावित्री को बहुत बुरी लगीं। वह दोनों हाथ फटकार कर बोल उठी—"कहते क्या हो? मैं तो चली ही जाऊँगी सवेरे। लेकिन याद रखना? मैं कहे जाती हूँ कि अगर प्रभात का आना-जाना बन्द न हुआ तो एक दिन तुम्हारे मुँह पर कालिख पुत जायेगी।"

देवराज तो चिढ़ा हुआ था ही, वह ऐंठ के साथ कहने लगा—"ठीक है। अपनी कालिख मैं स्वयं धो लूँगा। तुम्हें नहीं बुलाऊँगा। जाओ बाबा मेरा पीछा छोड़ो।"

शालिनी कपड़े बदलकर बाहर आई तो उसने देखा कि भाई और भाभी में उसी को लेकर झगड़ा हो रहा है। वह बीच में आ गई और सावित्री से कहने लगी—"गुस्सा न करो भाभी! अब मैं कहीं नहीं जाऊँगी। आओ चलो मेरे साथ चल कर बैठो। अभी खाना तैयार होता है।"

इस पर सावित्री ने ननद को दुतकार दिया। वह बोली—"जाओ-जाओ! अपना काम करो। मेरे मुंह न लगो नहीं तो ऐसी सुनाऊँगी कि····।"

"शान्त हो जाओ भाभी।" शालिनी ने विनयपूर्वक कहा और अपनी भाभी का हाथ पकड़कर अपनी ओर खींचने लगी।

सावित्री को यह बहुत बुरा लगा कि शालिनी ने उसकी बात बीच में ही काट दी। वह चिढ़कर बोल उठी—"एक बार कह दिया कि मेरे मुंह न लगो; लेकिन तुम्हारे दाँत तो बाहर निकल आये हैं, तुम्हें तनिक भी लोक-लाज का डर नहीं रह गया है। जब मैंने मना किया था, तुम घुड़दौड़ देखने क्यों गई? क्या भाई ही सब कुछ है मैं कुछ नहीं, रोज तुम्हारे पीछे घर में झगड़ा होता है।"

अन्दर कमरे में पड़ी सो रही जालपा माँ का बड़बड़ाना सुनकर जाग गई थी। वह उठकर आँगन की ओर आ रही थी और देवराज की आँखें एकदम सुर्ख हो गई थीं। लगता था उनसे खून टपका पड़ रहा है। शालिनी की आँखों से टप-टप आँसू चू रहे थे। देवराज को यह सहा नहीं हुआ। वह ताव में भरकर पत्नी से कहने लगा—"सावित्री अब बहुत कह चुकी मुँह बन्द कर लो इसी में भलाई है, पत्थर का पुतला भी तुम्हारे साथ निर्वाह नहीं कर सकता। खबरदार, अब कुछ भी शालिनी को कहा तो मुझसे बुरा कोई न होगा। तुम जाती क्यों नहीं, कल सबेरे नहीं मैं अभी तुमको घर से बाहर निकाल दूँगा।"

यह सुनते ही सावित्री हाथ भर उछल गई और हाथों की उंगलियाँ नचाकर बोली—"मेरी मरजी, नहीं जाती गैके और क्या कहा, तुम मुझे घर से निकालोगे। निकालो, अगर तुम में हिम्मत हो, चार आदमी तुम्हीं को थूकेंगे। वाह यह अच्छी रही, ये मुझे घर से निकालेंगे, मैं····।"

"नहीं, तुम रहो, मैं स्वयं चला जाऊँगा, जहाँ मन होगा तुम्हारी संगति में रहना नर्क में वास करना है।" यह कहकर उत्तेजित देवराज तेजी से कदम रखता हुआ बाहर जाने लगा।

जालपा माँ-बाप को जोर-जोर से बोलते देख डर गई थी। वह

अपनी बुआ से सटकर खड़ी हो गई और धीरे-धीरे सिसकने लगी। किन्तु बाप को बाहर जाते देख वह जोर-जोर से रोने लगी। सावित्री जहर-बुझी बातें कह रही थी कि अरे जाओ, तुम मुझे क्या जलाते हो, जिन्दगी भर रोते रहोगे, मैं तो भले को कहती हूँ बुरा लगता है मेरा नसीब खोटा है; नहीं तो तुम्हारे साथ भाँवरे ही क्यों पड़ती।"

सावित्री की बक-झक का अन्त रोने में हुआ। वह दोनों हाथों से सिर पीट-पीटकर रोने लगी और जाते हुये भाई का हाथ आगे बढ़ पकड़ लिया शालिनी ने। वह विनयपूर्वक बोली—"कहाँ जाते हो भइया, चलो चलकर आराम करो, भाभी का स्वभाव तो जानते ही हो, आपको बुरा नहीं मानना चाहिये।"

किन्तु देवराज आक्रोश से लबालब हो रहा था। आवेश में वह अन्धा हो गया था उसे कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। उसके कान बहरे हो गये थे। उसने शालिनी की बातें सुनी ही नहीं उसका हाथ झटक दिया और द्रुतवेग से बाहर निकल गया।

शालिनी भागी-भागी दरवाजे तक गई। देवराज दृष्टि से विलीन हो गया था पता नहीं किधर गया। रात सन्नाटे की थी। शालिनी सामने लगे बिजली के खम्भे की ओर निहार रही थी। उसका अनुमान था कि भइया उधर ही गये हैं शायद आज की रात वे प्रभात के घर में विश्राम लेंगे; किन्तु किसी अज्ञात भय ने उसके अन्तःकरण को कचोटा और चुटकी काटकर यह कहा कि कोई जरूरी नहीं, जो देवराज इस समय प्रभात के घर गया हो वह कहीं और भी जा सकता है।

राक्षसी शालिनी के मन में आंधी चलने लगी विक्षिप्तावस्था में वह न जाने कितनी देर तक वहाँ खड़ी रही।

× × ×

सवेरे प्रभात के साथ देवराज घर आया तो शालिनी ने बतलाया कि भाभी अभी जालपा को लेकर पीहर चली गई हैं।

देवराज के यह सुनते ही कान खड़े हो गये और प्रभात मन ही मन

सोचने लगा कि कितनी स्वेच्छाचारिणी है सावित्री। वास्तव में ऐसी स्त्रियाँ समाज के नाम पर कलंक हैं। शालिनी कह रही थी दोनों सुन रहे थे कि मैंने बहुत समझाया; लेकिन भाभी ने मेरी एक न सुनी, बहुत बिगड़ीं और चलते-चलते कह गईं कि मना कर देना अपने भाई को कि मुझे बुलाने न आयें, मेरे मैके में खाने की कमी नहीं। जालपा बहुत रोती थी वह किसी तरह उनके साथ जाने को तैयार नहीं थी इस पर भाभी ने उसे पीटा और जबर्दस्ती अपने साथ ले गईं। वे कहती थीं कि जालपा अब वहीं पढ़ेगी।

शालिनी की बातें समाप्त होने पर देवराज के मुँह से एक लम्बी साँस निकल गई और वह कहने लगा—"सावित्री, इतनी नीच है यह मैं नहीं जानता था। प्रायः कर्कशा स्त्रियाँ पतिपरायणा होती हैं, ठीक है, तुम्हारी भाभी ने जो किया शालिनी वह अच्छा ही है।"

शालिनी निश्चल मूर्तिवत् खड़ी भाई की ओर देख रही थी। प्रभात सिर झुकाये न जाने क्या सोच रहा था। सवेरा मुखर रहा था तभी सहसा देवराज के मुँह से एक लम्बी आह निकल गई, जिसको सब ने सुना।

प्रभात का यह वर्ग भी गत वर्ग की भाँति उलझनों में व्यतीत हो रहा था। उसकी थीसिस अभी आधी भी नहीं हुई थी। उसका मस्तिष्क इस बात का अभ्यस्त हो गया था कि किसी की भी समस्या को लेकर वह अकारण ही हैरान होता रहता। गयारी और जमुना ब्याह करने के लिए उस पर जोर डाल रहे थे; लेकिन इस ओर अभी उसका ध्यान ही नहीं था। अतः वह प्रसंग को आगे बढ़ने नहीं देता और वहीं समाप्त कर देता।

देवराज प्रभात की दृष्टि में उसका एक आत्मीय था। विवश, पीड़ित और दलित वर्ग से उसे अत्यन्त सहानुभूति थी। इसी नाते वह शालिनी के प्रति बहुत ही दयार्द्र था। यदि उसका वश चलता तो वह शालिनी की माँग में एक बार फिर सिन्दूर भरवा देता। उसकी हमेशा यही हार्दिक इच्छा रहती कि काश! किसी तरह शालिनी का पुनर्विवाह किसी से हो जाता तो उसकी जिन्दगी का डूबा सूरज, फिर निकल कर चमकने लगता।

शालिनी और देवराज दोनों जमुना से बहुत हिल-मिल गये और अब वे दोनों अक्सर उससे मिलने आ जाते। इसीलिए जमुना और प्रभात का आवागमन भी बहुत बढ़ गया था।

सावित्री के चले जाने से देवराज के घर में कोई खास परिवर्तन नहीं हुआ सब ज्यों का त्यों रहा, हाँ इतना जरूर हो गया था कि पहले की अपेक्षा अब देवराज अधिक मौन रहता था। शालिनी इस तथ्य को समझ रही थी। इसीलिए उसने कई बार आग्रह किया कि भइया बहुत दिन हो गये अब

जाकर भाभी को लिवा लाओ। मैंने कई चिट्ठियाँ डालीं; लेकिन भाभी ने जवाब नहीं दिया। आपने भी कोई चिट्ठी नहीं लिखी। मेरा मन जालपा के पास लगा है भाभी और उसको लिवा लाओ भइया।

देवराज शालिनी की ऐसी बातों का जवाब ही नहीं देता। सावित्री का नाम सुनते ही उसे क्रोध आ जाता।

इस तरह दिन बीतते गये। गुलाबी जाड़ा धीरे-धीरे जवान हुआ और मौसम ने करवट बदली तब चिल्ला की वृष्टि हुई। ऊपर आसमान में बादल गरजे, बिजली कड़की और खूब मूसलाधार वर्षा हुई। एक सप्ताह तक सूरज नहीं निकला। इस बीच देवराज ठण्ड खा गया। उसे निमोनिया हो गया। बलगम छाती में समाकर रह गया था खाँसी जो धक्की बाँधकर आती। धीरे-धीरे दो दिन में ही रोग बहुत आगे बढ़ गया। प्रभात डाक्टर लाया। इलाज चलने लगा। दोनों ओर की पसलियाँ धौंकनी सी चल रही थीं। उस पर प्लास्टर बाँधा गया, इंजेक्शन लगे। देवराज बहुत शिथिल पड़ गया था। उसके दोनों फेफड़े बलगम से भर गये थे।

कौशिक और माधवी भी दिन में आते। बहुत देर तक उसके पास बैठते। और इलाज शुरू होने के दूसरे दिन गौरी तथा रामचरण बाबू भी उसको देखने आये थे और जमुना भी सुबह से लेकर रात तक वहाँ रहती। लगभग आठ-नौ बजे अपने घर आ जाती। देवराज बहुत ही दुबले-पतले शरीर का व्यक्ति था। डबल निमोनिया के आकस्मिक धक्के ने उसे अशक्त-सा कर दिया था, तभी उसको ठीक होने में समय लग रहा था।

रात को सब लोग अपने-अपने घर चले जाते। देवराज की देख-भाल के लिए प्रभात उसके पास रह जाता। यद्यपि शालिनी और देव-राज उससे यह कहते रहते कि तुम क्यों हैरान होगे दवा रात को समय पर दे दी जायगी। लेकिन वह इस सम्बन्ध में किसी की नहीं सुनता। वह पूरी रात जागकर ड्यूटी देता और शालिनी से अनुरोध करता कि वह दिन भर की थकी-हारी है, जाकर सो रहे; किन्तु वह भी निरन्तर जागती रहती प्रभात की ही तरह। जब सबेरे आसमान पर सफेदी फूटती तब उसकी आँखें कड़ुवाने लगतीं और अँगड़ाई लेती हुई वह नित्य-कर्म में व्यस्त हो जाती।

दुनिया की आँखें पहले बुरा देखती हैं फिर भला यह बहुत पुराना दस्तूर है। बबूल पर यदि कोई लता चढ़ जाय और उसमें रंग-बिरंगे सुगन्धित फूल खिलें, तो देखने वाले तथ्य को न समझ कर फौरन ही यह कहने लगेंगे कि अरे, कलिजुग तो देखो, बबूल में भी ऐसे फूल खिले हैं। इसी तरह गणेशगंज मुहल्ले के लोग शालिनी और प्रभात के लिए न जाने क्या-क्या सोचने और कहने लगे। चखचख पहले से थी; लेकिन जब से सावित्री पति से झगड़ कर मैके चली गई लोगों की दृष्टि में सफेद चादर मैली होने लगी। वे अब काना-फूसी ही नहीं, साफ-साफ कहने लगे कि देवराज बहन की कमाई खाता है। शालिनी ऐसी चर्चायें सुनकर जमीन में गड़-सी जाती और उसका अन्तर हाहाकार करने लगता कि जमीन फट जाय और मैं उसमें समा जाऊँ और देवराज अपने अन्तर्द्वन्द्व को लेकर हैरान था कि दो धारायें बह रही हैं एक में समाज का झूठा भय, गीदड़-भभकी और बदनामी की धमकी और दूसरी में साहस की लहरें हिलोरें ले रही हैं। किसमें बहूँ, क्या प्रभात से कह दूँ कि मेरे घर न आया करे? लेकिन यह सम्भव कैसे हो सकता है? किसी के औदार्य को अपमानित करना बहुत बड़ा पाप है, मुझसे यह नहीं हो सकेगा।

प्रभात को यह पता नहीं था कि आजकल देवराज और शालिनी किन विचारों में खोये रहते हैं उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि समय लगता जा रहा है और देवराज स्वस्थ नहीं हुआ।

चिन्ता चिता की लपटों से भी बलवान है हृष्ट-पुष्ट शरीर को जीवन-मृत बना देती है वही चिन्ता अन्दर ही अन्दर कचोट रही थी देवराज को। समस्या चिनगारी बनकर अब शोले का रूप ले रही थी। देवराज मन की बात न शालिनी से कह पाता और न प्रभात से। ऐसी ही स्थिति शालिनी की भी थी। वह जिह्वा होते हुये भी आजकल गूँगी बन गई थी और प्रभात की हैरानी कई कदम आगे बढ़ गई थी कि आखिर माजरा क्या है? ये दोनों भाई-बहन खामोश क्यों रहते हैं?

## २८

आदमी कहीं भी रहे उसका अपना एक वर्ग बन जाता है, यह समाज का छोटा ढाचा होता है। ऐसे ही मुहल्लेदारी के बहुत से बन्धन अपना लिये थे देवराज ने। वह सीधे स्वभाव का आदमी था इसलिए सब लोग उसे अच्छी निगाह से देखते थे। इसी नाते मुहल्ले के बड़े-बूढ़ों के उपदेश उसे सुनने पड़ते और वह किसी की अवहेलना नहीं कर पाता। शालिनी और प्रभात के विषय में मुहल्ले में खूब कीचड़ उछाला जा रहा था। देवराज को देखने जो स्त्रियाँ आतीं उनकी आपस की गुपतूगू से जमुना और माधवी को भी इस बात का पता चल गया कि मुहल्ले के लोगों का यह कहना है कि प्रभात एक रईस बाप का बेटा है, शालिनी उस पर डोरे डाल रही है तभी वह दिन भर उसके घर में घुसा रहता है और देवराज की स्त्री इसीलिए तो नाराज होकर मैके चली गई। इन दोनों ने अन्धेर मचा रखा है अन्धेर। जब से देवराज बीमार हुआ तब से रात को भी प्रभात यहाँ रहता है आग और फूस जब पास-पास होंगे तो आग जरूर प्रचण्ड होगी।

जमुना ने घर आकर प्रभात को मना किया कि उसके कारण शालिनी की बदनामी हो रही है मुहल्ले वाले झूठी अफवाहें उड़ा रहे हैं। अतः तुम देवराज के घर इस बीच आना-जाना बिल्कुल बन्द कर दो।

लेकिन प्रभात नहीं माना उसने कहा—"माँ साँच को आँच नहीं जब मैं निर्दोष हूँ तो दुनिया से क्यों डरूँ? झूठे ही डर का नाम बदनामी है सो मैं मुँह फैलाकर लगाम नहीं लेना चाहता, ताकि लोगों को कहने

का मौका मिले कि चोर की दाढ़ी में तिनका—अगर कुछ दाल में काला नहीं था तो प्रभात ने आना-जाना क्यों बन्द कर दिया ?"

इस प्रकार प्रभात देवराज के घर नियमित रूप से जाता रहा। जिस दिन जमुना ने उसको मना किया था उसके दूसरे दिन दोपहर को बैठा वह देवराज से बातें कर रहा था। शालिनी बेदाना अनार का रस निकाल रही थी भाई को देने के लिए। सहसा बाहर से कई कण्ठ-स्वर सुनाई दिये—"देवराज, कहा हो ?" देखते ही देखते आंगन में मुहल्ले के बड़े-बूढ़े लोगों की एक भीड़ घुस आई। उसमें कुछ वृद्धाएँ भी थीं, जो बहुत ही वाचाल थी। सबसे आगे थे गली के गणेश पुजारी वे आते ही देवराज को धिक्कारकर कहने लगे—"मैं पूछता हूँ कि ये प्रभात बाबू तुम्हारे कौन लगते हैं देवराज ? तुम्हारे घर में जवान विधवा बहन बैठी है हम लोग यह बर्दाश्त नहीं कर सकते कि मुहल्ले में ऐसी कोई बात हो, जिसका असर दूसरी बहू-बेटियों पर बुरा पड़े। मैं · · · · · · ।"

गणेश पुजारी की बात अभी पूरी नहीं हो पाई थी कि दूसरे सज्जन बोल उठे—"मैं सब जानता हूं कि प्रभात यहाँ क्यों दिन-रात पड़ाव डाले रहता है, जरूर उसका लगाव शालिनी से है, इस बात को कौन नहीं जानता ? तभी तो देवराज की घरवाली रूठ कर नैहर चली गई। अरे ऐसा ही है तो कर क्यों नहीं देते बहन का ब्याह, अब तो विधवा ब्याह का कानून बन गया है।"

देवराज अब बैठा न रह सका वह धीरे-धीरे आंगन में आया और सब की ओर लक्ष्य कर नम्र निवेदन किया। वह बोला—"आप लोग इतना बिगड़ते क्यों हैं ? बात धीरे से समझाई जाती है और कारण भी शान्ति से ही पूछा जाता है। अब कहिये, आप लोगों को क्या शिकायत है ?"

"शिकायत ! बड़े आये दूध के धोये बनकर ? यह सब किसी और को समझाना देवराज, मैं तुम्हारी एक-एक नस पहचानती हूँ, मेरा नाम नरबदा है नरबदा ! इसी मुहल्ले में बूढ़ी हुई अरे, कुछ तो लोक-लाज

से डरो। मैं · · · · · · · ।"

तब तक दूसरी स्त्री बोल उठी—"अरे, कैसी बातें करती हो नरबदी दिदिया, शालिनी तो अँगरेजी पढ़ रही है, स्कूल में मास्टरी करेगी। सुना है अगले साल वह इम्तहान देगी।"

इस पर प्रभात से चुप नहीं रहा गया। वह उस स्त्री से क्रोधावेश में बोलने लगा—"पढ़ना क्या बुरा काम है? आप लोग ऐसा क्यों कह रही हैं? आप · · · · · · · ।"

अब आग में घी पड़ गया था। मामला इतना तूल अर्ज पकड़ गया। लोग प्रभात के सिर हो गये कि वह औरतों से बातों में क्यों उलझ गया और उन लोगों के बीच में बोलने वाला कौन होता है? एक मुँहफट स्त्री उसे खरी-खोटी सुनाने के साथ गालियां भी देने लगी। फिर नौबत यह आ गई कि लोग प्रभात पर हाथ छोड़ने के लिए तैयार हो गये। अब देवराज घबड़ाकर प्रभात के पास आ गया और जल्दी-जल्दी कहने लगा—"तुम यहाँ से चले जाओ प्रभात और फिर कभी मत आना, यह मेरी तुमसे विनय है। आशा है एक दोस्त के नाते। तुम मुझे टोकने का मौका नहीं दोगे।"

प्रभात ने देवराज की बातें सुनीं और चुपचाप बाहर की ओर चल दिया। उस समय उसका चेहरा बहुत ही गम्भीर था और मस्तिष्क बिल्कुल बेकार-सा हो गया मालूम पड़ रहा था।

## २६

रात भर प्रभात उलझन में रहा। वह कुछ भी निश्चय नहीं कर पाया कि क्या करे? सवेरे उसने माँ को सारी स्थिति बताई और जोर देकर वह कहा कि रात को देवराज की देखभाल के लिए उसका वहाँ रहना जरूरी है।

जमुना इस बात पर सहमत हो गई और दिन भर की परिचर्या का भार माधवी ने स्वयं अपने ऊपर ले लिया था।

देवराज ने प्रभात को अपने घर आने के लिए मना कर दिया था। इस बात को किसी ने बुरा नहीं माना, क्योंकि किसी के विचार पुरानी रूढ़ियों से लिपटे नहीं थे। देवराज अब स्वस्थ हो आया था। यद्यपि खाँसी अभी बहुत आती थी लिनीमेण्ट इत्यादि वह नित्य लगाता, दवाइयाँ पीता और पुल्टिस लगते। इस तरह उसके स्वास्थ्य की स्थिति नियन्त्रण में आ रही थी।

जिस दिन देवराज ने प्रभात को घर आने से मना किया था उसके दूसरे दिन इसी सम्बन्ध में जब माधवी और शालिनी की बातें हुई तो दोनों के अन्तर एक-दूसरे के सामने स्पष्ट होकर रह गये।

उस दिन शालिनी ने एक दीर्घ उच्छ्वास लेकर कहा था कि माधवी बहन दुनिया से चाहे और सब कुछ उठ जाता; लेकिन आदमी पर आदमी का विश्वास कायम रहता तो यह दुनिया स्वर्गपुरी बन जाती। स्त्री और पुरुष देवी देवताओं में परिणित हो जाते। लोग जो अफवाह उड़ा रहे हैं अपने गाल बजा रहे हैं, क्या ये कुचेष्टाएँ मनुष्य गत व्यवहार में शोभा

देती है। मुझे लेकर प्रभात बाबू को बदनाम करने में इन लोगों को शर्म आनी चाहिये। ये मौके से फायदा उठानेवाले लोग क्या जानें कि असली दुनियादारी क्या है? तुम्हीं बताओ, मैं क्या करूँ माधवी? आत्म-हत्या कर लूँ, कहीं चली जाऊँ? या चुप्पी साधकर घर में बैठ, बदनामी की चादर ओढ़े रहूँ या फिर कहीं तो सबसे लड़ूँ?

माधवी ने शालिनी को आश्वासन दिया और आगे बढ़ने का प्रोत्साहन देती हुई बोली—"दुनिया जो कहती है उसको सुनो ही नहीं अपना काम करो, अपनी राह पर चलो, किसी के कहने से कुछ नहीं होता। प्रभात भइया समझदार हैं। वे इन बातों को बुरा नहीं मानते। उनका कहना है कि तरक्की के रास्ते में तमाम रोड़े आते हैं उनको पीसकर चकनाचूर कर देने अथवा हटा देने की अपेक्षा सबसे पहले उनसे बचने का मार्ग ढूँढ़ना चाहिये। हर मुश्किल आसान हो जाती है अगर आदमी लगातार कोशिश करता रहता है। पुरानी मसल है कि यदि चोर को चोर कह दो तो वह बाँसों उछलता है, बहुत तिलमिलाता है तब लोगों का शक उस पर पक्का हो जाता है; लेकिन सज्जन के ढेले मारो, गाली दो वह हट कर दूर खड़ा हो जायेगा। प्रतिकार की भावना उसमें नहीं जागेगी। हिम्मत से काम लो शालिनी। जिन्दगी की मंजिल बहुत लम्बी है।"

शालिनी अपनी कहती गई और माधवी सुनती गई। दोनों का अपनत्व सौहार्द्र में बदल गया था। लगता था एक डाल है और उसमें दो कलियाँ खिल रही हैं जो जल्दी ही पुष्प की संज्ञा पा जायेंगी।

देवराज को भी कम दुःख नहीं था कि उसने सबके सामने अपने मित्र का सरासर अपमान किया। कुछ भी हो मुझे ऐसा नहीं कहना चाहिये था; किन्तु मैं तारीफ करूँगा उसकी जिसने अपनी शिष्टता नहीं खोई और लोकाचार में तनिक भी फर्क नहीं आने दिया। वह बिना कुछ प्रतिवाद किये ही यहाँ से चला गया। यह उसकी महानता है वाकई लोगों का कहना सच है कि समाई आदमी को ऊँचा उठाती है, साहस को जन्म देती है और शान्तिपूर्वक आदमी को मंजिले मकसूद पर ले जाकर खड़ा कर देती है।

देवराज की चिन्ता, प्रायश्चित न पाकर उलझन में बदल गई थी। उसके मस्तिष्क के तार छिन्न-भिन्न हो गये थे जिससे सन्तुलन अनियन्त्रित हो रहा था। वह कभी कुछ सोचता कभी कुछ कहने लगता और कभी-कभी अपनी भूल की कहानी जमुना और माधवी आदि को सुनाने बैठ जाता। किन्तु किसी प्रकार भी उसे शान्ति नहीं मिल रही थी।

अन्तःकरण व्यक्ति जब प्रसन्न रहता है तो उसका आधा रोग दूर हो जाता है। किन्तु जब अप्रसन्नता की स्थिति के कारण उसके मन में अतृप्ति की लहरें दौड़ने लगती है, तो वह पूर्णतया अशक्त हो जाता है और रोग का साम्राज्यवादी आतंक उस पर छाकर रह जाता है। देवराज को ज्वर बढ़ा, बढ़ता गया। एक, दो, तीन और फिर चार डिग्री की नौबत आ गई। वह ज्वर की तेजी से हांफने लगा। सबकी परेशानी बढ़ गई। कौशिक दौड़-भाग में लग गया। लेकिन समाचार मिलने पर भी, प्रभात मित्र को देखने नहीं आया।

३०

बीमारी की हालत में देवराज ने अपने शरीर के साथ जो उपेक्षा बरती, उसका परिणाम यह हुआ कि वह पुनः निमोनिया का शिकार हो गया। इस बार उसकी स्थिति बहुत गम्भीर हो गई थी।

प्रभात को जब यह हाल मालूम हुआ, तो वह बहुत घबड़ाया और माधवी द्वारा सावित्री के मैके का पता पुछवा, वह उसे तार दे आया। फिर भी वह वचनबद्ध रहा, देवराज को देखने नहीं जा सका। देवराज की बीमारी में प्रभात का रुपया बहुत खर्च हुआ और अब इलाज का व्यय बाबू रामचरण कर रहे थे। अन्त में कौशिक ने आकर उसके कान खोले। उसने आकर बतलाया कि देवराज की उल्टी सांस चल रही है, डाक्टर ने आक्सीजन देने को कहा है। मैं आक्सीजन प्लाण्ट लेने जा रहा हूं, तुम जल्दी पहुँचो, देवराज की दृष्टि बराबर दरवाजे की ओर लगी है। शायद वह तुम्हारी राह देख रहा है, देर न करो, जल्दी जाओ प्रभात। दवा-इलाज से, पहले, देवराज को, समवेदना और सहानुभूति की आवश्यकता है, वह तुम्हें देखते ही प्रसन्न हो जायेगा, तुम्हें वहां जरूर पहुँचना चाहिये।

प्रभात अब अपने को नहीं रोक सका। वह कौशिक के साथ घर से बाहर निकल पड़ा और फिर अकेला ही सीधा देवराज के घर की ओर चल दिया। जमुना वहाँ पहले से ही मौजूद थी। माधवी और कौशिक भी उतरे हुये चेहरे लिये बैठे थे और मुहल्ले की दो-तीन स्त्रियां भी बैठी थीं। वे देवराज को देखने आई थीं। प्रभात पहुँचा। स्त्रियां उठकर चल दीं वह देवराज की चारपाई के पास जाकर रुका और उसके मुरझाए दृष्टि

टिका धीरे-धीरे पूछने लगा—"कैसी तबियत है देवराज ?"

देवराज के गले में कफ रुँध रहा था। इससे वाणी अवरुद्ध हो गई थी। उसने धीरे से हाथ उठाने की कोशिश की; लेकिन अधिक कमजोरी के कारण वह उठ नहीं सका, तब बेबसी में उसकी आँखों से आँसू बहने लगे, जिन्हें प्रभात ने अपने रुमाल से पोंछा।

इन्जेक्शन लग चुका था। आक्सीजन दी जा रही थी और प्रभात मन ही मन ईश्वर से विनय कर रहा था कि भगवान किसी तरह देवराज उठ खड़ा हो। उसकी कच्ची गृहस्थी है, परिवार तबाह हो जायेगा, अगर उसे कुछ हो गया।

अब रात के दस बज रहे थे। आक्सीजन देने से देवराज की उखड़ी हुई साँस कुछ सध गई थी। अब वह तन्द्रा में नहीं डूबा था, बल्कि थोड़ा-सा आराम मिल जाने के कारण उसकी झपकी लग गई थी। प्रभात ने माधवी और कौशिक के साथ माँ को वहाँ से रवाना कर दिया। उसका कहना था कि देवराज के पास मेरा रहना बहुत जरूरी है, क्योंकि दो-तीन बार अच्छा हो-होकर वह पलट चुका है। इसके अतिरिक्त माँ और शालिनी लगातार कई रातों से जाग रही हैं, आज की रात मैं मुस्तैदी के साथ बिताऊँगा, ताकि परिस्थिति तनिक भी इधर से उधर न हो सके।

सब लोग चले गये तब शालिनी ने प्रभात से कहा—"आप नाहक हैरान हुए प्रभात बाबू। व्यर्थ ही रात भर जागेंगे मैं सब संभाल लेती। आप·····।"

"जानता हूँ शालिनी!" कहकर प्रभात ने एक मर्म भरी दृष्टि से शालिनी की ओर देखा और फिर एक लम्बी साँस छोड़, धीरे-धीरे कहने लगा—"दिखावा और दुनियादारी उनसे की जाती है, जो गैर होते हैं। मैं तुम लोगों से अपने को पृथक नहीं समझता शालिनी! तुम्हारा यह कहना अच्छा नहीं लगता कि मैं व्यर्थ ही रात को हैरान होऊँगा, तुम सब अकेले ही सम्हाल लोगी। मुझे अपने कर्त्तव्य के सामने समाज का भय नहीं। मैं स्वयं अपने आप से डरता हूँ, क्योंकि आत्मा में ईश्वर का निवास है और

मैं किसी से नहीं डरता। समाज के ढकोसले आदमी का बेड़ा पार नहीं कर सकते। समाज-वमाज कुछ नहीं, यह सब ढोंग है। झूठी बदनामी से न डरो शालिनी! हाथी जब रास्ते पर चलता है तो उसको देखकर कुत्ते जरूर भौंकते हैं, दुनिया ऐसे ही चलती रहती है। नेकी और बदी किसी एक के अकेले हिस्से में नहीं बँटी। उस दिन देवराज बाबू अगर मुझसे चले जाने को न कह देते, तो मैं बहकनेवालों को ईंट का जवाब पत्थर से देता। उनकी दलीलों को काटकर रख देता और कोशिश करता, कि सच्चाई के आँकड़े उनकी दृष्टि में पूरे-पूरे उतर जायें।"

शालिनी अब निरुत्तर हो गई। संकोचवश उसकी दृष्टि नीची हो गई और कनखियों से वह भाई की ओर देखने लगी। देवराज पलकें मूंदे झपकी ले रहा था। कफ की सरसराहट उसके गले में स्पष्ट हो रही थी। वह मन ही मन काँप गई और प्रसंग बदलकर प्रभात से बोली—"प्रभात बाबू, देखो, सुनो, भइया के गले में कितने धीरे-धीरे कफ बज रहा है इस निमोनिया ने तो उनके शरीर को जर्जर ही कर डाला।"

प्रभात ने घड़ी की ओर देखा एक बज रहा था। उसने कहा—"दवा देने का समय हो गया; लेकिन मैं देवराज को जगाऊँगा नहीं। यह कायदा है कि मरीज को जगाकर दवा नहीं दी जाती। चिन्ता न करो शालिनी तुम्हारे भइया अब खतरे से बाहर हैं। खाँसी दस-पाँच दिन में ठीक हो जायेगी। तुम्हारी भाभी को तार दे आया हूँ, वे सबेरे तक आ जायेंगी।"

शालिनी ने इस पर कुछ जवाब नहीं दिया। वह उठकर देवराज की चारपाई के पास गई और उसके पैरों पर से हट गया कम्बल ठीक करने लगी।

इस तरह दोनों में बीच-बीच बातचीत चलती रही। रात बीतती रही और देवराज की नींद नहीं टूटी।

---

## ३१

प्रातः पाँच बजे देवराज की आँखें खुलीं। प्रभात ने अपने हाथों उसे दवा पिलाई और शालिनी जाकर सामने खड़ी हो गई। वह हँस कर पूछने लगी—"अब कैसी तबियत है भइया? तुम्हें नींद आ गई थी, हम लोगों ने जगाकर दवा देना ठीक नहीं समझा रात बजे डाक्टर आने को कह गया है थोड़ा-सा मौसमी का रस लाऊँ पिओगे?"

देवराज ने क्षीण-स्वर में रस लाने को कहा और फिर धीरे-धीरे प्रभात से बातें करने लगा।

तभी सहसा बाहर की कुण्डी खटकी और आवाज आई—"शालिनी, किवाड़ खोलो।"

साथ ही एक बाल-कण्ठ भी सुनाई पड़ रहा था—"बुआ मैं आ गई हूँ, जल्दी से कुण्डी खोलो।"

शालिनी लपक कर कुण्डी खोलने चल दी। आगन्तुका सावित्री थी अपने भाई के साथ पीहर से आ रही थी। वह पति की बीमारी का तार पाकर आई थी। यहाँ प्रभात को बैठा देख वह जल-भुन उठी और पति के पास जा उससे बीमारी का हाल पूछने लगी।

शालिनी ने जाल्पा के साथ अपने को भटका लिया और प्रभात ने सावित्री के भाई की आवभगत की। उसको आदरपूर्वक अपने पास बैठा लिया।

यद्यपि देवराज पत्नी से बहुत असन्तुष्ट था। वह उससे बात ही नहीं करना चाहता था; लेकिन साला सामने बैठा था और वह स्वयं इस समय

बीमारी की स्थिति में था। अतः उसने कुछ बातों के संक्षिप्त जवाब दिये और कुछ को सुनकर चुप रह गया।

थोड़ी देर बाद जब सावित्री ने घर की सारी परिस्थिति को भली-भाँति समझ लिया तो वह भाई के सामने ही बड़बड़ाने लगी कि सरासर अन्धेर मचा रखा है और सब लोग मुझे ही बुरा कहते हैं, आखिर प्रभात को रात को यहाँ रहने की क्या जरूरत थी, यही झगड़ा पहले था, वही समस्या अब भी है; मुहल्ले के लोग क्या कहेंगे, यह कोई नहीं सोचता।

फिर सहसा सावित्री प्रभात के सिर हो गई और उससे साफ-साफ कहने लगी—"प्रभात तुम्हें क्या जरूरत है मेरे घर आने की? मैं ऐसी हमदर्दी पसन्द नहीं करती, जिसके पीछे मेरी बदनामी हो। अरे बीमारी में आओ, देखो और चले जाओ। यह कौन-सा तरीका है कि हमारे घर में जवान ननद बैठी है और तुम बीमारी के बहाने रात को भी यहाँ रहने हो, तुम्हें क्या, तुम आदमी हो औरत बहुत जल्दी बदनाम होती है। तुम पाक-साफ बने रहोगे, मेरे सामने लड़की है, मैं झंझट में फँस जाऊँगी।"

प्रभात जैसे सावित्री की बातों को सुन ही नहीं रहा था। उसने किसी भी बात का जवाब नहीं दिया। देवराज से विदा ले वह अपने घर चला गया। तब सबेरा खूब अच्छी तरह हो गया था।

देवराज ने सावित्री को बहुत डाँटा और मना किया कि वह अब भविष्य में प्रभात से कुछ न कहे। वह मेरा लिहाज करता है, नहीं तो ऐसा जवाब दे कि तुम्हारे रोये न चुके।

सावित्री यह सुनते ही तिनक गई और चिढ़ कर ऊट-पटांग बकने लगी। शालिनी गृह कार्यों में संलग्न थी। जालपा बाहर चबूतरे पर खेलने चली गई। तभी कौशिक अपने साथ डाक्टर लेकर आ पहुँचा। डाक्टर ने थर्मामीटर से ज्वर का तापमान लिया आला लगाकर देवराज की परीक्षा की, फिर दवाई का नया पर्चा लिखा और इन्जेक्शन लगाकर चला गया।

कौशिक देवराज के पास रुक गया। वह प्रतीक्षा कर रहा था कि प्रभात आ जाए, तब मैं घर जाऊँ। इस बीच परिस्थिति बहुत कुछ बदल गई थी, मुहल्ले की कई स्त्रियां आ पहुँची थीं, देवराज को देखने के लिए। बात-चीत के सिलसिले में, उन सबने सावित्री को बतलाया कि प्रभात के पीछे मुहल्ले के लोगों ने कितना एतराज किया, चार-छः दिन उसका आना-जाना बन्द रहा। लेकिन रात को वह फिर आया था और सुना है कि रात भर वह यहां रहा भी।

सावित्री यह सब सुनकर मन ही मन कुढ़ रही थी कि उसके थोड़ी ही देर बाद आ गया प्रभात। वह कौशिक और देवराज के पास जाकर बैठ गया और स्त्रियों में परस्पर खिचड़ी पकने लगी।

एक ओर प्रभात और कौशिक देवराज से समवेदना भरी बातें कर रहे थे और दूसरी ओर दो-एक स्त्रियां सावित्री से कह रही थीं कि देख लेना बहू, कि प्रभात के पीछे कैसा उपद्रव मचता है, मुहल्लेवाले चुप नहीं बैठेंगे। बीमारी-आराम में दुश्मन भी घर आता है, लेकिन कोई पैर नहीं पसार देता। सचमुच प्रभात बहुत बेशर्म है।

शालिनी घर की यह परिस्थिति देखकर मन ही मन गुप्त भय की आशंका से कांप उठी। वह सोचने लगी कि न जाने क्या होने वाला है? प्रभात बाबू, यहाँ न आते तो अच्छा था। परिस्थिति पहले से ही नाजुक थी और अब भाभी के आगमन ने उसमें एक हलचल पैदा कर दी है, जिसका परिणाम पता नहीं क्या होगा? इस समय भइया बीमार हैं, उन्हें शान्ति की आवश्यकता है। भाभी को कलह से लगाव है, वे अपनी आदत से मजबूर हैं। उनसे सीधी बात कहो, उल्टे अर्थ लगाने लगती हैं। बड़ा ही विचित्र स्वभाव है उनका मैं तो परेशान हूं।

शालिनी यद्यपि कार्य-व्यस्त थी; लेकिन उसके मस्तिष्क में उथल-पुथल मच रही थी। कौशिक चला गया। प्रभात देवराज की परिचर्या के लिए वहां रह गया और दस बजते-बजते आ गई माधवी जमुना के साथ। आज उसके साथ गौरी और रामचरण बाबू भी थे। सब लोग देवराज

को देखने आये थे। किन्तु सावित्री के पास इतनी फ़ुरसत नहीं थी जो वह जमुना और गौरी का सम्मान करती। मुहल्ले की स्त्रियाँ आ रही थीं और जा रही थीं; क्योंकि रात को देवराज की हालत बहुत ख़राब हो गई थी। अतः लोकाचार के लिए पास-पड़ोस की बड़ी-बूढ़ी उसे देखने आ रही थी।

शालिनी, गौरी और जमुना के साथ विनम्रतापूर्वक मृदु-स्वर में बातें कर रही थी। यह देख-देख सावित्री के नथुने फूलते, भौंहें तनतीं और आँखें बार-बार लाल-पीली होकर रह जाती थीं।

## ३२

विकृति को पनपने का समाज अधिक अवसर देता है, जब पर्दा उठता है और दृश्य सामने आता है तब धर्म काण्डी और कर्म काण्डी जोर-जोर से पुकारने लगते हैं यह पाप है, बिल्कुल सरासर पाप है। प्रायः रस्सी का माँग इतना उग्र रूप धारण कर लेता है कि उसमें क्षति की कोई सीमा नहीं रहती और विनाश की गोद में बैठा अन्धकार मनुष्य को अपनी बाहों में समेट लेता है। तब सब लोग भौचक्के रह जाते हैं। उनके पैरों के नीचे से धरती खिसक जाती है और मन ही मन भावी प्रलय की गुप्त आशंका से वे काँप कर रह जाते हैं। इसी तरह दुनिया में छल, प्रपंच, धर्म, ईमान, मेल-जोल और भेद-भाव चलते रहते हैं। और सच्ची हो या झूठी समाज के ठेकेदारों के लिए नित्य नई एक कहानी बनती रहती है, जिसके पात्रों के मुकदमे का निर्णय वही समिति (समाज) मनचाहे ढँग से करती रहती है, उसमें अवसरवादिता को अधिक प्रश्रय मिलता है।

देवराज स्वस्थ होने लगा था। प्रभात उसके घर में नहीं रहता। सावित्री के आ जाने के बाद उसकी वहाँ रहने की कोई जरूरत नहीं थी। वह दिन में दो बार सुबह-शाम आता और देर तक बैठा रहता। सावित्री का भाई चला गया था; क्योंकि आज सबेरे देवराज को पथ्य दे दिया गया था।

दोपहर की बेला में देवराज चारपाई पर बैठा प्रभात से बातें कर रहा था। सावित्री जालपा को आँगन में खड़ी डाँट बता रही थी कि वह अपनी बुआ शालिनी के साथ नल पर जा मँजे हुये बर्तन क्यों धोने लगी ?

कड़ाके की सर्दी है अगर कहीं ठण्ड लग गई तो मुसीबत मेरे जान को होगी। शालिनी को क्या देखा तो, लड़की को मना भी नहीं किया। राम-राम उसकी यह उमर काम करने की है।

शालिनी बोलना तो नहीं चाहती थी; लेकिन न जाने कैसे उसकी जबान खुल गई और निकल गया—"जालपा से पूछो भाभी, मैंने उसे आज ही मना किया था वह न माने तो क्या करूं? मुझ पर बेकार बिगड़ती हो।"

शालिनी कभी सावित्री को जवाब नहीं देती थी, हमेशा चुप्पी साध जाती और जब सहा नहीं होता तो रो देती; किन्तु आज समाई की सीमाएं टूट चुकी थीं। सावित्री क्रुद्ध सर्पिणी की भांति फुफकार उठी। वह दांत पीसकर बोली—"अच्छा तो तुम यह भी सीख गई हो मुझको जवाब देना, मैं मैके चली गई थी इससे तुम्हारी हिम्मत और बढ़ गई है सो इस भूल में न रहना। अब मैं कहीं जाने की नहीं। बहुत हैरान करोगी तो तुमको निकाल बाहर करूंगी। इससे मेरे पीछे न पड़ो, मुझे परेशान न करो, मैं तुम्हारे हाथ जोड़ती हूं।"

अन्दर कमरे में बैठे प्रभात और देवराज ने सावित्री की बातें सुनीं। देवराज ने वहीं से सावित्री को तेजी के साथ पुकारा—"यहां आओ जालपा की मां! क्या बक-बक लगा रखी है, दिन भर बोलती रहती हो, तुम्हारा मुंह भी नहीं दुखता।"

शालिनी बर्तन मलने लगी। उसकी आंखों से आंसू बह रहे थे और वह समाई का घूंट पीकर रह गई थी।

"वहां आकर क्या करूं, जानती हूं कि मुझे सूली पर चढ़ा दोगे, बहन को कुछ कहो न, सिर पर चढ़ाये रहो, तो खुश रहेंगे।" यह कहती हुई सावित्री अपने कमरे में चली गई। तभी आवाज देकर खांसते हुये गणेश पुजारी ने घर में प्रवेश किया। प्रभात को देवराज के पास बैठा देखकर वे एकदम जल-भुन गये और आगे बढ़कर देवराज से कहने लगे—"मुहल्लेवालों ने

समाज से तुम्हारा बहिष्कार कर दिया है देवराज, कि अगर तुम शालिनी को घर में रखोगे तो कोई तुम्हारे लोटे का पानी नहीं पियेगा। आज से तुम्हारा हर घर से व्यवहार खतम होता है। इसकी सूचना देने के लिए मुझे लोगों ने भेजा था सो मैं चला आया। अब तुम जानो और तुम्हारा काम, मैं जाता हूँ।" यह कहकर पुजारी जी घूमकर चल दिये। देवराज उनके पीछे उठकर भागा और भय त्रस्त स्वर में पूछने लगा—"क्या बात है पुजारी जी आखिर मेरी गलती क्या है? क्या किया है शालिनी ने।"

तब गणेश पुजारी हवा में घोड़े दौड़ाने लगे। प्रभात और शालिनी के सम्बन्ध में पिछली बातें दोहराने लगे। सावित्री निकट ही चौखट के पास खड़ी सब सुन रही थी। वह लाज-शर्म छोड़कर हाथ भर का लम्बा घूँघट खींच, गणेश पुजारी के सामने पलि में कहने लगी—"लो, सुनो, बाहर-वाले क्या कहते हैं? मेरा मुँह तुम बन्द कर लेते हो, अब बाहर वालों की जबान पर ताला लगाओ तो जानूँ। कहती हूँ प्रभात से साफ-साफ कहूँगी कि वह मेरे घर न आया करे; लेकिन तुम·····।"

अभी सावित्री की बात पूरी भी न हो पाई थी कि पुजारी महाराज सहानुभूति प्रकट करते हुये देवराज से बोल उठे—"वह ठीक कहती है देवराज, अगर अपनी मर्यादा रखना चाहते हो तो प्रभात से अपना तल्ला तोड़ दो, सारे झगड़े खत्म हो जायेंगे।"

शालिनी अपने स्थान पर जड़ बनकर रह गई थी और अन्दर बैठा प्रभात सारी बातें सुनकर यह सोच रहा था कि समाज के ढोंगिये सीधे-सादे आदमियों को एक मिनट के लिए भी चैन नहीं लेने देते। उसके हाथ में मोसमी थी देवराज को देने के लिए उसका रस निकाल रहा था। प्याली भर गई। देवराज क्रोध में भरा हुआ अन्दर आया। प्रभात उसे देखते ही शान्त-मुद्रा में कहने लगा—"कहो, गये पुजारी जी? लो, बैठो रस पियो, तुम्हें उठकर नहीं भागना चाहिये था, इतनी देर खड़े रहे थक गये होंगे, लो·····।" यह कहकर प्रभात ने मोसमी के रस की प्याली उसकी ओर बढ़ाई; लेकिन यह क्या! देवराज ने उसका हाथ झटक

दिया, प्याली फर्श पर गिरकर टुकड़े-टुकड़े हो गई और रस फैल गया।

प्रभात सन्नाटे में आ गया। वह स्तम्भित हो, व्यस्त स्वर में पूछने लगा—"यह क्या देवराज क्या मुझ पर नाराज हो?"

"नहीं प्रभात, तुम स्वयं समझदार हो, अब खूबसूरती इसी में है कि तुम यहाँ से चले जाओ और फिर कभी भूलकर भी न आना। मैं ऐसी मित्रता नहीं चाहता, जिसके लिए मुझे घर के नाम कर बट्टा लगाना पड़े।" देवराज यह कह रहा था। उसकी तेज आवाज सुनकर गणेश पुजारी और सावित्री वहाँ पहुंच गये। प्रभात हतबुद्धि-सा खड़ा था और देवराज आगे कह रहा था—"क्या मेरी इज्जत को मिट्टी में मिलाना चाहते हो प्रभात! जिस तथ्य को समाज नहीं स्वीकार करता उसे लेकर मैं जग-हँसाई नहीं करवाऊंगा। मेरी दोस्ती राह-गली मिल गये तो दुआ-बंदगी की रहेगी, अधिक घनिष्ठता ही सबसे बड़ा दोष बन गई। मैं मजबूर हूँ प्रभात, तुम्हारे पीछे लोग शालिनी को बदनाम करते हैं, जाओ और।·····"

प्रभात ने तर्क करना उचित नहीं समझा। वह नीची दृष्टि किये धीरे-धीरे वहाँ से चल दिया। इस समय देवराज गम्भीर होकर कुछ सोच रहा था। गणेश पुजारी मन ही मन मुस्करा रहे थे और सावित्री का कलेजा हाथ भर का हो गया था कि आज उसके पति ने प्रभात को खूब फटकारा। वह अब कभी नहीं आयेगा।

किन्तु शालिनी का अन्तर रो रहा था खून के आँसुओं। प्रभात का अपमान हुआ, इसका उसे बहुत क्षोभ था। वह अन्दर ही अन्दर पीड़ा से छटपटा रही थी।

## ३३

नवलबाबू ने लखनऊ से लौटते ही अपने जीवन का कार्यक्रम बिल्कुल बदल डाला था। उनकी दिनचर्या में बहुत अन्तर आ गया था। अपने लिए खाना वे अब स्वयं बनाते, जूठे बर्तन मलना और टहल करना भी वे स्वयं ही पसन्द करते थे। इस तरह दिन भर घर में ही बने रहते, कहीं नहीं जाते, किसी से नहीं मिलते। गिरवी और लेन-देन का काम उनका जोरों पर था; लेकिन अब वे उसकी ओर अधिक ध्यान नहीं देते। दुकानों के शेयर धीरे-धीरे दो महीने के अन्दर ही उन्होंने समाप्त कर दिये। अब वे जिन्दगी को एक संकुचित दायरे में बन्द करके रखना चाहते थे।

एक खास बात और थी वह यह कि नवलबाबू ने प्रभात को कभी कोई पत्र नहीं लिखा और न उसका समाचार जानने की ही कोशिश की। जमुना की ओर से उन्हें विरक्ति-सी हो गई थी। वे उसके सिर पर यह दोष थोप रहे थे कि स्त्री पहले मां के अधिकारों को देखती है, उस समय सन्तान के सम्मुख पति को महत्त्व नहीं देती। जमुना प्रभात और माधवी की ओर मुड़ गई, उसने अपनी सन्तान का ख्याल किया मेरा नहीं। मेरे विचारों का विरोध करना उसने प्रभात से सीखा, तभी लखनऊ जाते-जाते एकदम बदल गई। ऐसे मौकों पर नवलबाबू अन्त में सोचते-सोचते यहाँ तक पहुँच जाते कि मेरा कोई नहीं है पत्नी, पुत्र और पुत्री ये सब दुश्मन थे, सबने अपना-अपना बदला लिया। अब बुढ़ापे में मैं इतने बड़े घर में अकेला रह गया हूं। मैं अपनी वसीयत एक धर्मशाले के लिए लिख जाऊँगा। मेरे नाम का धर्मशाला बनेगा। यात्री आयेंगे और ठहरेंगे मेरा नाम लेंगे

और नाम को ही दुनिया मरती है।

नवलबाबू अहर्निश विचारों में खोये रहते। जब से उनके पेट में आपरेशन हुआ था पीड़ा एक मिनट के लिए नहीं दबी। वे अधिक चल-फिर नहीं सकते थे प्रायः पड़े रहते इसी से शरीर असाध्य हो गया। धीरे-धीरे अपच की भी शिकायत रहने लगी। पेट का दर्द इतना बढ़ गया कि उन्हें डाक्टर की शरण लेनी पड़ी। इस बीच मुहल्ले के लोगों का आवागमन उनके यहां हुआ। सहानुभूति और समवेदना प्रकट करने आये हुये पड़ोसियों ने यह अनुभव किया कि नवलबाबू कुछ शक्की-दिमाग के हो गये हैं और शायद पेट की गड़बड़ी के कारण कुछ खाते-पीते भी नहीं इसीलिए बहुत दुबले हो गये हैं।

जब कभी नवलबाबू दस-पांच मिनट के लिए अपने चबूतरे पर आकर टहलने लगते या बैठ जाते तो वे एकदम बहक जाते और चबूतरे पर खेल रहे बच्चों को डाँट कर भगा देते। देर तक बड़बड़ाते रहते और फिर घर में आ, अन्दर से कुण्डी बन्द कर लेते।

डाक्टर ने नवलबाबू को सलाह दी थी कि एक महरी और महराजिन दोनों का घर में रख लेना उनके लिए बहुत जरूरी है। अपने हाथ ही अगर वे सब काम करते रहेंगे तो कभी अच्छे नहीं होंगे। इसी बुनियाद पर महरी की तलाश हुई। नवलबाबू ने उसे नियुक्त कर लिया। लेकिन महराजिन कोई भी उनके घर में आकर खाना बनाने के लिए तैयार नहीं हुई, जिसको नवलबाबू बुलाते वह स्वयं न आकर सन्देशा भेज देती कि आपके यहां कैसे आऊं, फिर मुझे जाति-बिरादरी में कहीं खाना बनाने का काम नहीं मिलेगा। आप कनौजिया ब्राह्मण हैं, और मालकिन ठहरीं सारस्वत ब्राह्मणों के घर में और ऐसे ही प्रभात लखनऊ में एक रांड़-बेवा लड़की से फँसा हुआ है आपके खानदान वालों का यह कहना है कि नवलबाबू खानदान से ही नहीं हमारी जाति से भी अलग हो गये। उनके लड़के और लड़की ने उन्हें कहीं का नहीं रखा।

नवलबाबू ऐसी बातें सुनकर बहुत क्रोधित होते। वे झल्ला-झल्ला

कर रह जाते और मन ही मन उस डाक्टर को बुरा-भला कहने लगते, जिसने खाना बनाने के लिए महराजिन रखने का उनको परामर्श दिया था। एक दिन उन्हें बहुत गुस्सा आ गया। उसी समय उन्होंने महरी को जवाब दे दिया। फिर इसके वे बहुत खिलाफ हो गये और यह निश्चय कर लिया कि कुछ भी हो अपना सब काम वे स्वयं अपने हाथों ही करेंगे।

प्रभात और जमुना को नवलबाबू की वास्तविक स्थिति का कुछ भी पता नहीं था। हां लोगों से सुनने को मिल जाता कि वे कुछ सनकी स्वभाव के हो गये हैं, अकारण ही लोगों पर बिगड़ने लगते हैं, यकीन ईश्वर का भी नहीं करते, बहुत ही सनकी मिजाज के हो गये हैं। वे अत्यन्त दुर्बल पड़ गये हैं और पेट में दर्द बराबर होता रहता है।

ऐसी बातें सुनकर दोनों मां-बेटे चिन्तित हो जाते। इधर प्रभात ने देवराज के घर आना-जाना बिल्कुल बन्द कर रखा था। एक तो देवराज ने उसे अपने घर न आने के लिए कह रखा था दूसरे अब कोई जरूरत भी नहीं थी, क्योंकि देवराज स्वस्थ हो गया था। एक दिन मां-बेटे में सलाह हुई कि कानपुर चलकर नवलबाबू को यहीं ले आया जाय। बीमारी की हालत में अकेले रहना ठीक नहीं। बाबू रामचरण को जब यह मालूम हुआ तो वे बहुत प्रसन्न हुये और अपना मत प्रकट करते हुये बोले—"तुम्हें जरूर जाना चाहिये प्रभात, अपने पिताजी को लखनऊ लिवा लाओ, यहाँ खाने-पीने की व्यवस्था समुचित ढंग से होगी, इलाज भी चलेगा वे निरोग हो जायेंगे।"

कौशिक और माधवी को भी खुशी हुई और दूसरे दिन प्रातः की ट्रेन से जमुना प्रभात के साथ कानपुर रवाना हो गई।

सबेरे के दस बज रहे थे। आंगन के एक कोने में थोड़ी-सी धूप आ गई थी। नवलबाबू वहीं आराम कुर्सी पर लेटे विचार मग्न थे। चिड़ियाँ चीं-चीं करती हुई आंगन में फुदक रही थीं। कभी-कभी वे कुछ चौंक जाते और सामने बैठी हुई चिड़ियों को ताली बजाकर उड़ा देते, फिर अस्फुट स्वर में न जाने क्या-क्या कहने लगते। तभी सहसा जमुना और

प्रभात उनके सामने जाकर खड़े हो गये। प्रभात ने उनके चरणस्पर्श किये और धीरे-धीरे पूछने लगा—"पेट का दर्द कैसा है पिताजी? आपने मुझे सूचना भी नहीं दी, कितने कमजोर हो गये हैं।"

प्रभात के प्रश्न का नवलबाबू ने जवाब नहीं दिया। वे एकटक उसकी ओर देखते रहे। उनकी त्योरियाँ बदल रही थीं और चेहरा आरक्तावस्था को प्राप्त हो रहा था। जमुना अपनी बात कहने लगी। वह रोकर बोली—"अपना जिद के आगे तुम किसी की बात नहीं मानते हो, देखो तो, क्या हाल बना रखा है देह का। चलो, मैं तुम्हें लेने आई हूँ, वहाँ चलकर दवा करूँगी, यहाँ तुम्हें बहुत तकलीफ है।"

इस प्रकार प्रभात और जमुना अपनी-अपनी कहते रहे। दोनों एक दूसरे का समर्थन कर रहे थे और नवलबाबू खामोश थे पता नहीं क्यों? इससे जमुना को हैरानी बढ़ी। वह खीझ कर बोली—"बोलते क्यों नहीं तुम चुप क्यों हो? मैं .....।"

नवलबाबू एकदम उबल पड़े। वे उठकर खड़े हो गये और गला फाड़ कर बोले—"जाओ, तुम दोनों चले जाओ, नहीं तो मैं खून कर दूँगा। मैं तुम लोगों का सूरत भी नहीं देखना चाहता।"

किन्तु प्रभात और जमुना खड़े रहे। वे अपने स्थान से तिल भर भी नहीं हिले। यह देख नवलबाबू और भी अधिक उत्तेजित हो उठे। इस बार वे प्रभात को पीछे ढकेलते हुए बोले—"किसका लड़का और कौन बाप, चल निकल यहाँ से, कुल-कलंकी मैं बाप नहीं, जल्लाद हूँ प्रभात, तुम चले जाओ, वर्ना मैं तुम्हारा गला घोंट दूँगा।"

प्रभात सहम गया। वह दूर जाकर खड़ा हो गया और जमुना भी भय से थर-थर काँपने लगी। नवलबाबू उसकी बाँह पकड़, खींचते हुये उसे बाहर छोड़ आये और प्रभात स्वयं ही माँ के पीछे चला गया था।

नवलबाबू ने जल्दी से किवाड़ भेड़ कर अन्दर से जंजीर बन्द कर ली और बन्द किवाड़ों पर पीठ का सहारा देकर खड़े हो गये, इस समय वे जोर-जोर से हाँफ रहे थे। उनके पेट का दर्द बहुत बढ़ गया था।

--

## ३४

देवराज के स्वस्थ होने के बाद उसके घर की रूपरेखा एकदम बदल गई थी। वह अवकाश के समय भी घर में नहीं बैठता। प्रायः पुस्तकालय में बैठा पुस्तकों के पन्ने पलटता रहता। बाहर कोई दोस्त-मित्र मिल जाते तो, भले ही हँस-बोल ले; लेकिन घर में हमेशा गम्भीर रहता था। सावित्री से वह बहुत कम बोलता; क्योंकि उससे उसे उपेक्षा हो गई थी। शालिनी और जालपा पर उसका समान स्नेह था, ठीक पहले ही की तरह। वह उन दोनों को बहुत चाहता था।

इधर प्रभात और देवराज के घर में कुछ दूरी आ गई थी, जिसके कारण न तो जमुना उसके घर जाती और न शालिनी ही जाती थी, कौशिक तथा प्रभात के घर। हालांकि इसके लिए भाई और भाभी ने उसे मना नहीं किया था; किन्तु परिस्थितियों के अध्ययन के साथ ही साथ वह अपने में परिवर्तन करती चली गई। मगर अपनी पढ़ाई नहीं बन्द की।

सावित्री का यह हाल था कि वह हमेशा एकान्त में देवराज के पीछे पड़ी रहती कि शालिनी को कहीं दूसरी जगह भेज दो, मेरे आगे लड़की है, और शालिनी समाज में बदनाम हो चुकी है, उसका घर में रहना ठीक नहीं।

किन्तु देवराज ऐसी बातें सुनकर पत्नी को फटकार देता कि खबरदार, यह आभास कहीं शालिनी को न हो जाय, नहीं तो, मैं तुम्हारा एक कर्म नहीं बाकी रखूँगा।

दुष्ट स्वभाव की कर्कशा स्त्रियाँ प्रायः अपना रोना सबसे रोती फिरती है। उस समय उन्हें अपने घर की मान-मर्य्यादा का बिल्कुल ध्यान नहीं रह जाता। ऐसे ही सावित्री अपने घर की कच्ची-पक्की बातें मुहल्ले की स्त्रियों से कहती रहती थी। तब ऐसे मौकों पर वे घर-फोड़ू स्त्रियाँ यह समझाती कि देखो बहू अपने गले में फन्दा न डालो जमाना बहुत खराब है, तुम्हारे सामने लड़की है, शालिनी के ससुरे में अगर कोई हो तो उसे वहीं भेज दो। उसको घर में रखना तुम्हारे लिए बहुत मँहगा पड़ेगा; क्योंकि सब लोगों ने तय कर रखा है कि वे तुम्हारे घर का न पान खायेंगे और न पानी पियेंगे। ऐसी हालत में तुम किसके मुँह में समाओगी बहू ? अरे शालिनी को ससुराल न भेजो, तो कहीं और ही भेज दो। इसमें क्या बुराई है ? वह चली जायेगी तो सारी बला खत्म हो जायेगी।

सावित्री इसीलिए पति को यह समझाया करती और जोर देती कि किसी भी रिश्तेदारी में न हो तो कुछ दिन के लिए शालिनी को भेज दो, सारा मामला शान्त हो जायेगा।

लेकिन देवराज की समझ में कुछ नहीं आता कि वह क्या करे। वह हैरान था, बहुत बुरी तरह। उसकी परेशानियों का कोई ओर-छोर नहीं था। वह जब भविष्य की ओर ध्यान देता तो उसकी जान सूख जाती कि अभी उसे जालपा का ब्याह करना है तब जिसके दरवाजे जायेगा तो वहाँ शालिनी की बदनामी वाली बात सबसे पहले सामने आयेगी और जब शालिनी की ओर आँखें उठाकर देखता तो उसका कलेजा टूक-टूक हो जाता कि जिसको पुत्री-वत् स्नेह किया, जिसके भविष्य को उज्ज्वल बनाने के लिए प्राण-पण से प्रयत्न किया, उसको परिस्थितियों के हवाले कर दूँ, यह कैसे हो सकता है। असहायावस्था में एक अबला को छोड़ देना यह मनुष्यता नहीं कायरता है। आदमी के अपने ही सिद्धान्त जब उसे कायल करने लगें तो फिर उसे जीना नहीं चाहिये। क्या करूँ, घर, भीतर-बाहर सभी जगह

मुश्किल है शालिनी एक समस्या बन गई है। उसे लेकर कहाँ चला जाऊं, समझ में नहीं आता ?

देवराज दिन-रात चिन्ता के सागर में गोते लगाता रहता। कभी कुछ सोचता और कभी कुछ; मगर एक निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पाता। कभी-कभी वह सोचने लगता कि अधिक अच्छा हो, यदि मैं यह शहर छोड़ दूँ, किसी दूसरे नगर में जाकर बसूँ, वहाँ शान्ति से रह सकूँगा, सारी बदनामी यहीं छूट जायेगी। लेकिन ऐसा सोचते समय, जब उसे नौकरी का ख्याल आता, तो उसकी रूह काँप जाती और वह बेबसी में आ, लम्बी-लम्बी साँसें लेने लगता। फिर इस जमाने में सरकारी नौकरियाँ, आदमी के लिए दैवी-वरदान बनी हुई हैं। लोग नौकरी पाने के लिए एड़ी से लेकर चोटी तक का जोर लगाते हैं; परन्तु फिर भी असफल रहते हैं और एक मैं हूँ, जो लगी रोजी छोड़ने की सोच रहा हूँ। मान लो, लखनऊ छोड़कर मैं और कहीं चला गया तो वहाँ जीविका का साधन क्या बनाऊँगा ? सावित्री वहाँ भी साथ होगी। वह इस जिन्दगी में मुझे चैन से नहीं बैठने देगी। न जाने कैसा भाग्य लेकर मैंने जन्म लिया है, लगता है सारी जिन्दगी रोते ही बीतेगी। क्या करूँ अपनी मजबूरियों का मेरे पास कोई एलाज नहीं है। जमाना बड़ा बेरहम है, गिरे हुये आदमी को उठाना तो लोग जानते ही नहीं, ऊपर से दो लातें लगा देना वे बहुत बड़ी समझदारी समझते हैं। एक ओर दुनिया है और दूसरी ओर परिस्थितियाँ हैं, मनुष्य पता नहीं कैसे जी रहा है। काश! धरती पर धर्म का ढिंढोरा पिट जाता, राम-राज्य हो जाता, तो फिर उस स्वर्ण-युग में कोई दुखी नहीं रहता।

## ३५

मन के विकार जब जहर बुझे तीर बन मुँह से बाहर निकलने लगते हैं तो विकृति का बाजार गर्म हो जाता है। झूठी-झूठी अफवाहें जब चर्चा का रूप ले लेती हैं तो समाज में विषैली हवा बहने लगती है और तिल के बन गये ताड़ को लेकर लोग मनमाने रूप से कीचड़ उछालते हैं और समाज के ठेकेदार यह कहने लगते हैं कि बिना भय और आतंक के शासन नहीं होता, हम लोग समाज की बुराइयाँ दूर कर रहे हैं।

समाज कोई संस्था नहीं एक समुदाय है। समस्त मानव-वर्ग उसमें जुड़ा है, सभी सदस्य हैं। अपनी-अपनी बात कहने का सबको अधिकार है। पुरातन रूढ़ियों से ग्रस्त और जर्जर मृत प्राय-सा हो रहा समाज, नई चाल और नया ढँग किसी को मान्यता नहीं देता। यह उत्थान नहीं पतन के लक्षण है, परिवर्तन आदमी को एकदम चौंका देता है; लेकिन संशोधन मीठी थपकी देकर उसे सुला देता है। फिर उसके बाद जब सबेरा होता है, तो नई दुनिया में नया दिन निकलता है, नया सूरज चमकता है और नई हवा बहती है। प्रभात सूरज था, शालिनी शशि, कौशिक, माधवी, जमुना और देवराज आदि नक्षत्र थे नये संसार के। अतीत वर्तमान से लड़ रहा था दोनों में संघर्ष की सृष्टि हो गई थी और लगता था कि नई बनी हुई नाव अभी-अभी नदी में डाली गई है। उसमें कुछ सूराख रह गये हैं अतः जल्दी ही वह नाव डूब जायेगी। नये हाथ पुराने हाथों की आलोचना कर रहे थे,

किन्तु कर्मनिष्ठों की लगन में न कुछ नया था और न पुराना। उनके सामने एक ध्येय था, आगे बढ़ने का। नई पीढ़ी भविष्य के प्रति अधिक जागरूक थी वह वर्तमान से सामञ्जस्य रखते हुये भी भावी के आँचल को सुनहला देखना चाहती थी। लेकिन पुराने लोगों की धारणा कुछ और थी कि भविष्य की चादर सुनहली नहीं काली होगी। यह बीसवीं सदी है अँगरेजियत और नकल नवीसी का जमाना है, दौड़-कर चलनेवालों को मुँह की खानी पड़ेगी। यह राजा बनने के सपने देखनेवाले एक दिन रंक बनकर रह जायेंगे। बस समझ लो कि अब प्रलय होने में देर नहीं।

देवराज अपनी समस्या को स्वयं ही सुलझाता था। प्रभात और काशिक का अभाव उसे बहुत खलता था। वह प्रतिपल यह महसूस करता कि उसकी दोनों बाहें टूट गई है। वह लूँजा हो गया है। वह क्रूर कसाइयों से गाय तुल्य शालिनी की रक्षा करने में असमर्थ है। उसकी बहन विनाश के जबड़ों में दबती जा रही है। उसके पैर शून्य पड़ गये हैं। उसकी जिह्वा काम नहीं देती और आँखों के सामने अस-मंजस नाच-नाच कर रह जाता है।

छुट्टी के दिन देवराज को समय काटना मुश्किल हो जाता था। वह घर में रहता तो सावित्री उसके कलेजे पर हथौड़े की चोटें मारती, बाहर जाता तो लोग उंगली उठाते और कोई-कोई मुंहफट लोग सामने ही कहने लगते कि अरे सुना है, तुम्हारा समाज से बहि-ष्कार हो गया है। मुहल्ले के सब लोग खिलाफ हैं, शालिनी को घर में रखने पर उनको आपत्ति है। उनका कहना है कि शालिनी का पैर काली-नीचे पड़ चुका है चाहे बात कुछ भी न हो; लेकिन भइया बद-नामी बहुत बुरी चीज होती है। उसको घर से कहीं हटा दो, तो बहुत अच्छा होगा।

सीधा और सरल स्वभाव का आदमी भी एक दिन चिड़चिड़ा हो जाता है। इसका कारण कुछ और नहीं अन्याय के प्रति उसका

अन्तः विरोध होता है। मंथन से रस में भी विष की सृष्टि हो जाती है। आदमी खीझ जाता है जब उसे अनायास ही लोग हैरान करते हैं। ऐसी ही स्थिति हो गई थी देवराज की। उसका सन्तुलन, उसका संयम, उसका विवेक सभी चीत्कार कर उठे थे और वह अब लोगों की बात का जवाब देने लगा था, जो अप्रिय होता और जो ऐसा होता कि व्यर्थ ही लोगों से उसकी तू-तू, मैं-मैं हो जाती।

इस तरह नियति के पहिये अबाध गति से घूम रहे थे। आसुरी और मानवी शक्तियाँ दैवी-पद के लिए लड़ रही थीं। हिंसा, अहिंसा को चुनौती दे रही थी। पाप विज्ञान की नाई चारों ओर अपनी चादर फैला रहा था और ईमान, मान और स्वाभिमान तीनों की ही छीछा-लेदर थी। मुकदमा कत्ल का था, लेकिन सुनवाई कातिल की ही हो रही थी और सबूतपक्ष के विपक्ष में वकील कह रहा था कि कत्ल हुआ ही नहीं, मरने वाला अपने आप मर गया।

इसी तरह एक दिन मुहल्ले के लोगों ने सभा की। उस पंचायत में सर्व सम्मति से यह प्रस्ताव पास किया गया कि देवराज का समाज से बहिष्कार कर दिया गया है। वह जाति-भ्रष्ट हो गया है, उसके यहाँ न कोई पान खायेगा और न पानी पियेगा। समाज में मिलने की एक सूरत हो सकती है कि वह शालिनी को घर से हटा दे, कहीं भी भेज दे। फिर सत्यनारायण की कथा करे और कुटुम्बियों को भोज दे। इसके बिना वह जाति में नहीं मिल सकता।

पंचायत का दल दूसरे दिन सबेरे ही सबेरे देवराज के घर जा पहुँचा और सबके मुखिया गणेश पुजारी बीचोबीच आँगन में खड़े हो, देवराज से कहने लगे—"देवराज! अब इन लोगों को जवाब दो, देखो सब क्या कह रहे हैं? होनहार नामी क्या फिर चली जाती है, वह अपने पीछे पता नहीं कितने पाप-पुण्य छोड़ जाती है, शालिनी मुहल्ले में इस समय चर्चा का विषय बन रही है। भला सोचो, हमारी बहू-बेटियों पर इसका असर कैसा पड़ेगा?"

देवराज यह नहीं जानता था कि बात इतनी आगे बढ़ जायेगी। वह आँखें फाड़े और मुँह फैलाये गणेश पुजारी की ओर देखने लगा। सावित्री लम्बा घूँघट डाल, आँगन में पति के निकट आ खड़ी हो गई, शालिनी आँगन में बैठी थी। वह लज्जा के कारण अन्दर भाग गई। गणेश पुजारी ने सभा का प्रस्ताव देवराज को अच्छी तरह समझा दिया, जिसे सुनकर देवराज ने दोनों हाथ सिर पर मार लिए और बुरी तरह गला फाड़कर बोला—"बन्दूक लाइये—पुजारी जी और मुझे शूट कर दीजिए, आप लोगों ने मेरा यह फैसला किया है? मैं कहता हूँ कि आपको क्या हक है? मैं समाज-वमाज कुछ नहीं मानता। घर में रोटी-कपड़ा नहीं होगा तो आप खाने को नहीं दे देंगे। फिर क्या अधिकार है, किसी के घरेलू मामलों में दखल देने का। जाइये, मैं आप लोगों की इज्जत करता हूँ, मुझे इन व्यर्थ की धमकियों से कोई नहीं डरा सकता। मैं नहीं मानता, आप लोगों की शर्त मैं मुलजिम नहीं हूँ मैंने कोई गुनाह नहीं किया है?"

यह सुनते ही लोगों में चखचख मच गई। पुरुषों के साथ कुछ स्त्रियाँ भी आई थीं। वे आपस में बतलाने लगीं कि मैय्या री मैय्या! इतना अन्धेर देखो तो देवराज बातें कैसी करता है। लगता है जैसे बालिस्टर (बैरिस्टर) हो बालिस्टर। इसी प्रकार पुरुष-वर्ग में भी कुछ तेजी आ गई थी। लोगों की भौंहें कमान बन रही थीं। पुजारी जी हाथ में एक हल्का-सा बेंत पकड़े थे। वे उसको दोनों हाथों में मजबूती से पकड़ कर दाँत पीसकर कहने लगे—"अरे जा, जा, बढ़-बढ़कर बोलता है, नास्तिक, तू बहुत ही गया-बीता हो गया है, जिसकी धर्म पर आस्था नहीं। नहीं मानेगा किसी की बात तो न मान, कोई तेरे हाथ नहीं जोड़ता है। जब लड़की का ब्याह करने किसी के दरवाजे जायेगा, तब याद आयेगा कि समाज क्या है, और उसकी क्या जरूरत है?"

आँगन में गणेश पुजारी और देवराज की झड़प हो रही थी। बीच में और भी लोग अपनी खिचड़ी पका रहे थे और अन्दर बैठी शालिनी बड़े-बड़े आँसुओं रो रही थी।

## ३६

काफी देर हो गई मुहल्ले के लोग देवराज के आँगन में ही जमे रहे। मामला तूल-अर्ज पकड़ गया था। पहले गणेश पुजारी से देवराज की कथा सुनी हुई। फिर इसी तरह वह और-और लोगों से उलझता चला गया।

स्त्रियाँ सावित्री को कोंच रही थीं कि वह पति को समझाती क्यों नहीं? सीधी तरह वह लोगों की बात मान ले वह तो उल्टा आगला करता है।

इधर काफी दिनों से कौशिक देवराज के यहाँ नहीं आया था। शालिनी और प्रभात को लेकर जो बदनामी फैल रही थी—रामचरण बाबू अक्सर उस पर विचार किया करते। वे जानते थे कि देवराज ऐसी स्थिति में बहुत हैरान होगा। आज छुट्टी का दिन था वे फुरसत में थे इसीलिए देवराज को बुलाने के लिए कौशिक को भेजा। उनका आशय कुछ और नहीं देवराज को सान्त्वना देना था।

कौशिक जब देवराज के घर पहुँचा तो वहाँ का दृश्य देख वह हक्का-बक्का रह गया और अपनी बात कहना भूल गया। वह जब स्थिति को समझ पाया तो लोगों से विनम्र-स्वर में कहने लगा—"आप लोग इस तरह भीड़ क्यों लगाये हैं? आदमी से बात साधारण ढंग से की जाती है न कि इस तरह की एक साथ ही उन पर सभी लोग हावी हो जायें। मेरी प्रार्थना है कि आप लोग जायें, मैं देवराज को समझा लूँगा।"

कौशिक की ये बातें सुनकर देवराज को तो प्रसन्नता हुई; लेकिन लोग उस पर बिगड़ने लगे कि वह इस मामले में न बोले। वह ठहरा, उसका रिश्तेदार वह उसकी ऐसी ही कहेगा।

इस तरह विवाद चलता रहा और मामला शान्त नहीं हुआ तब कौशिक भाग कर प्रभात के घर पहुँचा। उसको सूचना दी फिर माँ-बाप को लेकर थोड़ी ही देर में देवराज के घर पहुँच गया। गौरी स्त्री-समुदाय में जाकर खड़ी हो गई और उनको समझाने लगी। किन्तु स्त्रियाँ उसकी कोई बात सुनती ही नहीं थीं अपनी कह रही थीं और यही परिस्थिति थी रामचरण बाबू के साथ। लोग उनसे अकारण ही वाक् युद्ध कर रहे थे। इतने में लपकता हुआ वहाँ आ गया प्रभात। वह भीड़ के बीच में घुस, सीना तानकर खड़ा हो गया और लोगों की ओर उन्मुख हो, ऊँचे-स्वर में कहने लगा—"मैं शालिनी को अपनी धर्मपत्नी स्वीकार करता हूँ। आप लोगों को यह मान्य होना चाहिये; क्योंकि दोनों पक्ष ब्राह्मण हैं और विधवा-विवाह को कानूनी हक प्राप्त है। यद्यपि शालिनी पर मैंने कभी कुदृष्टि नहीं डाली; किन्तु जब विवाद उठ खड़ा है, तो मैंने यही करना उचित समझा कि शालिनी से विवाह कर लूँ, सारे झँझट खत्म हो जायेंगे।"

भीड़ में सन्नाटा छाकर रह गया। लोग प्रभात का मुँह देखने लगे। देवराज मित्र को गले से लगाता हुआ बोला—"तुमने मेरा उद्धार कर लिया प्रभात! अब मुझे समाज का कोई डर नहीं है, तुमने दोस्ती का हक अदा कर दिया। सच्चा दोस्त जिन्दगी में हमेशा साथ देता है। वह दोस्त की जिम्मेदारी को अपनी जिम्मेदारी समझता है। तुम आदमी नहीं हीरा हो प्रभात! किस मुँह से तुम्हारी बड़ाई करूँ?"

सावित्री एक कोने में खड़ी, घूँघट के अन्दर कुछ बुदबुदा रही थी और शालिनी के आँसू रुक गये थे। उन्हें पोंछती हुई वह सोच रही थी कि मेरा विवाह प्रभात के साथ हो जायेगा इससे मेरी तो जिन्दगी बन जायेगी, लेकिन जालपा का क्या होगा? लोग बदनामी

वाली बात को भूल नहीं जायेंगे। कलंक का दाग आजीवन नहीं धुलता है। बद अच्छा और बदनाम बुरा होता है। सारे झगड़ों की जड़ मैं ही हूँ। क्या करूँ? कौन-सा कदम उठाऊँ? क्योंकि परिस्थिति बहुत नाजुक हो गई है।

शालिनी अपने अन्तर्द्वन्द्व को लेकर बैठी थी। बाहर आंगन में रामचरण बाबू प्रभात की पीठ ठोक रहे थे और कह रहे थे—"हिम्मते मर्दे, मददे खुदा, तुमने कमाल कर दिया प्रभात? मुझे तुमसे ऐसी ही उम्मीद थी।"

गोरी भी प्रभात को शाबासी देने लगी। अब उस भीड़ के दो पहलू हो गये थे। एक ओर हर्ष की लहरें उमड़ रही थीं और दूसरी ओर विरोधी पक्ष के लोगों के मुँह तीन कोने के हो रहे थे।

जो लोग देवराज के घर प्रभात और शालिनी के प्रति विरोध का प्रस्ताव लेकर आये थे उनमें से सभी यह जानते थे कि क्या प्रभात शालिनी को कभी पत्नी मानने को तैयार होगा। नई रोशनी के लड़के प्रेम जानते हैं; लेकिन उसकी परिभाषा नहीं। वे प्यार की नदी में कभी पूरे नहीं उतरते। अपने वचन का निर्वाह नहीं कर पाते। लेकिन प्रभात की ओज-पूर्ण बातें सुनकर उनके कान खड़े हो गये।

कुछ लोग प्रभात की बातों से बहुत खुश हुये। वे अपना दकियानूसीपन भूल गये और कहने लगे कि विधवा-विवाह शास्त्र में भी वर्जित नहीं है। हम लोग प्रभात की तारीफ किये बिना नहीं रहेंगे कि उसने साहस का परिचय दिया है। शालिनी और प्रभात का विवाह जरूर होना चाहिये।

इस पर गणेश पुजारी आदि कई आदमी—बिगड़ पड़े और आपस में ही लड़ने लगे कि विधवा-विवाह करेगी, वह भी अपने कुल में नहीं, एक दूसरी कोटि के ब्राह्मण के साथ। यह पाप की नाव जल्दी ही डूब जायेगी।

स्त्रियाँ अलग शोर मचा रही थीं कि शालिनी ब्याह करेगी प्रभात से। अन्धेर हो जायेगा दिन में तारे निकल आयेंगे, राम-राम! जब पाप छिपाये न छिपा तो यह ढोंग रचा गया।

सावित्री अब किसी की न सुन, पति से ऊँची आवाज़ में कह रही थी—"तुम्हें क्या हो गया है, दिमाग तो नहीं फिर गया है? अभी

बदनामी से पेट नहीं भरा क्या ? मेरे आगे लड़की है। मैं प्रभात के साथ शालिनी का विवाह नहीं होने दूँगी। तुम्हें·····।"

देवराज ने पत्नी को आगे नहीं बोलने दिया। वह गुस्से में आकर उसे डांटने लगा। लेकिन उसका बड़बड़ाना बन्द नहीं हुआ। वह तनिक चुप रहकर फिर बोलने लगी। तब देवराज आँगन से ही चिल्लाया—"शालिनी ! बाहर आओ बहन, मैं अपना संकल्प अभी पूरा करता हूँ।"

यह कहते समय देवराज सोच रहा था कि शालिनी बाहर आये और मैं उसका हाथ प्रभात के हाथ में थमा दूँ इसी भीड़ के सामने। शेष वैवाहिक कार्य बाद में सम्पन्न होते रहेंगे।

शालिनी जब बाहर नहीं आई तो देवराज ने पुनः आवाज़ दी। इस बार भी अन्दर के किवाड़ खुले नहीं बन्द ही रहे।

तब देवराज पीछे रह गया और आगे बढ़ गया प्रभात। वह शालिनी के कमरे की ओर जाते-जाते कह रहा था—"क्यों, भय करती हो शालिनी ! हमें समाज का दर्पण बनना है, आओ, देवराज बाबू बुला रहे हैं !"

प्रभात ने जैसे ही किवाड़ खोले तो देखा कमरा खाली पड़ा है, उसमें कोई नहीं है। उसके पैरों के नीचे से जमीन निकल गई। वह भौचक्का-सा खड़ा, देखता ही रह गया। देवराज पीछे आकर खड़ा हो गया और शालिनी को वहाँ न देख, प्रभात से पूछने लगा—"कहाँ चली गई शालिनी, अभी तो यहीं थी ?"

"पता नहीं।" प्रभात के मुंह से केवल इतना निकला और वह जड़वत्—जमीन पर खड़ा, देवराज की ओर देखने लगा। कमरे में पीछे दरवाजा था बाहर जाने का, उसकी कुण्डी हमेशा बन्द रहती; लेकिन आज खुली थी। देवराज यह देखकर चौंक गया और अनायास ही उसके मुंह से निकल गया—"मालूम होता है, शालिनी कहीं चली गई।" वह पीछे के किवाड़ खोलकर बाहर भागा। देखते ही देखते घर में हलचल मच गई। सब की जबान पर केवल एक बात थी कि शालिनी अभी-अभी कहीं चली गई।

सावित्री के मुंह पर मातम छा गया और बोलनेवालों की जबानें

बन्द हो गई। घर में सब जगह नीचे-ऊपर देख लिया गया। देवराज पीछे से घूमता हुआ फिर आँगन में आ गया और कमरे में बुत बने खड़े प्रभात से पूछने लगा—"मिली शालिनी, कहाँ थी ?"

प्रभात के पास इस बात का जवाब न था। उसने एक बार नीचे से ऊपर तक देवराज को देखा। फिर न जाने क्या सोच, तेजी से लपकता हुआ, पीछे के दरवाजे से बाहर निकल गया।

इधर प्रभात चला गया। देवराज किंकर्त्तव्यविमूढ़-सा कमरे में खड़ा था और आँगन में लोगों में चख-चख चल रही थी कि अगर कुछ दाल में काला नहीं था तो शालिनी भाग क्यों गई ? अरे, पाप छिपाने के लिए हिम्मत चाहिये, हिम्मत !

धीरे-धीरे पुरुष और स्त्रियाँ एक-एक करके खिसकने लगीं। घर में अकेली सावित्री रह गई; क्योंकि देवराज भी पता नहीं, किस समय बहन की तलाश में निकल गया था ?

× × ×

सब के सामने सावित्री का मुँह धुआँ हो गया था। वह शर्म से झुक कर रह गई थी। देवराज लौट आया। शालिनी नहीं मिली और ऐसे ही निराशा में भरा हुआ सारे दिन भटक कर आधी रात के करीब प्रभात भी वापस आ गया। शालिनी का पता कहीं नहीं चला। निरन्तर उसका पता लगाने की कोशिश होती रही। कौशिक और रामचरण बाबू भी अपने प्रयत्न में पीछे नहीं थे। किन्तु घर से रूठ कर जानेवाला कभी अपना पता नहीं बताता कि वह कहाँ जा रहा है ?

मुहल्ले में अब दो दल बन गये थे। एक सावित्री को बुरा-भला कहता था कि उसके ही कारण सारी हाय-हाय हुई और शालिनी पता नहीं कहाँ जाकर डूब मरी ? और दूसरा पक्ष डंके की चोट पर कह रहा था कि शालिनी में बुराई थी इसीलिए चली गई पाप छिपाने के लिए साहस चाहिये।

इस तरह लोग अपनी-अपनी कह रहे थे और कुछ का कुछ सोच

रहे थे और सब की यह धारणा निर्मूल हो गई थी, कि शालिनी अभी जिन्दा है और लौट कर वह घर आयेगी।

किन्तु एक दिन शालिनी के तीन पत्र तीन व्यक्तियों को प्राप्त हुये। इनमें से प्रथम प्रभात था दूसरा देवराज और तीसरे गणेश पुजारी। सभी के पत्रों का आशय एक था और ये चिट्ठियाँ लखनऊ के ही पोस्ट आफिस से भेजी गई थीं।

देवराज के हाथ में लिफाफा पहुँचा। वह खोलकर पढ़ने लगा। सावित्री चौकन्नी होकर पति के पास बैठ गई और सुनने लगी कि चिट्ठी में क्या लिखा है?

देवराज पढ़ रहा था—"

पूज्य भैय्या,

प्रणाम!

यह पत्र पाकर आप एकदम चौंक उठेंगे कि मैं अब तक लखनऊ में ही रही। लेकिन अब कहाँ आऊँगी? मिटूँगी या रहूँगी कुछ नहीं कह सकती? आप निर्माण करने के लिए दिये में तेल डाल रहे थे, बत्तियाँ बढ़ा रहे थे; किन्तु समय के थपेड़ों ने विवश कर दिया है अब निर्माण के बिना दीपक की गति नहीं। अच्छा है एक मशाल बुझ रही है दूसरी मशाल हमेशा-हमेशा जलती रहे। मैं प्रभात बाबू के त्याग की सराहना करती हूँ। नाराज न होना भइया; मुझे माफ कर देना, मैं मजबूर थी घर न छोड़ती तो आखिर क्या करती? एक तो मेरे कारण आपकी और भाभी की हमेशा अनबन बनी रहती थी और भाभी का मेरे प्रति आप पर बिगड़ना सर्वथा उचित था। उनके सामने लड़की है, उसका भविष्य उज्ज्वल रखना बहुत आवश्यक है। दूसरा कारण घर छोड़ने का यही है कि मैं नहीं चाहती कि मेरे पीछे मेरी भतीजी का जीवन बर्बाद हो। माना कि मेरा विवाह प्रभात बाबू के साथ हो जाता और मैं सुखी जीवन व्यतीत करने लगती, सोचो तो फिर जालपा का क्या होता? आप वर की खोज में जिसके दरवाजे जाते वही मेरी

मिसाल सामने रखकर आपको धिक्कार देता आप कुछ न कर पाते भइया! चुपचाप लौट आते। मेरा क्या, जिन्दगी में जो पाना था पा लिया अब मृत्यु से आलिंगन करूँगी या और क्या करूँगी कुछ भी तय नहीं। मैंने प्रभात बाबू को भी ये ही सब बातें लिख दी हैं उनसे क्षमा भी माँग ली है और आप ही सोचिये भइया कि भाग्य को आखिर कहाँ ले जायेंगे वह हमेशा आदमी से दो कदम आगे चलता है। मेरे जीवन में एक बार वसन्त आया था जब मैं दुलहिन बनी थी। लेकिन बहार खत्म हो गई, गुलशन वीराना हो गया, सिन्दूर धुल गया, माँग सूनी हो गई। दुबारा फिर वही स्वांग रचती मन ने इसे स्वीकार नहीं किया। मैं तारीफ करूँगी प्रभात बाबू की उनका साहस अद्वितीय है मैं चाहती हूँ कि जो मशाल वे हाथ में पकड़े हैं वह निरन्तर जलती और खूब ऊँची लपटों में जले तथा दुनिया के हर अँधेरे कोने में प्रकाश फैल जाये।"

देवराज की आँखें भर आईं, मुद्रा उदास हो गई और कण्ठ आर्द्र हो आया, जिससे आवाज कुछ भारी-सी हो गई। उसने एक लम्बी साँस ली और फिर पढ़ने लगा। तभी सहसा उसकी आँखों से दो गरम-गरम आँसू पत्र पर चू पड़े। अक्षरों पर स्याही फैल गई। तब उसने ऊपर दृष्टि उठाई और देखा कि कठोर-हृदया सावित्री के कपोल आँसुओं से तर हो रहे हैं। उसने पत्र रख दिया और सावित्री से कहने लगा—"न रोओ सावित्री, अपनी भूल जब आदमी को मालूम होती है तो फिर बाद में रोना ही आता है। मेरी समझ से शालिनी अब इस दुनिया में नहीं है शायद उसने आत्म-हत्या कर ली होगी।"

सावित्री रोते-रोते बोली—"शालिनी ने यह क्या कर डाला? वह जरूर मेरे ही कारण घर से गई। अब सोचती हूँ तब नहीं समझ में आता था कि कभी तो उससे हँस कर बोलूँ अच्छी तरह बात करूँ। वह समाई करती रही और मैं उस पर जुल्म करती रही, ईश्वर गलती को कभी माफ नहीं करता। उसका सच्चा दरबार है वहाँ गरीब-

अमीर, छूत-अछूत सभी की फरियाद सुनी जाती है; दूध का दूध और पानी का पानी सामने आ जाता है।"

जालपा खेलती-खेलती बाहर से आई और माँ-बाप को रोते देख सहम कर, पास आकर बैठ गई। देवराज पत्र पढ़ने लगा और बालिका माँ के साथ सुबकने लगी।

पत्र में आगे लिखा था—"भइया, मैं चाहती हूँ कि मिटकर दुनिया में एक मिसाल कायम कर जाऊँ। आप या अन्य लोग मेरा पता लगाने का प्रयत्न न करें, निराशा होगी। मैं अब आखिरी मंजिल की ओर जा रही हूं, जिस पर पंथी चल रहा है और मशाल जल रही है। मैंने गणेश पुजारी को भी एक पत्र लिखा है, क्योंकि मेरे मामले में वे ही सबसे आगे-आगे चलते थे। खूब कसकर मैंने उनको अपनी दलीलें लिखी हैं कि आखिर समाज में विधवा हेय क्यों है। पुरुष की इच्छायें हैं और स्त्री क्या सिर्फ एक कठपुतली है, जिसको मनमाने रूप से पुरुष नचाता रहे? विधवा-विवाह वर्जित है समाज को अब यह बात भूल जानी चाहिये। प्रथम पत्नी के निधन के चन्द दिन बाद ही, पति सिर पर मौर रखकर दूसरी ब्याह लाता है उसे अधिकार है; क्योंकि सामाजिक विधान के नाते स्त्री उसके पैर की जूती है। वह चाहे पहने या फेंक दे और फिर नई खरीद लाये! वाह! यह अच्छा तमाशा है! युग प्रगति की ओर बढ़ रहा है, स्त्री पुरुष से पीछे नहीं रह सकती। वह अपने अधिकारों की माँग करेगी और उनके लिए लड़ेगी। हर विधवा को यह हक होगा कि वह उसी तरह से पुनर्विवाह कर सकती है जैसे आदमी दुबारा दूल्हा बनता है। यह पद्धति अपने ही देश में है, कि पति मर गया और पत्नी सब के लिए अभिशाप बन कर रह जाती है। मेरा दावा है और आपसे प्रार्थना है कि इस पूरे पत्र को समाचारपत्र में प्रकाशित होने के लिए दे दें, ताकि समाज के ठेकेदारों को यह पता चल जाय कि शालिनी अपने लिए नहीं दुनिया के लिए मिटी है और उसका यह दावा है

कि समाज की आंधागर्दी अधिक दिन क्या, अब बिल्कुल नहीं चल सकती। उन्हें मजबूर होना पड़ेगा इस बात के लिए कि समाज की जड़ों में तेजाब छोड़ना बन्द कर दें और दिन पर दिन खोखले हो रहे इस सामाजिक ढाँचे को सुन्दर और स्वस्थ बनायें, क्योंकि अन्याय अधिक दिन तक नहीं टिकता और पाप का दिया बुझ कर ही रहता है। नई पौध और आगे आने वाली पीढ़ियाँ, मेरे पक्ष में रहेंगी, यह मैं जानती हूँ। एक दिन वह अवश्य आयेगा, जब समाज में उथल-पुथल मच जायेगी और पाखंडियों को भागे बीच नहीं मिलेगा। प्रभात बाबू से कहना, कि उन्होंने जो बीड़ा उठाया है, उसे पूरा करने में खून-पसीना एक कर दें और तनिक भी न डरें, इस ढोंगिये समाज से, जो शेर की खाल ओढ़ कर कहता है कि मैं वन का राजा हूँ। भइया, ये समाज के लम्बी चोटी धारी, त्रिपुण्ड और तिलक लगाने वाले, सब के सब गीदड़ हैं और वेश्यावृत्ति को दाद इन्हीं से मिली है। इनके काले कारनामें, भोले-भाले लोग नहीं जानते। ये आस्तीन के साँप मौका पाते ही डस लेते हैं। तरुणी युवतियों को, जो विधवा हैं, उन्हें—पुनर्विवाह का अधिकार न देकर, ये साम, दाम और दण्ड-भेद, सभी तरह से, उनका जीवन बर्बाद करने की कुचेष्टाएँ करते हैं। पता नहीं, इस तरह कितनी भ्रूण-हत्यायें होती हैं और जब भेद खुल जाता है कि विधवा गर्भवती है, तो ये ही लोग मुँह फैला-फैला कर कहने लगते हैं कि अमुक स्त्री बदचलन थी, इसको निकाल दो, पता नहीं पाप की गठरी कहाँ से ले आई? तब वे अनाथिनी विधवायें ठोकरें खाती हैं समाज में भटकती हैं। गुण्डे, शोहदों का प्रश्रय बनती हैं और आखिर में हार मानकर कोठे पर जाकर बैठ जाती हैं। वहाँ गणेश पुजारी जैसे ही लोग जाकर उनका आदाब बजाते हैं। उनके रूप और यौवन से खेलते हैं और रुपयों से उनका आँचल भर देते हैं।"

पत्र की उपरोक्त पंक्तियाँ पढ़ते समय देवराज की धमनियों में तेजी से रक्त दौड़ने लगा। आँसू रुक गये, आँखें जलने लगीं। वह

कुछ-कुछ क्या, पूरा-पूरा आवेश में आ गया और सावित्री से कहने लगा—"सुना तुमने, शालिनी ने क्या लिखा है ? मैं इस पूरी चिट्ठी को अखबार में छपवाऊँगा और समाज का भय छोड़कर प्रभात को सहयोग दूँगा। मैं अपनी बहन की इच्छा जरूर पूरी करूँगा सावित्री, वह मानवी नहीं देवी थी।"

उत्तर में सावित्री एक गर्म उसाँस लेकर कहने लगी—"शालिनी ने समाज का सच्चा चिट्ठा अपनी चिट्ठी में उतार दिया है। प्रभात से मुझे द्वेष रहा; लेकिन अब लगता है कि मुझे उससे वैर न करके उसके सुझावों पर चलना चाहिये था। जरूर दो, यह पत्र अखबार में, उन लोगों की आँखें खुल जायेंगी, जो जबर्दस्ती अबलाओं का जीवन बर्बाद करते हैं। काश ! शालिनी लौट आती, तो कितना अच्छा होता ?"

देवराज उस लम्बे-चौड़े पत्र को आगे पढ़ने लगा। लिखा था—"प्रभात बाबू से मुझे श्रद्धा रही अब भी मैं उनकी उपासिका हूँ। मैं जानती हूँ कि बंगाल में सती प्रथा का अन्त करनेवाले राजा राम मोहनराय की तरह प्रभात का भी नाम इतिहास के स्वर्णाक्षरों में लिखा जायेगा। माधवी का विवाह दूसरे ब्राह्मण समाज में करके उन्होंने यद्यपि सबकी दृष्टि में अपने बाप का विरोध किया; लेकिन मैं उसे विरोध नहीं कह सकती; क्योंकि वे नये और पुराने विचारों में साम्य चाहते हैं। अन्तर्जातीय विवाह भी इस बहु जाति वाले राष्ट्र के लिए बहुत आवश्यक है, माधवी और कौशिक का विवाह इसका प्रमाण है। मेरे मामले को लेकर नवलबाबू पुत्र पर अब तक नाराज हैं। मैं नहीं चाहती कि मेरे पीछे बाप-बेटे के बीच की खाई खन्दक बन जाय। मैंने सभी तरह से सोच लिया था भइया, तब घर के बाहर कदम निकाला है। बस आपसे विदा ले रही हूँ शायद अब आप लोगों के मैं न दर्शन कर सकूँ। मुझे क्षमा कर देना भइया और भाभी के सामने मैं एक महान् अपराधिनी हूँ, मैं माफी माँगते भी डरती हूँ; क्योंकि यह मेरा

हमेशा दुर्भाग्य रहा कि, जब तक घर में रही, उनको क्रोधित होने तथा बिगड़ने का ही अवसर देती रही। क्षमा करना भाभी; मैं आपको अपने लई कभी प्रसन्न नहीं कर सकी यह मेरी कमजोरी थी। बस अब आखिरी बार मैं फिर याद दिला देना चाहती हूं कि मेरे पत्र को दैनिक समाचार पत्रों में छपने के लिए जरूर भेज देना मुझे विश्वास है कि मेरा भइया अपनी बहन की यह अन्तिम इच्छा अवश्य पूरी करेगा।"

पुनश्च, हां एक बात तो भूल ही गई भइया, मेरे ट्रंक में लगभग सत्तर-अस्सी रुपये होंगे। यह ससुराल की पूंजी है, जो मैंने जालपा के लिए सहेज कर रखी थी। मेरी ओर से उसके विवाह में ये रुपये भेंट स्वरूप दे देना। बस, अब हाथ कांप रहे हैं मैं कलम रख रही हूं और जा रही हूं अज्ञान दिशा की ओर चलते-चलते फिर एक बार शामा की इच्छा ललक उठी है। बस, शालिनी को भूल जाओ भइया, समझ लो वह दुनिया में पैदा ही नहीं हुई थी।"

पत्र में नीचे शालिनी के हस्ताक्षर थे। देवराज पत्र समाप्त कर बच्चों की भांति रोने लगा। सावित्री उसे समझाने लगी किन्तु उसकी जैसे प्रज्ञा ही नष्ट हो गई थी वह कुछ सुन ही नहीं रहा था। सहसा रोते-रोते वह उठ खड़ा हुआ और विक्षिप्त की नाईं अस्त-व्यस्त डग रखता हुआ बाहर निकल गया। सावित्री उसके पीछे दौड़ी। वह जोर से चिल्लाई—"कहां जाते हो? रुको, मेरी बात तो सुनो, शालिनी के लिए कहीं भी जाना व्यर्थ है, मेरी समझ से शायद वह अब इस दुनिया में नहीं है।"

किन्तु देवराज चलता चला गया, उसने पीछे घूम कर भी नहीं देखा। सावित्री के पांव चौखट पर आकर रुक गये। वह फटी आंखों से जाते पति को निहार रही थी और उसकी धोती पकड़ कर जोर-जोर से रोती हुई जालपा कह रही थी—"मां, बाबू कहां चले गये? क्या अब शालिनी बुआ नहीं मिलेंगी।"

सावित्री ने पुत्री को अपनी बाहों में भर लिया और बुक फाड़ कर रो पड़ी, जिससे बालिका अधीर हो, फूट-फूट कर रोने लगी।

देवराज जा रहा था प्रभात के घर, हाथ में शालिनी का पत्र पकड़। सड़क पर काफी रेल-पेल थी। पैदल और सवारियों की भरमार सभी का पथ अस्त-व्यस्त कर रही थी। अचानक देवराज के पैरों में फुर्ती आ गई, उसे लगा कि सामने से शालिनी जा रही है अपनी नित्य वाली श्वेत मारकीन की मैली ही रही धोती पहने। वह लपका, उसका कलेजा खुशी से उछलने लगा। उस युवती के निकट आते-आते उसके मुंह से बरबस ही निकल पड़ा—"शालिनी, मेरी बहन, कहां चली गई थी तू!"

युवती एकदम चौंक गई और प्रश्नकर्ता देवराज की ओर देखने लगी। देवराज ने जब उसकी मुखाकृति देखी, तो फिर वह दूसरी तरफ होकर चलने लगा और अस्फुट स्वर में धीरे-धीरे बुदबुदाने लगा—"नहीं, तुम शालिनी नहीं, हो, शालिनी·····।"

दोपहर होने के लक्षण स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहे थे। देवराज हैरान, परेशान और अस्त-व्यस्त स्थिति में मन ही मन झींखता और खीझता हुआ चला जा रहा था जन कोलाहल के बीच। धर्म ने आकर सहसा उसके मार्ग को अवरुद्ध कर दिया। उसकी दृष्टि सामने गई तो देखा दैनिक नवजीवन कार्यालय का बड़ा-सा बोर्ड सामने लगा है। वह चौंका कि मैं तो जा रहा था प्रभात के घर फिर इधर कैसे आ पहुंचा। इस समय उसकी परिस्थिति डांवाडोल हो रही थी। वह कांपते पैरों सीढ़ियों पर चढ़ने लगा और उनको पारकर जब सम्पादकीय विभाग में पहुंचा, तो प्रधान सम्पादक के हाथ में शालिनी का पत्र देते हुये उसका हाथ पत्ते की तरह कांप रहा था और सारे शरीर में थरथराहट हो रही थी। आँसुओं की झड़ी लग रही थी और उसका कण्ठ अवरुद्ध हो गया था। वह निष्प्रभ, हतबुद्धि-सा खड़ा कांप रहा था और सम्पादक महोदय उसकी कारुणिक परिस्थिति का गम्भीर अध्ययन कर उसे नीचे से ऊपर तक बराबर निहार रहे थे।

मेज के पास देवराज खड़ा था शून्य-सा और चेतना हीन-सा। वह समझ नहीं पा रहा था, कि क्या करे? कहां जाये? किधर जाये?